श्री

जय गुरुदेव।

सदस्यता आमन्त्रण

अत्यन्त प्रसन्नता, हर्ष व आनन्द का विषय है कि आप सबको सदस्य बनने हेतु आमन्त्रित करते हैं।

आप **विशिष्ट या वार्षिक** सदस्य बन सकते हैं।

वार्षिक सदस्य बनने पर आप पाएँगे-

पूरे वर्ष भर वास्तु से संबंधित वीडियो की लिंक तथा नवीन सामग्री

आप पदविन्यास कम्प्यूटर की सहायता से कैसे करना (रेगुलर तथा कुछ इर्रेगुलर आकार का) वह घर बैठे सीख सकते हैं। (geogebra classic ५ software, जो इन्टरनेट पर फ्रीली अवेलेवल है।)

आपको इसके वीडियो लिंक तथा फाईल्स दी जाएगी।

Dr. Shiv Prasad Verma **whatsapp number 9229436758**

विशिष्ट सदस्य बनने पर आप निम्न सामग्री प्राप्त करते हैं-

पुस्तक पी.डी. एफ. के रूप में -

(१) पत्राचार पाठ्यक्रम

(२) ४५ देवता उनके गुण-धर्म व सुधार के उपाय

(३) वास्तु दोष व उनके दुष्परिणाम

(४) वास्तु में पुत्र-धन आदि प्राप्ति के योग

(५) प्रासाद मण्डन

(६) समरांगण-सूत्रधार

(७) अग्निपुराण के अनुसार वास्तु

(८) मत्स्यपुराण के अनुसार वास्तु

(९) राजवल्लभ

(१०) पत्राचार ज्योतिष

तथा

आडियो/वीडियो

(१) पत्राचार पाठ्यक्रम

(२) ४५ देवता व गुणधर्म

(३) Vastu Teacher's Training Course

(४) पदविन्यास कम्प्यूटर की सहायता से (वीडियो व फाईल्स)

(५) आयादि कम्प्यूटर की सहायता से (वीडियो व फाईल्स)

(६) विश्वकर्मा प्रकाश -शिक्षण

आदि-आदि

सम्पर्क सूत्र

Dr. Shiv Prasad Verma

whatsapp-9229436758

वास्तुशास्त्र

पत्राचार पाठ्यक्रम

S.P.VERMA

B.E.(MECH.) M.A.(STHAPATYA-VED), M.A.(JYOTISH)

ASSIST. PROF.

Department of Sthapatya Ved

Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidhyalaya

&

VISITING FACULTY

SCHOOL OF ARCHITECTURE IPS INDORE

SDPA WOMENS' COLLEGE, INDORE

PARMANAND INSTITUTE OF YOGA SCIENCES AND RESEARCH INDORE

&

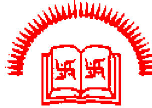
FOUNDER LIFE MEMBER (INSTITUTE OF VASTU SCIENCE)

&

MEMBER BOARD OF STUDIES

(KAVI KULGURUKALIDAS SANSKRIT VISHWAVIDHYALAYA, NAGPUR)

(MMYVV, JABALPUR)



ज्ञानं चेतनायां निहितम्

स्थापत्यवेद शिक्षण एवं शोध संस्थान

संस्करण २०१८

सहयोग राशि रुपये एक हजार रूपए (१००० रुपए)

सम्पर्क सूत्र
शिवप्रसाद वर्मा
२/५, साऊथ तुकोगंज,
संस्कृति अपार्टमेन्ट के पास
इन्दौर-४५२००१
फोन ९२२९४-३६७५८

स्थापत्यवेद पाठ्यक्रम

समर्पण

उपनिषद में एक कथा आती है कि मानो एक यात्री, गान्धार देश को जा रहा हो। एक निर्जन प्रदेश में, लुटेरे, उसकी आँख पर पट्टी बाँधकर, उसके सामान की पोटली लूट लें (धन का अपहरण कर लें)। फिर कोई आए, आँखों की पट्टी खोल दे उसे, उसके सामान की पोटली वापस दिलाए और कहे कि, मैंने उन्हें भगा दिया, जिन्होंने तुम्हारा धन लूट लिया था, वो गान्धार देश का मार्ग है, रास्ता है तथा दो कदम साथ चले।

ऐसे ही जब पता चलता है कि मेरे ही अज्ञान ने, मेरे ही मोह ने, मेरी ही आँखों पर पट्टी बाँधी और मेरा सब कुछ छीन लिया था, फिर एक महापुरूष आए, सद्गुरू आए, आँखों से पर्दा हटाया तथा अपने मार्ग (ध्येय) का पता दिखाया।

ऐसे परमपूज्यनीय सद्गुरू **स्वामी परमानन्द जी** के पावन चरणों में बारम्बार साष्टांग दण्डवत प्रणाम कर प्रारम्भ करता हूँ।

गुरू-वन्दना

हम सभी ज्ञात-अज्ञात ऋषि, मुनि, सिद्ध,योगी आदि का वन्दन करते हैं, जिन्होंने मानव मात्र के कल्याण के लिए विभिन्न दिशा-निर्देश दिए, शास्त्रों की रचना की। हम गुरू-परम्परा के सभी गुरुओं को ह्दय से नमन करते हैं।



श्री

वास्तुविद्या पाठ्यक्रम

भाग-१ वास्तु परिचय introduction of vastu

भाग-२ वास्तुशास्त्री के लक्षण characteristics of a vastushastri

भाग-३ वास्तु के सिद्धान्त principles of vastu

भाग-४ वास्तु के प्रयोग-भूमि चयन, परीक्षण आदि

(practicle aspects site selection, soil testing etc.)

भाग-५ लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई आदि का मान

भाग-६ संयोजना (planning)

भाग-७ एक-एक कक्ष का नियोजन

भाग-८ बने हुए घर में वास्तु सुधार

(बिना तोड़फोड़ वास्तुसुधार)

पत्राचार पाठ्यक्रम

संस्थान परिचय

स्थापत्यवेद शिक्षण एवं शोध संस्थान, इन्दौर की स्थापना इस्वीं सदी २००० में की गई। इस संस्थान का मुख्य उद्देश्य वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थों को हिन्दी में अनुवादित कर प्रकाशित करना रखा गया, साथ ही साथ वास्तुशास्त्र के मूल ग्रन्थों के आधार पर अध्ययन, अध्यापन व शोध की व्यवस्था की गई।

प्रथम वर्ष में राजवल्लभ, उसके पश्चात मानसार, मयमत, विश्वकर्म-प्रकाश तथा मनुष्यालय चन्द्रिका ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा चुका है।

अध्ययन व अध्यापन के क्षेत्र में अभी तक अनेक छात्र-छात्रा जिनमें इंजीनियर, अर्किटेक्ट, पंडित जी व गृहणियाँ शामिल हैं, सफलता पूर्वक इस पाठ्यक्रम पूरा कर चुके हैं।

विषयवस्तु

वास्तु

ज्योतिष

ध्यान

चेतना पर आधारित शिक्षा

वास्तुशास्त्र के मूल ग्रन्थों का परिचय

मूल ग्रन्थ के आधार पर आज के समय में उपयोग

वास्तु व इंजीनियरींग

वास्तु व आध्यात्म

वास्तु व चेतना विज्ञान

वास्तु व आन्तरिक सज्जा

बिना तोड़फोड़ के वास्तुसुधार के उपाय

वास्तु टिप्स्।

शिक्षण पद्धति

•इस संस्थान के द्वारा वैदिक पद्धति से ज्ञान दिया जाता है।

•गुरू शिष्य परम्परा से एवं पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से शिक्षण दिया जाता है।

•मूल शास्त्रों को आधार बना कर शिक्षण दिया जाता है।

•इस कोर्स में वास्तुदोषों का पता लगाना तथा उन दोषों को दूर करने के उपाय शास्त्र में बताई गई विधि के अनुसार बताना हैं।

•प्रिन्टेड नोटस्

•चित्र

•टेबल (सारणी)

•आडियो केसेटस् के माध्यम से विषय का एकदम सरलतम रूप

•न्यूनतम शुल्क, श्रेष्ठतम ज्ञान

•सफलता पूर्वक कोर्स पूरा करने पर प्रमाण पत्र दिया जाता है।

•वीडियो केसेट के द्वारा भी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है।

वास्तुशास्त्र की उपयोगिता

आन्तरिक सज्जाकार के लिए

एक आन्तरिक सज्जाकार के लिए वास्तुशास्त्र का ज्ञान उसके कार्य में निम्न प्रकार से सहायक सिद्ध हो सकता है-

- वास्तु के अनुसार प्लानिंग व प्लेसमेन्ट करने से आन्तरिक सज्जाकार के क्लाइन्ट को लाभ होगा, जिससे वह प्रगति करेगा, फलतः आन्तरिक सज्जाकार को अधिक प्रोजेक्ट मिलेगें।
- उचित रंग का प्रयोग करना।
- उचित मटेरियल का प्रयोग करना।
- उचित ड्राईंगस्, चित्र, फोटो व पेन्टिंग घर या ऑफिस में लगवाना।
- क्लाईंट को सोने की उचित दिशा बताना। (हेड पोजिशन, ओरियन्टेशन)
- कोई वास्तुशास्त्री उसके कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर पाएगा। यदि करे तो आन्तरिक सज्जाकार उसका उचित जवाब दे पाएगा।
- क्लाईंट को अलग से वास्तुशास्त्री नहीं रखना पड़ेगा। जिससे समय व पैसे की बचत होगी।

वास्तुशास्त्र एकांकी विधा नहीं है, अतः एक आन्तरिक सज्जाकार को पूरी प्लानिंग का समग्र (पूरा) ज्ञान प्राप्त होता है।

सिविल इंजीनियर के लिए

एक सिविल इंजीनियर का कार्य निर्माण करना है। वास्तुशास्त्र के नियमों के अनुसार बने घर में रहने वाले व्यक्ति या संस्थान में कार्य करने वाले व्यक्ति, प्रकृति की पूरी ऊर्जा प्राप्त होती हैं, जिससे उनका उत्तरोत्तर विकास

होता है।

वास्तुशास्त्र का ज्ञान एक सिविल इंजीनियर के लिए निम्न प्रकार से उपयोगी सिद्ध हो सकता है-

द्वार का महत्व-

किसी भी निर्माण कार्य में द्वार का उचित स्थान पर होना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि इसी स्थान से प्रकृति की ऊर्जा घर में प्रवेश करती है। यह उचित स्थान पर न हो तो अशुभ होता है। उदाहरण के लिए जैसे मानव शरीर में नाक उचित स्थान पर न हो तो श्वसन होना मुश्किल है, वैसे ही द्वार का उचित स्थान पर होना आवश्यक है।

मर्म स्थान-

निर्माण में कुछ अत्यन्त संवेदनशील बिन्दु होते हैं। इन बिन्दुओं पर कोई भी कॉलम या दीवार नहीं होना चाहिए। वास्तव में ये निर्मित क्षेत्र के इनर्जी सेन्टरस् हैं। इनका साफ-सुथरा होना परम आवश्यक है। वास्तु शास्त्र की सहायता से इन स्थानों को ज्ञात किया जा सकता है।

इन स्थानों को सकारात्मक ऊर्जा से भरकर पूरे घर, ऑफिस, फैक्ट्री को पॉजिटिव ऊर्जा से चार्ज किया जाता है।

वास्तु के अनुरूप नक्काशी-

घर, ऑफिस या मन्दिर का निर्माण करते समय, इनको किस प्रकार विभिन्न स्तम्भ, मोल्डिंग आदि से सजाया जा सकता है, इसका वर्णन वास्तुशास्त्र में है।

विभिन्न प्रकार के गुम्बद(शिखर), अधिष्ठान(बेस), आदि अंग का वर्णन वास्तुशास्त्र में मिलता है।

व्यक्ति व कार्य के अनुसार प्लानिंग-

वास्तुशास्त्र में व्यक्ति की प्रकृति, उसके प्रोफेशन के अनुसार प्लानिंग का वर्णन मिलता है। एक ही प्लानिंग अलग-अलग प्रोफेशन के व्यक्ति के लिए उचित नहीं होती है।

अन्या

कोई वास्तुशास्त्री उसके कार्य में हस्तक्षेप नहीं करेगा। यदि करेगा, तो इंजीनियर उसका उचित जवाब दे पाएगा।

इंजीनियर के क्लाइन्ट को अलग से वास्तुशास्त्री नहीं रखना पड़ेगा, जिससे समय व पैसे की बचत होगी।

वास्तुशास्त्र एकांकी विद्या नहीं है, अतः एक इंजीनियर पूरी प्लानिंग का समग्र (पूरा) ज्ञान प्राप्त होता है।

एक गृहणी के लिए

•वास्तुशास्त्र का पाठ्यक्रम करने से जिज्ञासाएँ शान्त होती है।

•कोई मिसगाईड नहीं कर सकता है।

•सही वास्तु अपनाकर, वास्तु के नियमों का पालन करने से स्वास्थ्य ठीक रहता है, धन की प्राप्ति होती है। मन शान्त, स्थिर व प्रसन्न रहता है।

•प्रसन्न रहते हैं।

•बच्चों का पढाई में मन लगता है।

•गृह-स्वामी सुखी व प्रसन्न रहता है। आदि-आदि

एक सामान्य व्यक्ति के लिए

•वास्तु के मूलभूत सिद्धान्तों की जानकारी मिलती है।

•वास्तु के अनुसार भोजन, आहार, विहार, दिनचर्या होती है एवं

कार्य करने की क्षमता भी बढती है।

•कार्य में किसी भी प्रकार की रुकावट, बाधा नहीं आती है, आती भी है तो उसका हल निकलता है।

•प्रकृति का सहयोग मिलता है।

•सफलता के नए आयाम मिलते हैं, व्यक्ति उत्तरोत्तर प्रगति करता है।

•उसके व्यक्तित्व में सर्वांगीण विकास होता है जो कि इस पाठ्यक्रम का मूलभूत उद्देश्य है।

•वास्तु संबंधी भ्रम का निवारण होता है, व्यक्ति भ्रम से रहित रहता है. भ्रमित नहीं होता है।

मंगलाचरण

मंगलाचरण की महत्ता

हमारे यहाँ किसी भी महत्वपूर्ण ग्रन्थ, मूल ग्रन्थ या किसी भी कार्य को प्रारंभ करते समय, सबसे पहले मंगलाचरण की परम्परा रही है।

यह मंगलाचरण, विभिन्न देवी-देवता, गुरू आदि की स्तुति करने के सम्बन्ध में तथा उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए होता है।

किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने के उपरान्त, उसकी निर्विघ्न समाप्ति के लिए, मंगलाचरण को, अत्यन्त आवश्यक माना गया है।

हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने अनेकानेक ग्रन्थों की, उपनिषदों की, पुराणों आदि की रचना की, परन्तु अधिकांश ग्रन्थों में, रचनाकारों ने अपना नाम नहीं दिया, नहीं बताया, लेखक का पता भी नहीं चलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपने आप को इतना गौण या नगण्य बना दिया कि वे तो केवल एक यन्त्र की भाँति कार्य करते रहे, सारा कार्य तो ईश्वर की, इष्ट देव की, गुरू की कृपा के प्रताप से चलता रहा, होता रहा।

ज्ञानेश्वरी (सन्त ज्ञानेश्वर द्वारा की गई, श्रीमद्‌भगवत गीता का टीका व्याख्या) ग्रन्थ को भी जब हम देखते हैं, तो पाते हैं कि प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में एक लम्बी गुरूवन्दना की गई है।

मंगलाचरण

आनन्दं वो गणेशार्कविष्णुगौरीमहेश्वराः।
देवाः कुर्युः श्रियं सौख्यमारोग्यं गृहसम्पदः।।१।।

गणपति, सूर्य, विष्णु, पार्वती और महादेव, तुम्हें आनन्द दें तथा तुम्हें ऐसा घर प्रदान करें, जो सदा लक्ष्मी, सुख व आरोग्य से युक्त रहें।

गणपति जी कि स्तुति

देवं नमामि गिरिजात्मजमेकदन्तं सिन्दूरचर्चिततनुं सुविशालशुण्डम्।
नागेन्द्रमण्डितवपुर्युतसिद्धिबुद्धि सेव्यं सुरोरगनरैः सकलार्थसिद्ध्यै।।

जिनका एक दांत है, जिनका शरीर सिंदूर से शोभायमान है, जिनकी अत्यन्त विशाल सूँड़ है, जिनका शरीर सर्प से सुशोभित है, सिद्धि व बुद्धि (नाम की दो स्त्रियाँ जिनके पास रहती हैं) से सेवित हैं (अर्थात् जो सिद्धि व बुद्धि से युक्त है) इतना ही नहीं, सभी कार्य की सिद्धि के लिए देव, नाग तथा मनुष्यजन जिनकी सेवा करते हैं, ऐसे पार्वती के पुत्र की, मैं, वन्दना करता हूँ।

सरस्वती जी की स्तुति

या ब्रह्माद्यैरलक्ष्या त्रिभुवननमिता ब्रह्मपुत्री शिवाद्या
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रः प्रणमति बहुशो यां सदानन्दरूपाम्।
वाणी चैतन्यरूपे वसति च सकलप्राणिनिद्राक्षुधातृट्
सा नित्यं सुप्रसन्ना वितरतु विभवं विश्वरूपा च लोके।।३।।

जिनको जानने में ब्रह्मादि समर्थ नहीं हैं तथा जिन्हें तीनों लोक नमस्कार करते है, कल्याणकारी हैं और आद्य है, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र, जिन्हें बारम्बार नमस्कार करते हैं, वह सदा आनन्द रूप से, सभी प्राणियों में निद्रा, क्षुधा (भूख) और तृष्णा के रूप में रहती है, ऐसी चैतन्यरूपी ब्रह्मपुत्री (सरस्वती), मुझ पर प्रसन्न होकर, लगातार विश्व को अवलोकन करने की शक्ति प्रदान करें।

विश्र्वकर्मा जी की स्तुति

कम्बासूत्राम्बुपात्रं वहति करतले पुस्तकं ज्ञानसूत्रं
हंसारूढस्त्रिनेत्रः शुभमुकुटशिरः सर्वतो वृद्धिकायः।
त्रैलोक्यं येन सृष्टं सकलसुरगृहं राजहर्म्यादिरम्यं

देवोऽसौ सूत्रधारो जगदखिलहितः पातु वो विश्वकर्मा।।४।।

जिनके एक हाथ में गज, दूसरे में सूत्र, तीसरे हाथ में कमण्डल, चौथे हाथ में पुस्तक व ज्ञानसूत्र धारण कर रखा है, जो हंस पर आरूढ़ हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जिन्होंने मस्तक पर सुन्दर मुकुट धारण कर रखा है, इतना ही नहीं वरन् सब प्रकार से जिनका शरीर वृद्धि को प्राप्त है तथा तीनों लोक के सभी प्रकार के देवघर, राजघर आदि (सर्वसामान्य लोगों के) सभी सुन्दर घरों की रचना की है, ऐसे जगत के हितकर्ता विश्वकर्मा आप सूत्रधार की रक्षा करें।

इस प्रकार से सबसे पहले गणों के स्वामी गणेश जी की वन्दना की गई है, उसके पश्चात ज्ञान की देवी सरस्वती जी की स्तुति की गई है तत् पश्चात् वास्तु के शिल्पी विश्वकर्मा जी की वन्दना की गई है।

भूमिका

पाठ्यक्रम का आधार

किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने के पहले, उसकी भूमि या आधार की तैयारी की जाती है। खेत में बीज बोने से पहले, जैसे भूमि तैयार की जाती है ठीक उसी प्रकार वास्तुविद्या पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने के पहले, उसका आधार तैयार करना, **अत्यन्त आवश्यक** है।

सबसे पहले जान ले कि वास्तु विद्या, एक वैदिक विद्या है।

सबसे पहली चीज है- **श्रद्धा। श्रद्धा, विद्या के प्रति। श्रद्धा, शास्त्र के प्रति। श्रद्धा गुरू के प्रति।** श्रद्धा होने के बाद, शास्त्र स्वयं अपने रहस्य खोलना शुरू कर देता है।

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं ।।३९।४ भगवत् गीता

जिसे हम आगे **ज्ञानं चेतनायां निहितं** के अन्तर्गत देखेंगे। सारा ज्ञान हमारी चेतना में ही निहित है, अन्दर है, उस पर बहुत सा आवरण हमने ही डाल रखा है, हमें केवल आवरण हटाना है, ज्ञान तो स्वयं प्रकाशित है।

यहाँ भूमि का आधार, संक्षेप में सूत्र रूप में ही बताएँगे। आप स्वयं उसे ध्यान पूर्वक उसे समझकर, अपने जीवन में उतारेंगे तो यह विद्या एकदम सरल हो जाएगी।

जैसे कोई रोगी, डॉक्टर से दवा का नाम लिखवाकर, लेकर, खरीदकर, पास रखकर तो स्वस्थ नहीं हो सकता, उसे नियम के साथ दवा खाना होगी। यदि परहेज बताया है, तो परहेज करने पर ही वह स्वस्थ होगा।

इसी तरह से आगे सूत्र में लिखी बातों को पढ़ने या रटने से कोई विशेष फायदा या लाभ नहीं मिलने वाला है, इन सूत्रों को आचरण में उतारने से ही लाभ होगा।

यह सूत्र निम्नलिखित हैं-

इन सूत्रों को आचरण में उतारने के लिए, हमारी दिनचर्या, कम से कम वास्तुविद्या सीखते समय, नियमित व पवित्र हो।

(१) सूर्योदय से पहले उठें।

(२) प्रतिदिन सूर्य नमस्कार करें, यदि सूर्य नमस्कार करना नहीं आता हो तो किसी योग कक्षा में जाकर सीखें।

(३) यदि आपकी आयु चालीस वर्ष से कम है तो गीता के तीसरे अध्याय के एक श्लोक का हिन्दी अनुवाद प्रतिदिन लिखें। अध्याय पूरा होने पर दोहराए।

(४) यदि आपकी आयु चालीस वर्ष से अधिक है तो गीता के दूसरे अध्याय के एक श्लोक का हिन्दी अनुवाद प्रतिदिन लिखें। अध्याय पूरा होने पर दोहराए।

यहाँ श्रीमद्भगवतगीता के कुछ श्लोक दिए हैं जिनका अर्थ जानें (समझें)। इन श्लोक का अर्थ जानने के बाद, समझने के बाद कोई भी श्लोक जो सरलतम लगे उसे जीवन में उतारने का प्रयास करें। हम इसी कोर्स (पाठ्यक्रम) में हम समय-समय पर इन श्लोकों के अर्थ बताने का प्रयास करेंगे।

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।।२।४१।।

हे अर्जुन! निश्चयात्मिका बुद्धि एक ही होती है, किन्तु अस्थिर विचारवाले विवेकहीन मनुष्यों की बुद्धियाँ बहुत भेदवाली व अनन्त होती है।

इसलिए कार्य करते समय अपनी बुद्धि स्थिर तथा एक होना चाहिए उसमें मल्टीपल ऑप्शन नहीं होना चाहिए।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्यधारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।१।३।१४। कठोपनिषद

उपनिषद कहता है कि उठो! जागो! तथा ज्ञान को प्राप्त करने के लिए उत्तम पुरुष के पास जाओ। जिस प्रकार छुरे की धार तीक्ष्ण व दुस्तर होती है, तत्वज्ञानी लोग उस मार्ग को वैसा ही दुर्गम बताते हैं।

श्रेय-प्रेय

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद्वृणीते।१।२।२।

श्रेय व प्रेय (दोनों आपस में मिले हुए) मनुष्य के पास आते हैं। उन दोनों को बुद्धिमान पुरुष भली प्रकार विचारकर अलग-अलग करता है। विवेकी पुरुष प्रेय के सामने श्रेय को ही वरण करता है, किन्तु मूढ योग-क्षेम के निमित्त से प्रेय को वरण करता है।।

कार्य करते समय हमारे पास हमेशा दो विकल्प होते हैं या रहते हैं- एक श्रेय जो हमारे लिए उचित है, श्रेयस्कर है तथा दूसरा प्रेय जो हमें प्रिय है, अच्छा लगता है। यदि हम **प्रत्येक कार्य करते समय** श्रेय का चयन करते जाएँ तो श्रेष्ठ या उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

प्रत्येक कार्य करते समय से हमारा अभिप्राय यह है कि प्रत्येक कार्य फिर चाहे वो भोजन करना हो या टी.वी. पर कोई चेनल देखना हो। कैसे ? जैसे भोजन करते समय यदि हमारा पेट ३ रोटी खाने के पश्चात् भर जाता है तथा अधिक भोजन का आवश्यकता नहीं है, परन्तु भोजन बहुत स्वादिष्ट है या मिठाई आदि अन्य पदार्थ भी भोजन में उपलब्ध होने पर यदि हम अधिक भोजन करेंगे तो नींद या आलस्य आने की आशंका होगी तथा इससे कार्य में बाधा होगी, ऐसा विचार कर अधिक भोजन न करें।

अधिक भोजन या मिठाई खाना प्रिय तो सकता है परन्तु श्रेयस्कर नहीं। इसी प्रकार मनपसंद टी. वी. चेनल देखना यदि लक्ष्य की ओर बढ़ने में सहायक न हो तो प्रिय हो सकता है श्रेय नहीं। इसी प्रकार प्रत्येक कार्य करते समय हम श्रेय को अपनाते जाएँगे तो लक्ष्य को शीघ्रता से प्राप्त कर पाएँगे।

ज्ञानं चेतनायां निहितम्

सारा का सारा ज्ञान हमारी चेतना में ही निहित है, छिपा हुआ है, परन्तु हमने स्वयं उस पर बहुत सारा आवरण कर उसे ढक रखा है। उस आवरण को हटाने पर चूँकि ज्ञान चेतना में ही स्थित है अतः स्वयं प्रकाशित होने लगता है। जैसे

महाभारत के समय की एक कथा आती है कि एकलव्य नामक भील बालक गुरु द्रोणाचार्य के पास धनुर्विद्या सीखने जाता है। गुरु द्रोणाचार्य प्रतिज्ञा में बंधे होने के कारण उसे धनुर्विद्या सिखाने में असमर्थ रहते हैं तब वह गुरु की प्रतिमा बनाकर, उसके सामने अभ्यास करता है तथा अर्जुन से भी श्रेष्ट धनुर्धर बनता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सारा ज्ञान चेतना के अन्दर होने के कारण एकाग्र चित्त वृत्ति या माध्यम मिलने पर प्रकट हो जाता है। **इस पाठ्यक्रम में भी हमारा उद्देश्य केवल आवरण हटाना ही है, ज्ञान आपके भीतर होने के कारण स्वयं प्रकाशित हो जाएगा।**

योगस्थः कुरु कर्माणि।।२।४८।।

भगवान कहते हैं कि योग में अर्थात् समभाव में स्थित होकर कार्य कर, कार्य करते समय लाभ-हानि, जय-पराजय आदि का विचार मत कर। कार्य करते समय दृष्टा भाव में स्थित होकर कार्य कर।

जब कार्य या कर्म व्यक्ति का स्वभाव बन जाता है तो उसे प्रयत्न (एफर्ड) नहीं करना पड़ता, कार्य स्वभाव होने के कारण स्वतः होता है क्योंकि वह कार्य से ऊपर उठ गया है।

उदाहरण के लिए जैसे दो व्यक्ति हैं एक ही ऑफिस या कार्यालय में कार्य करते हैं, कार्य की समाप्ति के उपरान्त दोनों को किसी पार्टी या समारोह में एक साथ जाना है तथा अभी समारोह प्रारम्भ होने में समय है। एक मित्र दूसरे से कहता है कि चलो मेरे घर चलते हैं थोड़ा फ्रेश हो जाते हैं। घर पहुँचकर व्यक्ति जिसके यहाँ स्वीमिंग पूल भी है, स्वीमिंग के लिए तैयार होकर स्वीमिंग करने लगता है तथा पानी की सतह आराम से चित्त (पीठ के बल) स्थिर अवस्था में लेट जाता है। उसका मित्र भी इस क्रिया को देखकर सोचता है कि चलो मैं भी तैर कर फ्रेश हो जाता हूँ। उसे तैरना नहीं आता है तथा पानी में उतरकर किनारे पर ही रैलिंग को पकड़कर पैर मारकर तैरने का प्रयास करता है तथा थक जाता है, जबकि उसका मित्र १०-१५ मिनिट पानी की सतह पर रहकर फ्रेश होता है। अब देखने की बात यह है कि एक व्यक्ति उस क्रिया से तरोताजा होता है जबकि दूसरे व्यक्ति को वही क्रिया थका देती है ऐसा क्यों? जब तक हम कार्य में निष्णात नहीं हो जाते है तब कार्य को करने में हमें अधिक श्रम या बल लगता है, कार्य में निष्णात होने के

उपरान्त कार्य अपने वेग से ही संचालित होता है, उसमें अधिक श्रम नहीं लगता, वह स्वभाव बन जाता है, स्वभाविक हो जाता है। योग में स्थित होकर कार्य करने में अधिक बल नहीं लगता तथा कार्य अधिक कुशलता से सम्पन्न होता है।

क्रिया सिद्धि सत्वो भवति महितां नोपकरणे

बड़े कार्यों में सफलता सत्य से ही होती है, उपकरण से नहीं, ट्रिक से नहीं।

निर्बल के बल राम

कोई भी कार्य करते समय हमें अपना पूरा बल या शक्ति लगाना चाहिए। कार्य करते समय यह विचार नहीं करना चाहिए कि कार्य बहुत छोटा या बहुत ही बड़ा है, इस कार्य को हम किस प्रकार पूरा कर पाएँगे? आइए एक कहानी के द्वारा देखने का प्रयास करें-

एक टिप-टिप या टिटहरी की कहानी है कि समुद्र के किनारे पर होने से उसके अण्डे पानी में बह जाते हैं। वह टिटहरी समुद्र से प्रार्थना करती है कि मेरे अण्डे वापस कर दे, परन्तु समुद्र कहाँ उसकी सुनता। अन्त में वह समुद्र को चेतावनी देती है कि मेरे अण्डे वापस कर दें अन्यथा वह समुद्र का पूरा जल सुखा देगी। प्रत्युत्तर न मिलने पर वह अपनी चोंच में पानी भरकर दूसरे स्थान पर डालने लगती है, उसके परिवार के अन्य सदस्य उसे समझाते हैं कि ऐसा न करें क्योंकि समुद्र को सुखाना संभव नहीं है परन्तु वह नहीं मानती है एवं अपने कार्य में लगी रहती है। परिवार के सदस्य भी उसके कार्य में सहयोग देने लगते है। धीरे-धीरे सारे पक्षी समुदाय के सदस्य उसको सहयोग देने लगते है। बात पक्षियों के राजा गरुड़ के पास पहुँचती है वे समुद्र को चेतावनी देते हैं कि इसके अण्डे वापस कर दें अन्यथा वे समुद्र का सारा जल सुखा देंगे। कहानी कहती है कि समुद्र ने अण्डे वापस कर दिए।

यहाँ यह बताया गया है कि कार्य करते समय अपना पूरा बल लगाना चाहिए, कार्य के आकार को देखकर भयभीत नहीं होना चाहिए। जब हम कोई

अच्छा कार्य करते हैं, अपना पूरा बल लगाते हैं तो प्रकृति की शक्तियाँ हमें सहयोग प्रदान करती है।

एक अन्य कहानी इस प्रकार है-

एक गाय है जिसे चरवाए ने एक घास के क्षेत्र या मैदान में खूँटे से बाँध दिया है इस कहानी में दो परिकल्पना है कि गाय की भूख अनन्त है तथा मैदान में खाने के लिए घास भी अनन्त है। गाय के गले में जो रस्सी बंधी है उसके कारण खाने का क्षेत्र सीमित है। अब गाय अपने घेरे की घास खाने के बाद चिल्लाएँ, रम्भाएँ तो ग्वाला उसकी रस्सी की लम्बाई बढ़ा देगा, उसे अधिक क्षेत्र की घास खाने को मिलेगी। ठीक इसी प्रकार जो कार्य क्षेत्र हमें ईश्वर ने प्रभु में दिया है, उस कार्यक्षेत्र का कार्य हम यदि पूरा बल लगाकर करें तो ईश्वर हमारा कार्यक्षेत्र या संभावनाओं को बढ़ाता है आगे का कार्य सौंपता है, परन्तु हम कार्य में यह सोचने लग जाएँ कि यह कार्य छोटा है, मैं बड़ा कार्य ही करुँगा तो नई संभावनाएँ बनने में अधिक समय लग सकता है।

जो इच्छा करिहौ मन माहीं प्रभु परताप कछु दुर्लभ नाहीं

एक महत्वपूर्ण तथ्य को देखने का प्रयास करते हैं। यह कहा गया है कि जो इच्छा आप करोगे वह प्रभु के प्रताप से पूरी होगी। हम देखते हैं कि हमारी अनेकानेक इच्छाएँ होती है, कई इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं तो अनेक पूरी नहीं हो पाती है। इच्छा कहाँ से करना कि वह पूरी हो। यह कहा है कि **संकल्प मात्रेण सिद्ध्यति**। आपको केवल संकल्प करना है, प्रकृति की शक्ति उस संकल्प को पूरा करेगी। अब संकल्प कहाँ से करना, कैसे करना इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहते हैं कि जो इच्छा करिहौ **मनमाहीं**। मन की अन्तर्तम गहराई से संकल्प उठाना या करना। अब मन की अन्तर्तम गहराई क्या है? वहाँ तक कैसे पहुँच जा सकता है, इसके लिए अपने कोर्स या पाठ्यक्रम में ध्यान की विधि बताई गई है। जिसके द्वारा व्यक्ति उस अवस्था में पहुँच सकता है जहाँ से संकल्प उठते हैं जो कि निर्विकल्प अवस्था है। उस अवस्था में जाकर संकल्प करने से प्रकृति की सारी शक्ति उस संकल्प को पूरा करने में लग जाती है तथा कम से कम समय में उस इच्छा को पूरा करती है।

धर्म की चार बातें

अपने यहाँ किसी भी कार्य को करते समय उसके उद्देश्य को अत्यन्त महत्व दिया गया है। भारत वर्ष में अनेक संस्थाएँ सेवा के कार्य में जुड़ी हुई हैं। इनसे में कई संस्थाएँ विदेश से आकर बड़ी ही कुशलता से सेवा कार्य करती हैं, अस्पताल बनवाती हैं, रोगियों की सेवा, देखभाल, दवा आदि का प्रबन्ध करती हैं। इतना सब कुछ होने के उपरान्त भी यदि उनका उद्देश्य इस सेवा कार्य के पीछे कुछ और हो तो वे संस्थाएँ पूजनीय या सराहनीय नहीं हो पाती हैं, वरन् कई अवसर पर निन्दा का पात्र बनती हैं, ऐसा क्यों? कारण का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि उद्देश्य की ठीक न हो पाना है।

यदि वास्तु सीखते समय या परामर्श देते समय भी हमारा उद्देश्य क्या है इस बात का बड़ा महत्व है। अपने यहाँ वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ के प्रारम्भ में भी यह कहा है कि अब जगत के भले की कामना से वास्तुशास्त्र का वर्णन करते हैं या कहते हैं। तो परामर्श देते समय हमारा उद्देश्य यदि केवल धन कामना है तब तो विचार करना पड़ेगा ?

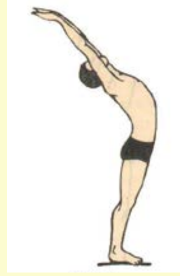
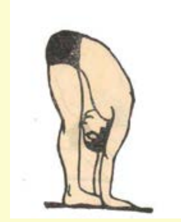
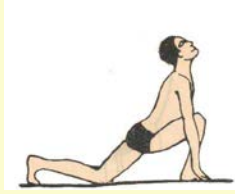
अथाऽतः सम्प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।। (वि. प्र. अध्याय १-२४

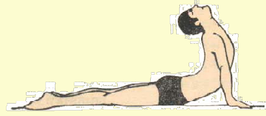
आइए, एक कहानी के माध्यम से बात को समझने या कहने का प्रयास करते है। एक बार एक बहुत ही पहुँचे हुए (ज्ञानी) सन्त रास्ते से जा रहे थे। उन्हें मार्ग में मरणासन्न अवस्था में एक सिपाही या सैनिक मिला। वे सन्त उस सिपाही से पूछते है कि अब तुम्हारा अन्तिम समय निकट है, क्या धर्म की चार बातें मैं तुम्हें सुना दूँ? इस पर सैनिक कहता है कि हे बाबा! अन्तिम समय में धर्म की बातें सुनकर मुझे कोई लाभ तो होने वाला नहीं है हाँ, मेरा गला प्यास से सूख रहा है यदि आप पानी पिला दें तो बड़ी कृपा होगी। सन्त उसे पानी पिला देते हैं। इसके उपरान्त सैनिक कहता है कि बाबा मेरा सिर लटक रहा है क्या इसका कोई उपाय कर सकते हैं? बाबा पास ही रखा हुआ मिट्टी का ढेला उसके सिर के नीचे रख देते हैं। इस प्रकार का उपाय करने पर सिपाही आराम का अनुभव करता है। उसके पश्चात बाबा से कहता है कि हे महाराज! मुझे ठण्ड लग रही है क्या इससे बचने का कोई उपाय हो सकता है, बाबा अपनी कफनी (शाल) उतारकर उसे औंढा देते हैं। अब प्यास भी बुझ गई, शरीर भी आराम से है, उसे ठण्ड भी नहीं लग रही है, शरीर में थोड़ी गर्मी भी आ गई है, तब उसकी भावनाएँ जोर मारने लगती है,

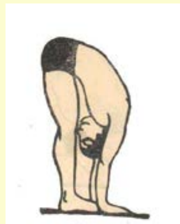
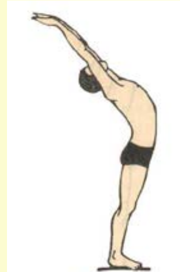
उसकी आँखों से आँसू बहने लगते हैं। वह सन्त से कहता है कि जिस धर्म से आपने यह सब पाया है- दूसरे की तकलीफ, मुसीबत को कम करना, दूसरों को ऊँचा उठाना, उस धर्म की चार बातें मैं भी जानना चाहता हूँ, सुनना चाहता हूँ।

तो वास्तु सीखने के पश्चात यदि अपना उद्देश्य लोगों को वास्तु के दोष बताकर भयभीत करना है, डराना है, उनसे केवल पैसा या धन कमाना है, तब तो वास्तु सीखने या सिखाने के उद्देश्य के विपरीत है, निरर्थक है। हाँ यदि इसका उद्देश्य यह है कि इस कोर्स को सीखने के पश्चात् मैं किस प्रकार लोगों का भला कर सकता हूँ, सुझाव द्वारा किस प्रकार उनके उत्थान में सहायक हो सकता हूँ, तब तो उद्देश्य भी ठीक है तथा परमेश्वर के आशीर्वाद से धन भी बरसेगा, क्योंकि क्लाइन्ट (जातक, यजमान) को लाभ होने पर; आपको अधिकाधिक कार्य मिलेगें तथा आपको यश व धन की प्राप्ति होगी। अस्तु

सूर्य-नमस्कार


इस पाठ्यक्रम को पढ़ने व समझने की विधि

•नए विद्यार्थी या जिज्ञासु या अध्ययन कर्ता, इस पाठ्यक्रम के लिए कम से कम एक वर्ष का समय निकालें।

•प्रतिदिन नियमित रूप से दो घण्टे का समय पर्याप्त है।

•इस पुस्तक को कई पाठों में विभाजित किया गया है।

•एक दिन में एक पाठ पढ़ें एक बार पढ़ने के बाद उसी पाठ को पुनः पढ़ें। उसे, अपने शब्दों में, पाईन्ट वाईज (मुख्य बिन्दुओं को) लिखें, टेबल (सारणी) बनाएँ, याद करें, दोहराएँ आदि।

•पाठ की समाप्ति पर दिए गए प्रश्नों को देखें, कितने प्रश्नों के उत्तर लिखने में सक्षम हैं, देखें। उत्तर को ढूँढ़े। मौखिक रूप से उत्तर दें।

•अगले दिन, पिछले पाठ को दोहराए, तब आगे का पाठ पढ़े।

•पिछले पाठ के प्रश्नोत्तर लिखित रूप से हल करें।

•सप्ताह में एक बार अपना स्वयं का टेस्ट लें।

इस प्रकार क्रम से याद करते हुए आगे बढ़ेंगें तो यह पाठ्यक्रम एक वर्ष में पूरा हो जाएगा। आप इस पाठ्यक्रम का अधिकाधिक लाभ ले पाएँगे।

स्थापत्यवेद पाठ्यक्रम

खण्ड १- परिचय

खण्ड २-स्थपति (वास्तुशास्त्री) लक्षण

पाठ १८	अंग विद्या (सामुद्रिक शास्त्र)
पाठ १९	प्रतिमा विज्ञान व लेप कर्म
पाठ २०	वास्तु पूजा (कर्मकाण्ड)
पाठ २१	वास्तु व अध्यात्म विद्या का संबंध

खण्ड ३ वास्तु के सिद्धान्त

पाठ	सौर मण्डल का प्रभाव
पाठ	दिशा व प्रभाव
पाठ	दिशा ज्ञात करने की विधि- चुम्बकीय सुई द्वारा
पाठ	तीन प्रकार का वास्तु (स्थिर, चर, दैनिक)
पाठ	स्थिर वास्तु
पाठ	पद विन्यास

खण्ड ४ प्रायोगिक पक्ष

पाठ	वर्ण व्यवस्था (आधुनिक संदर्भ)
पाठ	भूमि- चयन (परिवेश)
पाठ	भूमि-चयन (आकार) यज्ञवेदी आकार
पाठ	भूमि का झुकाव
पाठ	भूमि की परीक्षा, शकुन
पाठ	भूमि में दोष का पता लगाना, शुद्धि तथा ग्रहण करना

खण्ड ५

पाठ	आयादि
पाठ	गृह-आरंभ विचार (मुहूर्त)
पाठ	शिलान्यास, गर्भविन्यास

खण्ड ६

खण्ड ७

खण्ड ८ परिशिष्ट

इकाई १

गृह की महत्ता- वास्तु की आवश्यकता

विषय वस्तु

इकाई १

घर की उपयोगिता, वास्तु की आवश्यकता

१.० उद्देश्य

किसी भी वैदिक विषय (वास्तु, ज्योतिष, योग इत्यादि) को पढते समय, सबसे पहले उस विषय की उपयोगिता बताई जाती है। उसके महत्व का प्रतिपादन किया जाता है। हमारा विषय वास्तुशास्त्र है, अतः इस पाठ में घर की उपयोगिता एवं वास्तु के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

१.१ चार में से तीन पुरुषार्थ के लिए घर की आवश्यकता

मनुष्य के जीवन में जो चार पुरुषार्थ है । पुरुषार्थ का अर्थ है मानव का जीवन क्यों हुआ, पुरुष का अर्थ, उद्देश्य या लक्ष्य। मानव के जीवन के चार पुरुषार्थ बताए है- धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष।

धर्म का अर्थ है-अपने स्वधर्म का पालन करना।

अर्थ का अर्थ है-अपने स्वधर्म का पालन करते हुए धन कमाना, अर्जित करना।

काम का अर्थ है- धर्म का पालने करते हुए जो धन कमाया उससे कामनाओं की पूर्ति करना।

मोक्ष-दृष्टा भाव में स्थित होना, अपने आप को अकर्ता मानना (जानना भी)

ऊपर कहे गए चार में से तीन पुरुषार्थ धर्म, अर्थ व कामना की पूर्ति के लिए, घर की आवश्यकता होती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न १.१ चार पुरुषार्थ के नाम बताएँ।

प्रश्न १.२ कितने पुरुषार्थ की पूर्ति के लिए घर की आवश्यकता है ?

१.२ राजवल्लभ ग्रन्थ के अनुसार

स्त्रीपुत्रादिक भोगसौख्यजननं धर्मार्थकामप्रदं
जन्तूनां लयनं सुखास्पदमिदं शीताम्बुघर्मापहम्।
वापीदेवगृहादिपुण्यमखिलं गेहात्समुत्पद्यते।
गेहं पूर्वमुशन्ति तेन विबुधाः श्रीविश्वकर्मादयः।।५।१।। रा.व.

उपरोक्त श्लोक में गृह की महत्ता निम्नानुसार बताई गई है-

घर से स्त्री, पुत्र आदि का भोग और सुख मिलता है तथा धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति होती है। घर प्राणी का विश्राम स्थल है, इतना ही नहीं ठण्ड, वर्षा और गर्मी के भय का, निवारण होता है। घर बनवाने से ही बावड़ी, कुएँ का सुख तथा देवमंदिर का अखिलपुण्य मिलता है, इसलिए विश्वकर्मा आदि सभी देवता प्रथमतः घर की इच्छा करते हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न १.३ राजवल्लभ ग्रन्थ के अनुसार घर की आवश्यकता का प्रतिपादन करें।

१.३ विश्वकर्म प्रकाश-आश्रम व्यवस्था के लिए घर की आवश्यकता

आब्रह्मभुवनाल्लोका गृहास्थाश्रमाश्रिताः।
यतस्तस्माद् गृहारम्भप्रवेशसमयं ह्यहम्।।६।।वि.प्र.१।।२।।

अर्थात् ब्रह्म (अव्यक्त, जहाँ से सारे निर्माण (सृष्टि) की शुरूवात हुई है) से भुवन तक या सृजन तक, जितने भी लोक हैं, वे सभी गृहस्थ आश्रम पर आश्रित हैं। चूँकि गृहस्थाश्रम इतना महत्वपूर्ण है इसलिए मैं गृह को कब बनवाना शुरू करना चाहिए तथा उस बने हुए घर में कब प्रवेश करना चाहिए उसके समय को कहता हूँ।

आश्रम को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया है-

ब्रह्मचर्य आश्रम-आयु जन्म से २५ वर्ष तक

गृहस्थाश्रम-आयु २५ से ५० वर्ष तक की आयु

वानप्रस्थ-५१ वर्ष की आयु से ७५ वर्ष तक की आयु तक

सन्यास-७६ वर्ष की आयु से जीवन पर्यन्त तक

उपरोक्त चारों श्रेणियों में गृहस्थाश्रम सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि अन्य तीनों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ व सन्यास) के व्यक्तियों का जीवन (भोजन आदि) गृहस्थ आश्रम पर ही आश्रित है।

इस प्रकार से शास्त्र (राजवल्लभ, विश्वकर्म प्रकाश) के आधार पर गृह व गृहस्थ की आवश्यकता का प्रतिपादन किया गया है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १.४ आश्रम कितने होते हैं ?

प्रश्न १.५ चारों आश्रम में सबसे महत्वपूर्ण आश्रम का नाम बताएँ।

१.४ वास्तु का महत्व

वास्तु का अर्थ है कि प्रकृति के नियमों के अनुरुप निर्माण करना, जिससे प्रकृति की पोषणकारी शक्तियाँ कार्य में सहायक हो।

मनुष्य किस प्रकार के भवन में निवास करें कि उसका विकास हो। वह शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ हो, उसके कार्य सफल हों, उसमें रूकावट न आए, उसके काम गति के साथ हों, समय पर हों, यह सब कुछ वास्तु शास्त्र की सहायता से संभव है।

१.५ वास्तु परामर्श की आवश्यकता

एभिः स्थपत्यादिभिरत्र लोके विना ग्रहीतुं सुकृतं न शक्यम्।
तैरेव सार्धं गुरुणाऽथ तस्माद् भजन्ति मोक्षं भवतस्तु
मर्त्याः।।२५।।२ मयमत

स्थपति आदि इन चार के बिना, इस लोक में, शुभ कार्य, सम्भव नहीं हैं। उनके साथ रहने पर, वैसे ही सम्भव हैं, जैसे गुरु के साथ होने पर मरणशील को मोक्ष प्राप्त होता है।

मकान तो हर व्यक्ति बनाता है, परन्तु उसमें कितने व्यक्ति सुखी रह पाते हैं। यह एक विचारणीय प्रश्न है। हम देखते हैं कि कई व्यक्तियों ने मकान बनवाने के बाद, नए ऑफिस में जाने के बाद, खूब विकास किया, तो कई

ने अपनी वर्षो की कमाई खो दी। कुछ ने उत्तम स्वास्थ्य पाया, तो कइयों ने नए-नए रोग पाए। यह सब क्या हुआ ? कैसे हुआ? इसका जवाब पाने के लिए हमें वास्तुशास्त्र की शरण में जाना होगा, उसकी सहायता लेनी होगी। मकान बना कर, कुछ सुखी हुए तो कुछ दुखी, ऐसा क्यों? क्या हमने मकान बनाने के पहले, वास्तु के नियमों को ध्यान में रखा? क्या वास्तु की रूपरेखा के अनुसार भवन बनवाया? हम लाखों रूपया लगाकर मकान तो बना लेते हैं, लेकिन कुछ सौ रूपये देकर, एक वास्तुशास्त्री से परामर्श नहीं लेते हैं।

एक विचारणीय बात है कि यदि हमारी नाक, उसकी सही जगह पर न होकर थोड़ी सी भी दाएँ या बाएँ, ऊपर या नीचे हो तो क्या हम ठीक प्रकार से सांस ले पाएंगे। शरीर का कोई भी अंग, यदि अपनी सही जगह पर न हो तो हम उसका सही उपयोग नहीं कर सकते तथा रोगग्रस्त होते हैं, इसे ही डिस्-ईज या डिसीज कहते है, ऐसा काम जो सुविधाजनक न हो डिस्-ईज कहलाता है, अतः किसी भी निर्माण को प्रारम्भ करने से पूर्व इस बात का यथासंभव अध्ययन कर लेना चाहिए कि सारी प्लानिंग वास्तुशास्त्र के नियमों के अनुरूप हो ताकि प्रकृति का सहयोग प्राप्त हो सके। इस प्रकार निर्माण कार्य के पूर्व कुशल वास्तुशास्त्र का परामर्श अत्यन्त आवश्यक है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १.६ वास्तु परामर्श का महत्व समझाएँ।

१.६ कार्य का स्थान व दिशा का महत्व

वास्तुशास्त्र में कार्य एवं दिशा के मध्य अन्तर्संबंध स्थापित किया गया है। उचित दिशा में कार्य करने पर उसमें सफलता प्राप्त होती है।

दिशा व स्थान उचित होने से प्रकृति की पोषणकारी शक्ति प्राप्त होती है। प्रकृति विकास में सहयोग देती है।

वास्तु में भी हमें जो स्थान जहाँ होना चाहिए, वहाँ न बनवाकर यदि कहीं और बनवा लें। कमरे में उचित स्थान पर नहीं बैठते हों, सोने की दिशा गलत हो तो शुभ परिणाम कैसे आएगा। दिशा का तात्पर्य सोने की दिशा, पढ़ने की दिशा, कार्य करने की दिशा, खाना पकाने की दिशा, सबके लिए वास्तुशास्त्र में

उचित दिशा बताई गई है। क्या मकान या ऑफिस बनवाते समय, हमने दिशा का ध्यान रखा? यदि हाँ तो दशा तो अपने आप ठीक होना ही है।

इसे हम एक उदाहरण से भी देख सकते हैं। जैसे तैरते समय या नदी पार करते समय जब हम **धारा, प्रवाह के विपरीत जाना चाहे तो अधिक श्रम** लगाना होता है। वैसे ही यदि हमें जिस ओर धारा बह रही हो, उधर ही जाना हो तो श्रम लगभग नहीं लगाना पड़ता या कम लगाना होता है। इसी प्रकार कार्य के अनुरुप, व्यक्ति के अनुरूप स्थान व दिशा का चयन कर कार्य करने से **प्रकृति का सहयोग** मिलता है तथा कम परिश्रम में अधिक सफलता पाई जा सकती है।

एक अन्य उदाहरण में एक व्यापारी अपने व्यापार स्थल पर वायव्य दिशा (जो कि चंचलता का गुण रखती है) में बैठकर व्यापार करता है, किन्तु व्यापारी अपने स्थान पर लगातार बैठ नहीं पाता है तथा अन्यत्र आता-जाता रहता है। इस प्रकार व्यापार भी ठीक नहीं चल पाता है तथा दुकान में कार्य करने कर्मचारी व्यापारी की अनुपस्थिति का अनुचित लाभ उठाने से नहीं चूकते हैं। वास्तुशास्त्री की सलाह पर व्यापारी अपने बैठने का स्थान दक्षिण दिशा (जिसका गुण स्थिरता व प्रशासन है) में करता है तथा उत्तर की ओर उसका मुख रहता है। कुछ ही दिनों में दुकान पर उसका मन लगने लगता है तथा वह मनलगा कर कार्य करता है तथा सफलता पाता है। इस प्रकार से हमने देखा कि उचित दिशा में कार्य करने पर अनुकूल परिणाम प्राप्त होने लगता है। अस्तु

बोध प्रश्न

प्रश्न १.७ किसी भी कार्य के लिए स्थान व दिशा का महत्व समझाएँ।

१.७ वास्तु से स्वाभाविक विकास

सभी मनुष्य सुखी होना चाहते हैं। यह मानव का स्वभाव है, उसका एक प्राकृतिक गुण हैं। जैसे पानी का स्वाभाविक गुण है शीतलता। यदि पानी को आग पर कुछ समय के लिए रख दिया जाए तो वह गर्म हो जाता है, लेकिन आग से हटा देने पर, वह पानी अपना स्वाभाविक धर्म, शीतलता होने के कारण धीरे-धीरे ठण्डा हो जाता है। (या कमरे के तापमान पर आ जाता है।)

ठीक उसी प्रकार किसी व्यक्ति का स्वाभाविक गुण या प्रतिभा कैसे प्रकट हो? उसका स्वाभाविक विकास कैसे हो- इसके लिए सबसे आवश्यक व पहली शर्त है कि वह व्यक्ति ऐसे वातावरण, ऐसे परिवेश, ऐसी जगह पर रहे, जो उसकी स्वाभाविक प्रवृति या गुणों के अनुरूप हो, ताकि उस व्यक्ति के सहज गुण प्रकट हो सकें। वह विकास कर सके, उसे उसके कार्य में रूकावट का अनुभव न हो, प्रकृति उसे पूरा-पूरा सहयोग दे।

हम अपने स्वयं के जीवन में देखते है कि कभी-कभी हमारे कार्य, थोड़े श्रम से ही सफल हो जाते है, जबकि कभी अत्यधिक श्रम करने पर भी उस कार्य में उतनी सफलता नहीं मिलती।

व्यक्ति जिस मकान में रहता है, जहाँ पर काम करता है, उसके जीवन पर इन सभी का गहरा प्रभाव पड़ता हैं। यह सब उसके निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करते हैं अतः ऐसे भवन में निवास किया जाए तो व्यक्ति के स्वाभाविक विकास में सहायक हों।

पंच ज्ञानेन्द्रिय व वास्तु

हमारी पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, जिनसे हम ज्ञान गृहण करते हैं। वे इन्द्रियाँ इस प्रकार हैं-**आँख, नाक, कान, जीभ व त्वचा।**

आँख से हम आकार व रंग देखते हैं। कान से हम सुनते हैं। त्वचा से हम स्पर्श करते हैं, अर्थात ठण्डा-गर्म आदि का अनुभव करते हैं। जीभ से हम स्वाद लेते हैं। हम जो ज्ञान गृहण करते हैं, उसका लगभग ८० से ८५ प्रतिशत भाग हम आँख से ग्रहण करते हैं।

जिस स्थान पर हम रहते हैं, जहाँ कार्य करते हैं, उस स्थान का **आकार व रंग, आन्तरिक सज्जा** यदि हमारी आवश्यकता व मन के अनुकूल हों तो नेत्र इन्द्रिय सन्तुष्ट हो जाएगी, उस स्थान पर, मन के अनुकूल **ध्वनि** हो तो कर्ण इन्द्रिय सन्तुष्ट होगी। इसी प्रकार मन के अनुकूल **गन्ध** हो तो घ्राणेन्द्रिय सन्तुष्ट जाएगी तथा उस स्थान का **तापमान** एवं बैठक आदि की व्यवस्था हमारे अनुकूल हो तो त्वचा अनुकूलता का अनुभव करेगी, अर्थात स्पर्श इन्द्रिय सन्तुष्ट होगी। इस प्रकार, हमारी पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ सन्तुष्ट

हो जाएगी। इन्द्रियों के सन्तुष्ट होने पर मन प्रसन्न होगा, जिससे वह मन शीघ्रता से तथा उचित निर्णय लेगा। निर्णय सही हों, सही समय पर हों तो जिस लक्ष्य को निर्धारित किया हो, जो कार्य सोचा है, उसे प्राप्त करने में आसानी होती हैं। लक्ष्य प्राप्त करने से, सफलता प्राप्त करने से जीवन में उत्साह बढ़ता है, अर्थ अर्थात धन की प्राप्ति होती है, जिससे समृद्धि आती है।

धर्म से कमाया गया अर्थ या धन, अपने साथ सुख व शान्ति लाता ही है। जिससे व्यक्ति का उत्तरोतर विकास होता है। जिससे, वह सन्तुष्ट होकर सबके साथ मिलजुल कर, भाईचारे का व्यवहार करता है, तथा बदले में भी वही पाता हैं, सीधे शब्दों में कहें, तो व्यवहार कुशल होता है, व्यक्ति झुंझलाता नही है, कड़वा नहीं बोलता है। सब उसके विकास में सहायक होते हैं। परिवार और अधिक खुश रहता है, परिवार के सदस्यों की इच्छाओं की पूर्ति होती है, जिससे वो भी खुश रहते है।

यह सब इस पर निर्भर करता है कि आपके निर्णय सही हों व सही समय पर हों। निर्णय सही कैसे हों? यह इस बात पर निर्भर करता है कि निर्णय शान्त, स्थिर व प्रसन्न चित्त या मन से किए जाएँ। इसके लिए पाँचों ज्ञानेन्द्रियों का सन्तुष्ट होना आवश्यक है।

यह उस प्रकार के परिवेश, मकान आदि पर निर्भर करता है, जिसमें व्यक्ति निवास करता है। इस बात पर भी निर्भर करता है कि उसकी दिनचर्या कैसी है? उसका भोजन क्या है, वह किस प्रकार के लोगो के सम्पर्क में है, आदि।

उपरोक्त सभी बातें ही वास्तुशास्त्र का विषय है, वास्तु का क्षेत्र है। इसलिए व्यक्ति वास्तु के अनुरूप निर्माण में रहे, उसके नियमों के अनुसार आचरण करें तो व्यक्ति अपने जीवन में बाधारहित सफलता पा सकता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १.८ पाँच ज्ञानेन्द्रियों sense organs के नाम बताएँ।

प्रश्न १.९ आँख से हम क्या देखते हैं।

प्रश्न १.१० उचित निर्णय लेने के लिए क्या आवश्यक है।

प्रश्न १.११ मन कब (स्थिर व) प्रसन्न होता है?

१.८ सारांश -शुभ वास्तु के प्रभाव

सुख समृद्धि उत्तम स्वास्थ्य
समस्यारहित जीवन लक्ष्य की प्राप्ति उन्नति के
अवसर प्रकृति का सहयोग मित्रता भाईचारा
सुचारू जीवन उत्तरोतर सुखी धर्म, अर्थ, काम सहित
मोक्ष की प्राप्ति।

अशुभ वास्तु के दुष्प्रभाव

अशान्ति	समस्याएँ	शत्रुता
जीवन संकट	उन्नति में रूकावट	दुःखी जीवन
बाधाएँ	रोग	अस्थिरता

१.९ शब्दावली

पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष

पंच-ज्ञानेन्द्रिय-आँख, नाक, कान, जीभ व त्वचा

१.१० उपयोगी पुस्तकें

विश्वकर्म-प्रकाश-अध्याय १ श्लोक १-३

राजवल्लभ अध्याय १ श्लोक ५

इकाई २

स्थापत्यवेद व वास्तुशास्त्र का परिचय

विषय

इकाई-२

स्थापत्यवेद व वास्तुशास्त्र का परिचय

२.० उद्देश्य

इस इकाई में हम निम्न बातों का अध्ययन करेंगे-

वास्तुशास्त्र किसे कहते हैं ?

स्थापत्यवेद किसे कहते हैं ?

वास्तुशास्त्र का क्षेत्र कितना व्यापक (बड़ा) है ?

२.१ वेद

वास्तुशास्त्र को हम सबसे पहले, उसके मूल उद्‌गम, स्थापत्य वेद से जोड़ते है। वास्तुशास्त्र, स्थापत्य वेद का एक अंग (भाग) है।

अब शब्द आया वेद तो पहले वेद शब्द का अर्थ जान लें-

वेद शब्द का अर्थ है ज्ञान।

वेद चार हैं- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद।

ऋग्वेद में देवता (या प्रकृति की शक्ति) की स्तुति या प्रार्थना के मन्त्र हैं, जिन्हें सूक्त कहते हैं।

सामवेद में ऋग्वेद के मन्त्रों को गाने की विधि है।

यजुर्वेद में ऋग्वेद के देवताओं को मन्त्रों के साथ आहुति देने की विधि का वर्णन किया गया है।

अर्थववेद में जीवन से संबंधित ज्ञान का वर्णन है।

वेद अपौरुषेय हैं, इनकी रचना किसी व्यक्ति ने नहीं की है। ऋषियों ने अपने चेतना में वेद मन्त्रों का साक्षात्कार किया है। शास्त्रीय परम्परा में वेद, श्रुति को प्रमाण माना गया है। अर्थात कोई बात का उल्लेख यदि वेद में किया गया है तो वह स्वतः प्रमाण है, उसे किसी भी अन्य प्रमाण (लौकिक) की आवश्यकता नहीं होती है।

प्राचीन समय में जब शास्त्रार्थ होता था तब किसी विषय के समर्थन या पुष्टि के लिए वेद का उल्लेख करना होता था कि यह अमुक वेद की अमुक ऋचा (मन्त्र) है, यह इस उपनिषद में आया है।

वेद पढ़ना, समझना, उनका अर्थ आसानी से समझ में आ जाए इसलिए उपवेद की रचना की गई।

वेद का समय

इन चारों वेद में ऋग्वेद को सबसे प्राचीन या पुराना माना गया है।

अलग-अलग विद्वानों ने वेद कितना पुराना है, इस बात पर अलग-अलग मत या विचार व्यक्त किए हैं।

मैक्समूलर ने वेद का समय ईसा से १३०० वर्ष पहले का माना है तो लोकमान्य तिलक ने ईसा से ८००० वर्ष पहले वेद का समय माना है।

वेद के मुख्य रुप से दो भाग हैं:-

मन्त्र

ब्राह्मण

मन्त्र भाग में देवताओं की स्तुति मन्त्र के माध्यम से की गई है।

ब्राह्मण के तीन भाग हैं:-

ब्राह्मण:-कर्मकाण्ड को ब्राह्मण भाग कहते हैं।

आरण्यक:- उपासनाकाण्ड को आरण्यक कहते हैं।

उपनिषद :- ज्ञानकाण्ड को उपनिषद कहते हैं।

वेद अपौरुषेय हैं। इनकी रचना किसी पुरुष ने नहीं की। वरन् ध्यान की अवस्था में इसका साक्षात्कार किया है।

वेद में मन्त्र होता है, जिसे सूक्त कहते हैं। उस मन्त्र का एक देवता होता है। उस मन्त्र को देखने वाला, द्रष्टा, एक ऋषि होता है। इस प्रकार वेद में हरएक मन्त्र के लिए एक देवता, एक ऋषि व एक छन्द होता है। छन्द का मतलब है ढाकने वाला, आच्छादित करने वाला। इसी छन्द से वह देवता ढका हुआ होता है, इसी छन्द में उस मन्त्र या सूक्त को गाने पर या पाठ करने पर उस देवता की शक्ति का उदय या प्राप्ति होती है।

चूँकि वेद देववाणी, संस्कृत भाषा में हैं।(संस्कृत का मतलब होता है जो चीज का संस्कार कर दिया गया हो, या जो संस्कारित या रिफाइन्ड हो।, जिसे शुद्ध कर दिया गया हो, परिमार्जित कर दिया गया हो।) संस्कृत भाषा पूरी तरह नियमों

से बंधी हुई भाषा है। जिस प्रकार गणित के सूत्र होते हैं उसी प्रकार संस्कृत भाषा के भी सूत्र होते हैं, वे पाणिनि (एक ऋषि) द्वारा रचित पाणिनी सूत्र कहलाते हैं।

तो वेद में कही गई बात को जब सरल करने की बात आई कि किस प्रकार से वेद में कहे गए तत्वों को सरल भाषा में कहा जाए तो उसे वेदांग, उपांग,उपवेद, व उपनिषद के माध्यम से कहा गया। उसी बात को, उन्हीं तत्वों को अत्यन्त सरल व जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए इतिहास (रामायण व महाभारत) व पुराणों (कुल १८ पुराण मुख्य हैं, जैसे अग्नि पुराण, मत्स्य पुराण, आदि) की रचना की गई।

ऋग्वेद में देवताओं की स्तुतियाँ मन्त्रों के माध्यम से की गई है।

उन मन्त्रों को किस प्रकार गाना चाहिए इसका वर्णन सामवेद में किया गया है।

उन मन्त्रों को गाने के साथ किस प्रकार यज्ञ द्वारा आहुति देना चाहिए अर्थात् यज्ञ सम्बन्धी विद्या का वर्णन यजुर्वेद में किया गया है।

हम जिस वेद का अध्ययन करना चाहते हैं वह स्थापत्यवेद कहलाता है। स्थापत्य वेद नाम का कोई ग्रन्थ अलग से उपलब्ध नहीं है। अलग-अलग किताबों(ग्रन्थों) में वास्तुशास्त्र या स्थापत्य से सम्बन्धी जो सामग्री या मटेरियल दिया गया है, वही स्थापत्य वेद कहलाता है। इनके ग्रन्थों के नाम हम अन्य समय पर देखेंगे।

रामकृष्ण मिशन में स्वामी आत्मानन्द का प्रवचन

उपनिषद हमारी अद्भुत धरोहर है, जिसके आधार पर वेदान्त खड़ा हुआ है। वेदान्त सार नाम का एक छोटा सा ग्रन्थ है, वहाँ पर वेदान्त की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि वेदान्तो नामः उपनिषद प्रमाण। वेदान्त वह है जिसका प्रमाण उपनिषद है। प्रमा का तात्पर्य ज्ञान। प्रमाण का तात्पर्य है ज्ञान का पुष्टिकरण। जिस ज्ञान का पुष्टिकरण उपनिषदों के द्वारा हो, उसे वेदान्त कहा गया है। वैसा वेदान्त का शब्दार्थ होता है वेद का अन्त ।

वेद का तात्पर्य है ज्ञान से। विद् धातु से वेद शब्द बना है। और विद् धातु का अर्थ है जानना। वेद का अर्थ हुआ ज्ञान । वेदान्त का अर्थ हुआ ज्ञान का अन्त। जहाँ पर ज्ञान अपनी पराकाष्ठा को पहुँचा चुका हो, उसे वेदान्त कहते हैं। सामान्य रुप से जिन ग्रन्थों को हम वेद कहा करते हैं, कुछ लोग कहते हैं कि वेदों का अन्तिम भाग वेदान्त कहलाता है। ऐसी बात नहीं है, कि हम ऋग्वेद को उठा ले और उसके अन्तिम अध्यायों को देखें और वह वेदान्त हो जाएगा,

यजुर्वेद को ले ले और उसके अन्तिम अध्याय को ले ले तो वेदान्त हो जाएगा ऐसी बात नहीं है, **वेदान्त का तात्पर्य है ज्ञान की पराकाष्ठा।** जहाँ पर ज्ञान अपनी सीमा को पहुँच चुका हो उससे परे ज्ञान की और कोई कल्पना न हो, उसे वेदान्त कहा गया है। स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे कि एकत्व से बढ़कर ज्ञान की कोई पराकाष्ठा नहीं है। ज्ञान की पराकाष्ठा है उस एकत्व का अनुभव। जहाँ दो है ही नहीं। तो वेदान्त की दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि जहाँ पर हम जाकर अद्वैत में उपस्थित होते हैं वही वेदान्त है। ज्ञान की वही पराकाष्ठा है, जहाँ पर भी दो हैं, तो स्वाभाविक ही वहाँ पर द्वैत बुद्धि है, उसे ज्ञान की पराकाष्ठा के रुप में नहीं लिया गया, तो वेदान्त मतलब ज्ञान की पराकाष्ठा। और उपनिषद इस वेदान्त का आधार तैयार करते है। ऐसे ये उपनिषद शास्त्र है,

एक दूसरे ढंग से थोड़ा सा विचार कर ले। जैसे जो हमारे वेद ग्रन्थ है, वेद को दो भागों में विभाजित किया गया है एक को कहते है कर्मकाण्ड और दूसरे को कहते है ज्ञानकाण्ड।

कर्मकाण्ड के अन्तर्गत दो उपविभाग है एक है ब्राह्मण और दूसरा है संहिता। इसी प्रकार ज्ञान काण्ड के भी दो उपविभाग है एक को कहते है आरण्यक और दूसरे को कहते है उपनिषद। ज्ञानकाण्ड के अन्तर्गत आरण्यक आते हैं, उपनिषद आते है।

संहिता भाग में मन्त्र राशि है। भिन्न-भिन्न मन्त्र जिन्हें आप ऋचाएँ कहकर पुकारते हैं। ये ऋचाएँ ये मन्त्र इनका संकलन संहिता कहलाता है। भिन्न-भिन्न देवताओं, मरुत, आदित्य, इन्द्र, वरुण आदि के लिए ये ऋचाएँ है, प्रशस्तियाँ है, स्तुतियाँ है, ये श्लोक है। ये संहिता कहलाता है।

ब्राह्मण भाग में किस यज्ञ में किस देवता के लिए किस ऋचा का पाठ करना है, आयोजन किस प्रकार से होना चाहिए इसका वर्णन ब्राह्मण भाग में है। आरण्यक में जब व्यक्ति वानप्रस्थ हो जाता है, तब भौतिक यज्ञ के लिए उसके पास द्रव्य (धन) आदि नहीं होता है, क्योंकि उसने तो संसार का त्याग कर दिया है। तो मानसिक रुप से चिन्तन व प्रतीकों के द्वारा वह उपासना करता है। यह जो मानसिक उपासना की पद्धति है उसका वर्णन आरण्यक में हुआ है।

और उपनिषद में केवल चिन्तन, उपासना से भी ऊपर केवल चिन्तन। आत्मा पर चिन्तन, जीवन के शाश्वत प्रश्नों पर चिन्तन, मैं क्या हूँ? जगत क्या है? जगत कारण क्या है? उस जगत कारण के साथ मेरा सम्बन्ध क्या है? ये जो भिन्न-भिन्न प्रश्न मनुष्य के मन में उठा करते है, अपने जीवन के सम्बन्ध में और जगत के सम्बन्ध

में, उन प्रश्नों को उठाकर उसका हल दिया गया है। एक एक उपनिषद की प्रणाली अलग-अलग है।

स्थापत्य वेद

यह तो बात हुई वेद इत्यादि की या स्थापत्य वेद के प्रारम्भिक परिचय या इतिहास की लेकिन जब हम नगर-निर्माण, राजमहल इत्यादि जलाशय, विभिन्न कुण्ड, जल वितरण प्रणाली, विभिन्न शय्यागार इत्यादि के बारे में महाभारत तथा रामायण आदि को पढ़ते हैं तो पता चलता है।

ऋग्वेद में भी एक हजार स्तम्भ वाले मंडप का वर्णन मिलता है।

महाभारत एवं रामायण में विभिन्न राजधानियाँ, उपवन, राजमहल, जलाशय का बड़ा ही सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित वर्णन देखने को मिलता है। विभिन्न प्रकार की राजधानियाँ उसमें रहने वाले विभिन्न वर्ण के लोग, विभिन्न दिशाओं में किस प्रकार बसाए गए, विभिन्न सामग्रियों का संग्रह, आपातकालीन स्थिति के लिए संचय, अनेकानेक प्रकार के दुर्ग, सुन्दर एवं सुदृढ़ सुरक्षा व्यवस्था यह सारा वर्णन वास्तुविद्या के सशक्त पक्ष को उजागर करता है।

महाभारत के युद्ध में जिन विभिन्न व्यूहों का वर्णन हमें मिलता है, कि प्रत्येक दिन पांडव एवं कौरव की सेना एक नए व्यूह की रचना करती थी जिसके अन्दर घुस पाना अत्यन्त ही दुष्कर कार्य था। चक्रव्यूह की रचना के बारे में तो हम सब जानते हैं। इस प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि न केवल नगर नियोजन या राजधानी नियोजन बल्कि दुर्ग एवं युद्ध आदि के लिए से जाने वाले विभिन्न आकार (व्यूह) आदि का भी बड़ा सटिक ज्ञान प्राचीन काल में अत्यन्त विकसित था।

रामायण में हमें अयोध्या एवं लंका के बारे में बड़ा सुव्यवस्थित नगर नियोजन एवं राजमहल नियोजन का वर्णन मिलता है। इसमें हमें पुष्पक विमान के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है, जो कि अत्यन्त विकसित विमान था।

अनेकानेक विमानों का वर्णन भरतमुनि द्वारा रचित बृहत विमान शास्त्र (?, यन्त्र सर्वस्व) में मिलता है।

इन प्राचीन ग्रन्थों में न केवल इन विमानों के मटेरियल, उनके ईंधन इत्यादि के बारे में जानकारी मिलती है, बल्कि उसमें बैठनेवाले व्यक्तियों को किस प्रकार का भोजन करना चाहिए, इत्यादि के बारे में विस्तार से बतलाया गया है।

ग्यारहवीं शताब्दी में राजा भोज द्वारा रचित वास्तुशास्त्र का प्रमुख ग्रन्थ समरांगण सूत्रधार में विभिन्न प्रकार के यन्त्र जैसे जलयन्त्र, लिफ्ट, यान्त्रिक झूले,

विभिन्न प्रकार की यान्त्रिक पुतलिया के साथ-साथ अग्नि, वायु ,जल, आदि शक्तियों के द्वारा संचालित यन्त्रों का वर्णन मिलता है। इस ग्रन्थ के यन्त्र अध्याय में विमान के बारे में भी बतलाया गया है। जिसमें पारा के उपयोग ईंधन के रुप में बताया गया है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि प्राचीन समय से ही भारत में वास्तु विद्या अत्यन्त ही विकसित रही है।

२.२ उपवेद

वेद	उपवेद
ऋग्वेद	आयुर्वेद (जीवन का ज्ञान)
यजुर्वेद	धनुर्वेद (अस्त्र-शस्त्र का ज्ञान)
सामवेद	गन्धर्ववेद (कला व संगीत का ज्ञान)
अथर्ववेद	**स्थापत्यवेद** (निर्माण का ज्ञान)

इस प्रकार से हमने देखा कि वेद को सरल कर उपवेद की रचना की गई। स्थापत्यवेद नाम का अलग से कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, विभिन्न ग्रन्थों (अग्नि पुराण, मत्स्य पुराण, मानसार आदि, इनके नाम का उल्लेख आगे आएगा) में निर्माण से संबंधित विषय को स्थापत्यवेद के नाम से जानते हैं।

२.३ स्थापत्य वेद

स्थापत्य वेद का जब हम अर्थ देखने का प्रयास करते हैं, तो वेद शब्द का अर्थ है ज्ञान, तथा स्थापत्य का अर्थ है स्थापना संबंधी, तो स्थापत्य वेद का अर्थ हुआ **स्थापना (व निर्माण) संबंधी ज्ञान।**

स्थापना अर्थात् क्या, किस चीज की स्थापना? थोड़ा सा विस्तार में देखने का प्रयास करेंगे। जैसे शिल्पकार ने कोई मूर्ति बनाई, तो क्या वह मूर्ति बनाने के बाद, हम तुरन्त उसकी पूजा करते हैं, नहीं। उसकी पूजा, शुभ मुहूर्त में शुभ स्थान पर, मन्त्रोंच्चारण के मध्य, विभिन्न प्रक्रिया के साथ, उस मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा के बाद (साथ-साथ) करते हैं। प्राण प्रतिष्ठा का अर्थ ही यही है कि अब उस शिल्प में, मूर्ति में, प्रतिमा में प्राण आ गए है, अब वह प्राण-प्रतिष्ठित हो गई है, सजीव है।

ठीक उसी प्रकार, किसी भी भवन का निर्माण कराने पर, वह एक मकान बना है, घर नही है। जब हम उसमें प्राण प्रतिष्ठा (वास्तुपूजन) करते है तो वह घर होता है। इस प्रकार हमने देखा कि **निर्माण के साथ-साथ स्थापना सम्बन्धी ज्ञान को स्थापत्य वेद कहते हैं।**

इसके अतिरिक्त, स्थापत्य वेद को इस प्रकार भी पारिभाषित किया जा सकता है, कि **अव्यक्त को व्यक्त कर उसमें चेतना की स्थापना करना स्थापत्य वेद कहलाता हैं।**

जब हम कोई भी निर्माण कार्य करते हैं, चाहे वो किसी घर का निर्माण हो या किसी मूर्ति का, तो सबसे पहले हमारे मस्तिष्क में उसकी कल्पना (आकृति इत्यादि) अव्यक्त रूप में रहती हैं। उसके पश्चात हम उसे कागज आदि पर व्यक्त करते हैं, उतारते हैं। उसके बाद उसे साकार करते हैं, घर का निर्माण करते हैं, मूर्ति बनाते हैं आदि। घर या मूर्ति जब बन जाती है तो यदि घर है तो वास्तुशान्ति के माध्यम से और मूर्ति है तो प्राण प्रतिष्ठा के माध्यम से उसमें प्राणों का संचार करते हैं, चेतना की स्थापना करते हैं। इस प्रकार स्थापत्यवेद अव्यक्त को व्यक्त कर उसमे चेतना को स्थापित करने की विद्या है।

स्थापत्यवेद का क्षेत्र सारा ब्रह्मांड है, सृष्टि की सभी वस्तुओं में अन्तर्संबंध है तथा वे एक दूसरे को प्रभावित करती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न- २.४ स्थापत्यवेद शब्द से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न २.५ निम्न वाक्य में से अधिक सही वाक्य को चुनें-

(अ) स्थापत्यवेद-निर्माण करने की विधि का ज्ञान है।

(आ) स्थापत्यवेद-निर्माण के साथ स्थापना की विधि का ज्ञान है।

प्रश्न २.६ स्थापत्य विद्या का क्षेत्र-

(अ) केवल घर होता है।

(आ) केवल ऑफिस होता है।

(इ) केवल मंदिर होता है।

(ई) सारा ब्रह्मांड है।

प्रश्न २.७ स्थापत्य वेद की परिभाषा लिखिए।

६४ कलाओं का उल्लेख

६४ कलाओं के बारे में परिचय

कला व शिल्प शब्द का प्रयोग कई बार एक दूसरे के स्थान पर भी किया जाता है। अर्थात इनका प्रयोग समानार्थी शब्द के रुप में भी होता है।

इन्ही कलाओं को आर्ट कहा है।

जब इन कलाओं का अध्ययन अत्यन्त बारिकियों के साथ किया जाता है तब इन्हें फाईन आर्ट या ललित कला कहा गया है।

भारत वर्ष में विभिन्न कलाओं का विकास हुआ, इन पर अलग-अलग ग्रन्थों की रचना की गई।

इन कलाओं को उच्च वर्ग में महत्वपूर्ण स्थान मिला।

श्रीमद् भागवत, विष्णुपुराण, हरिवंश, महाभारत तथा कामसूत्र आदि ग्रन्थों में विस्तार से ६४ कलाओं का वर्णन मिलता है।

इन ६४ कलाओं में वास्तुकला को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला है। यहां यदि हम अत्यन्त सूक्ष्म में जाकर विश्लेषण न भी करे तो भी उसके किसी विशेष अंग जैसे बेड्रुम आदि को सजाना, पलंग सजाना आदि का वर्णन, हमें इसी विद्या के अन्तर्गत मिलता है।

राम जब बनवास गए तो लक्ष्मण ने झोपड़ी का निर्माण किया था। पर्णकुटिर बनाना एक कला है, आर्ट है।

६४ कलाएं इस प्रकार कही गई है:-

१. **गीतम्**:- गाना बनाना व गाना

२. **वाद्यम्**:- वाद्य यन्त्रों को बजाना (४-५ प्रकार के)

३. **नृत्यम्**:- नृत्य करना

४. **आलेख्यम्**:-चित्र बनाना (पेन्टिंग)

५. **विशेषकच्छेज्यम्**:-टेटू (मुख पर विशेष प्रकार पेन्ट लगाना)

६. **तण्डुलकुसुमवलिविकारा**::-चांवल, फूल तथा भोजन को सजाना

७. **पुष्पास्तरणम्**:-फूलों की क्यारी बनाना

८. **दशनवसनाङ्गराग**::- दाँत, कपड़ा तथा शरीर को रंगना (दूसरा अर्थ कामशास्त्र से सम्बन्धित)

९. **मणिभूमिकाकर्मः**- जमींन को रत्न आदि से सजाना

१०. **शयनरचनम्**:-पलंग सजाना (आनन्द के लिए)

११. **उद्कवाद्यम्**:-जल-तरंग बजाना

१२. **उदकाघातः**:-फव्वारा बनाना

१३. **चित्रयोगाः**:- पेन्टिंग बनाना

१४. **माल्यग्रथनविकल्पाः**:-माला बनाना

१५. **शेखरपीडयोजनम्**:-सिर को आभूषण से सजाना

१६. **नेपथ्यप्रयोगाः**:-स्टेज तैयार करना

१७. **कर्णपत्रभङ्गाः**-कान से पास गाल पर चन्दन आदि लगाना

१८. **गन्धयुक्तिः**-सुगन्ध तैयार करना

१९. **भूषणयोजनम्**:- शरीर को आभूषण से सजाना

२०. **एन्द्रजालयोगाः**:-जगलरी

२१. **कौचुमारयोगाः**:-स्तन को सजाना

२२. **हस्तलाघवम्**:-हाथ की सफाई

२३. **विचित्रशीकयूषभक्ष्याः**-खाना पकाना, च्यूंगवाले (चव्य), चूसने वाले (चोश्य), लेह, पेय (पीनेवाले)

२४. **विकारक्रियापानकरसरागवयोजनम्**:-

२५. **सूचीवातकर्माणिः**- सीना, बुनना

२६. **सूत्रक्रीडाः**- धागे व रस्सी से खेलना

२७. **वीणाडमरुकवाद्यानिः**- वीणा, डमरु बजाना

२८. **प्रहेलिकाः**-पहेली बनाना, बूझाना

२९. **प्रतिमालाः**-प्रतिमा बनाना

३०. **दुर्वाचकयोगाः**:-मिमिक्री

३१. **पुस्तकवाचनम्**:- प्रभावशाली ढंग से बोलना, पुस्तक पढ़ना,

३२. **नाट्यकाव्यायिकादर्शनः**- किसी चरित्र या दृश्य को प्रस्तुत करना

३३. **काव्यसमस्यापूरणम्**:- अलंकार शास्त्र की पहेलिया सुलझाना

३४. **पट्टिकावेत्रवानविकल्पाः**-केन का फर्नीचर बनाना

३५. **तर्ककर्माणि**:-तर्क करना

३६. **तक्षणम्**:-लकड़ी का कार्य करना

३७. **वास्तुविद्या**:-भवन आदि का निर्माण करना

३८. **रुप्यरत्नपरीक्षा**:-सोना व रत्न आदि की परीक्षा

३९. **धातुवाद**:- धातु कला, धातु शुद्ध करना, मिलाना आदि

४०. **मणिरागाकरज्ञानम्**:- बहुमूल्य रत्नों को रंगना

४१. **वृक्षायुर्वेदयोगा**:-वृक्ष तथा वनस्पतियों का ज्ञान, साज-सम्भाल, तथा उनका औषधि के रुप में महत्व का ज्ञान

४२. **मेषकुक्कुटलावकयुद्धविधि**:- भेड़, मुर्गाआदि के युद्ध का ज्ञान

४३. **शुकसारिका प्रलापनम्**:-पक्षियों के द्वारा संदेश भेजने की विधि

४४. **उत्सादन-संवाहन-केशमर्दन-कौशलम्** :-हाथ व पैर से शरीर के अंगों की मालिश करना, उसके द्वारा पसीना निकालना। विभिन्न प्रकार से बाल बनाना (शेम्पू इत्यादि भी करना)

४५. **अक्षरमुष्टिकाकथनम्**:- मुट्ठी में बन्द संदेश को बतलाना

४६. **म्लेच्छितविकल्पा**:-अपनी बात को सिक्रेट कोड में कहना।

४७. **देशभाषाविज्ञानम्**:-विभिन्न देशों की भाषा को जानना

४८. **पुष्पकटिका**:- फूलों की गाड़ी बनाना (सजाना)

४९. **निमित्तज्ञानम्**:-शकुनों का ज्ञान

५०. **यन्त्रमातृका**:- विभिन्न मोनोग्राम आदि बनाना।(विभिन्न यन्त्र बनाना)

५१. **धारणमातृका**:- किसी सुनी हुई बात को याद रखना

५२. **संपाठ्यम्**:-पाठ करना

५३. **मानसी काव्यक्रिया**:- किसी दिए गए शब्द (विषय) से काव्य की रचना करना।

५४. **अभिधानकोष**::-किसी डिक्शनरी को बनाना

५५. **छन्दोज्ञानम्**:-छन्द का ज्ञान (या किसी युवती के द्वारा पुरुष के चरित्र के बारे में कहना)

५६. **क्रियाकल्प**:-व्याकरण की क्रियाओं का ज्ञान

५७. **छलितकयोगा**: :-छल करना

५८. **वस्त्रगोपनानिः**-कपड़े का दिखना बदलना, जैसे सूती कपड़ा रेश्मी दिखे, इत्यादि।

५९. **द्यूतविशेषः**:-जुआँ खेलना

६०. **आकर्षक्रीडाः**-पांसा खेलना

६१. **बालक्रीडनकानिः**-बच्चों के लिए गुड़िया बनाना

६२. **वैनयिकीनां विद्यानांज्ञानंः**- लोकाचार का ज्ञान (एटिकेट्स)

६३. **वैजयिकीनां विद्यानांज्ञानंः**-युद्ध कला कौशल

६४. **व्यायामिकीनां विद्यानांज्ञानंः**- व्यायाम का ज्ञान

इस प्रकार से हम देखते हैं कि ६४ कलाओं में वास्तु विद्या के स्थान प्राप्त है।

इकाई ३

स्थापत्य की विशेषता

क्रमांक	विषय
३.०	उद्देश्य
३.१	स्थापत्यवेद की विशेषता
३.२	चेतना के स्तर
३.३	स्थापत्य वेद
३.४	चेतना के स्तर
३.५	जाग्रत चेतना
३.६	स्वप्न
३.७	सुषुप्ति
३.८	तुरीय
	उदाहरण
३.९	तुरीयातीत
३.१०	भगवत चेतना
३.११	ब्राह्मी चेतना
३.१२	सारांश

इकाई ३

स्थापत्यवेद की विशेषता

३.० उद्देश्य

इस इकाई में हम इस बात का अध्ययन करेंगे कि -

व्यक्ति की चेतना वास्तु को किस प्रकार से प्रभावित करती है।

३.१ स्थापत्यवेद की विशेषता

समरांगण सूत्रधार तथा विश्वकर्म प्रकाश ग्रन्थ में घर की आवश्यकता कब महसूस हुई यह वर्णन मिलता है।

समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ में कहा है कि पहले देवता व मनुष्य साथ-साथ रहते थे, मनुष्यों की चेतना का स्तर देवताओं की चेतना के स्तर के समान था। उनके (मनुष्यों के) मन में जो भी संकल्प उठता था वह तुरन्त ही पूरा हो जाता था। उनकी चेतना शुद्ध थी। इस प्रकार की चेतना सत्व गुण प्रधान होती है।

समरांगण सूत्रधार, धार के राजा भोज द्वारा, ग्यारहवीं सदी में लिखा गया, वास्तुशास्त्र का, अत्यन्त ही महत्वपूर्ण तथा प्रामाणिक ग्रंथ है। इस ग्रंथ के अध्याय छह में सहदेवाधिकार यानी भवन जन्म कथा का वर्णन किया गया है। जिसमें हमें वर्णन मिलता है कि, कैसे पहले देवता व मनुष्य साथ-साथ रहते थे, वे क्षुधा, पिपासा (भूख, प्यास) एवं दुखों से रहित, स्थिर यौवन वाले थे। फिर देवताओं की अवज्ञा से उनकी अर्थात मनुष्यों की वृत्ति में, चेतना में ह्रास (गिरावट), होने लगा। उन्हें क्रमशः भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, वर्षा व शरीर की अन्य आवश्यकता सताने लगी। तब उन्हें भवन की आवश्यकता महसूस हुई तथा वे घर बनाकर रहने लगे।

इससे हमें, यह पता चलता है कि जब तक मनुष्य की चित्त वृत्ति में ह्रास नहीं हुआ, वे देवता के साथ रहते थे, भूख, प्यास व शरीर की अन्य आवश्यकताओं से मुक्त थे। चित्त की वृत्ति के ह्रास, चेतना के स्तर में गिरावट के बाद, उन्हें शारीरिक आवश्यकताऐं सताने लगी एवं शीत, गर्मी, वर्षा आदि से बचने के लिए भवन की आवश्यकता महसूस हुई और वे भवन बना कर रहने लगे।

एकोऽग्रजन्मा वर्णोऽस्मिन् वेदोऽभूदेक एव च। ऋतुर्वसन्त एवैकः

कुसुमायुधबान्धवः।स.सू.६।।१२।।

केवल एक ही वर्ण था। वेद भी एक ही था। ऋतुओं में एक ही ऋतु, कामदेव का सखा (मित्र) वसन्त था।।

न खेटनगरग्रामपुरक्षेत्रखलादिकम्। न दंशमशकक्रव्याद्भयं वा न ग्रहादि च।स.सू ६।।१४।।

न तो खेट, नगर, ग्राम, पुर, क्षेत्र या खल आदि थे। न दंश से (डसने से), न मच्छर से, न ही मांस खाने वालों से कोई भय था। न ही ग्रह आदि का कोई भय था।

कल्पद्रुमाप्तभोगानां न तेषां प्रभुरप्यभूत्। पुरास्मिन् भारते वर्षे तेषां निवासतामिति।

न ही कल्पवृक्ष से प्राप्त होने वालों भोग व ऐश्वर्य का कोई राजा था। इस प्रकार से, प्राचीन भारत वर्ष में, देवों की श्री धारण किए हुए लोग निवास करते थे।।१५।।

जगाम सुबहः कालः सुरैः सार्धं सुरश्रियाम्।अज्ञाततत्प्रभावानां सहसंवाससंभवा।।१६।।

उन लोगों को रहते-रहते बहुत समय बीत गया। वे देवताओं के साथ रहते थे, परन्तु वे देवताओं के प्रभाव को नहीं जानते थे, (उससे अपरिचित थे।)

अथैषामभवद् दैवादवज्ञा क्षिदशान् प्रति। अपूज्यमानस्ते पूज्या सर्वेऽप्यखिलवेदिनः।।१७।।

देवताओं के साथ (बहुत समय तक) रहने के बाद वे (मनुष्य) उनकी (देवताओं की) अवज्ञा करने लगे। सब कुछ जानते हुए भी उन लोगों के द्वारा, वे देव, अब पूजित नहीं रहे।(उन्होंने देवताओं की पूजा करना बन्द कर दिया।)

उसके बाद अपनी मर्यादा का उल्लंघन करने वाले,

अविनीतेष्वभाग्येषु स शालिस्तुषतामगात्।
प्रवृद्धरजसां तेषां सा पुण्यश्लोकता गता।।३०।।८।।स.सू ६।।

अपनी आत्मा के प्रभाव का ह्रास करने वाले, उन दुर्भागियों का वह शालि-तण्डुल भी सूख गया, उसमें भूसी पैदा हो गई। राजस प्रकृति के प्रकोप के कारण, उनकी पुण्यश्लोकता भी चली गई।।३०।।

इस प्रकार से हमने देखा कि चेतना के स्तर में गिरावट के बाद ही वास्तु दोषों का लगना प्रारम्भ होता है या लगते हैं अतः अपनी चेतना का स्तर हमेशा ऊँचा होना चाहिए।

चेतना का स्तर ऊँचा उठाने के लिए शास्त्र के अनुसार आचरण करना, ध्यान करना, चित्त व मन को निर्मल करना व रखना चाहिए। साक्षी भाव में स्थित रहना, सब कुछ ईश्वर की कृपा है, ईश्वर का प्रसाद है, ईश्वर का कार्य है यह मानकर कार्य करना चाहिए।

इसी बात को अन्य ग्रन्थ विश्वकर्म प्रकाश में बताया है कि वास्तुपुरुष की उत्पत्ति सतयुग के बाद त्रेतायुग में हुई। सतयुग का अर्थ हम ऐसे ले सकते हैं कि ऐसा युग जिसमें सतोगुणी चेतना प्रधान होती है। त्रेतायुग से रजोगुणी चेतना प्रधान

होने लगी।

इस प्रकार वास्तुपुरुष की उत्पत्ति या भवन में स्थित वास्तु दोषों का मनुष्यों पर प्रभाव रजोगुणी या तमोगुणी चेतना में होता है। सतोगुणी चेतना के व्यक्ति को वास्तु का दुष्प्रभाव नहीं होता है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि चेतना का, हमारे विचारों का, हमारे आचार का, वास्तु पर अत्यन्त ही गहरा प्रभाव पड़ता है। हमारे पवित्र आचरण से, वातावरण कहें या वास्तु, शुद्ध या पवित्र होने लगता है। इस प्रकार से नियमित पवित्र आचरण से, वास्तु के दोषों को सुधारा जा सकता है। इसलिए अपने यहाँ सिद्ध के चरण घर में डलवाने की परम्परा रही है।

सतोगुण-सतोगुणी-जिस काल में इस देह मे (तथा) अन्तःकरण और इन्द्रियों में चेतनता और बोध शक्ति उत्पन्न होती है। उस काल में ऐसा जानना चाहिए कि सत्वगुण बढ़ा है।

रजोगुण- हे अर्जुन रजोगुण के बढ़ने पर लोभ (और) प्रवत्ति अर्थात् सांसारिक चेष्टा (तथा) सब प्रकार के कर्मो का (स्वार्थ बुद्धि से) आरम्भ (एवं) अशान्ति अर्थात् मन की चञ्चलता (और) विषय भोगों की लालसा यह सब उत्पन्न होते हैं।

तमोगुण- हे अर्जुन तमोगुण के बढ़ने पर (अन्तकरणः और इन्द्रियों में) अप्रकाश (एवं कर्तव्यकर्मों में अप्रवृत्ति और प्रमाद अर्थात् व्यर्थ चेष्टा और निद्रादि अन्तःकरण की मोहिनी वृत्तियाँ यह सब ही उत्पन्न होते हैं। (१३-१४) भगवत गीता

बोध प्रश्न

प्रश्न-३.० सही उत्तर चुनें-

वास्तु दोष का दुष्प्रभाव किसे नहीं होता है ?

(१) जिसकी चेतना पवित्र है।

(२) जिसकी चेतना में कामना, लोभ व लालच है।

(३) जिसकी चेतना में तमोगुणी (आलस्य, लापरवाही) है)

३.२ चेतना के स्तर

हमारी दृष्टि में यह इकाई स्थापत्यवेद की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण इकाई है। एक सफल व उच्च कोटि के वास्तुशास्त्री बनने के लिए इस इकाई को समझना नितान्त आवश्यक है। इस इकाई का बहुत ही सावधानी से अध्ययन करें।

पिछली इकाई में हमने चेतना के महत्व को समझा। व्यक्ति की चेतना सतोगुणी हो तो वास्तु दोष नहीं लगता है यह जाना। इस इकाई में हम देखेंगे कि किस प्रकार व्यक्ति की चेतना का स्तर उठाया जा सकता है।

३.३ स्थापत्य वेद

स्थापत्य वेद को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित कर सकते हैं-

(१) आन्तरिक सज्जा inner glorification (व्यक्ति-चेतना)

(२) बाह्य सज्जा outer glorification ((समष्टि, विश्व- भवन आदि)

(१) आन्तरिक सज्जा-चेतना के स्तर

आन्तरिक सज्जा से तात्पर्य व्यक्ति की स्वयं की चेतना से है, उसकी चेतना के स्तर से है, उसकी मानसिक अवस्था से है, उसके विचारों से है, उसके मस्तिष्क में उठने वाली तरंगों से है। यह व्यक्ति के मन की स्थिति को दर्शाता है।

(२) बाह्य सज्जा (वास्तुशास्त्र)

बाह्य सज्जा से तात्पर्य व्यक्ति के (शरीर के) बाहर के सारे क्षेत्र से है। यह वास्तु के ग्रन्थ में वर्णित है। यह जगत का क्षेत्र है। व्यक्ति के जीवन पर आसपास के वातावरण, भवन आदि के प्रभाव का अध्ययन बाह्य सज्जा के अन्तर्गत करते हैं।

३.४ आन्तरिक सज्जा-चेतना के स्तर

आन्तरिक सज्जा या ईनर ग्लोरिफिकेशन, हमारे पाठ्यक्रम का अत्यन्त

महत्वपूर्ण अंग है। यही वह अंग है, जिसके द्वारा हम स्थापत्य वेद को वास्तुशास्त्र से अलग करते हैं। जब हम वास्तु शास्त्र में आन्तरिक सज्जा को जोड़ देते है तो दोनों मिलकर स्थापत्य वेद कहलाते हैं।

आन्तरिक सज्जा से तात्पर्य व्यक्ति के अन्दर, उसके चित्त की अवस्था, मन की अवस्था के विश्लेषण से है। कार्य करते समय व्यक्ति के मन की क्या अवस्था रहती है? उसकी चेतना का स्तर क्या है?

आइए पहले व्यक्ति के चेतना के स्तर देखें।

प्रत्येक व्यक्ति की चेतना के स्तर को हम मुख्यतः चार (सात) भागों में विभाजित कर सकते है-

•जाग्रत (सामान्य)

•स्वपन (स्वप्न)

•सुषुप्ति (गाढ़ी नींद, स्वप्न रहित निद्रा)

•जाग्रत की उच्च अवस्था (तुरीय, तुरीयातीत, द्वैत (भगवत), अद्वैत (ब्राह्मी)

३.५ जाग्रत चेतना

चेतना के प्रारंभिक तीन स्तर अर्थात् जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति से हम सब लगभग परिचित हैं तथा दैनिक जीवन में इसका अनुभव भी करते है।

जाग्रत अवस्था जैसा कि हम रोज अनुभव करते है जिसमें की हम सुबह सोकर उठते हैं, स्नान आदि करते हैं, भोजन करते हैं, कार्य करते हैं, खेलते हैं, पढ़ते है इत्यादि सारे कार्य हम जाग्रत अवस्था में ही करते हैं।

३.६ स्वाप्न

जैसा कि नाम से स्पष्ट है स्व-पन अर्थात् अपनापन। जब नींद की अवस्था में हम हों, उस समय हमारे दृश्य पटल या मन या चित्त पर, जो विचार चलते रहते हैं या जो कुछ भी चलता रहता है, उस समय हम जो देखते हैं, उसे **स्वप्न** कहते हैं। यह अवस्था जाग्रत अवस्था तथा गहरी नींद की

अवस्था से भिन्न होती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न ३.२ स्वपन अवस्था में हम क्या देख्रते हैं?

३.७ सुषुप्ति

सुषुप्ति की अवस्था, गहरी नींद की अवस्था है। यह स्वप्न रहित, निद्रा की अवस्था है। इस अवस्था के बाद जब व्यक्ति जागता है तो उसे केवल इतना ही बोध शेष रहता है कि वह सुख पूर्वक सोया। कब सोया ? कहाँ सोया ? कितनी देर तक सोया इत्यादि का बोध नहीं हो पाता है। जीवन में कई बार हम इस स्वप्न रहित निद्रा या सुषुप्ति का अनुभव करते हैं।

केवल इन तीन अवस्थाओं में ही जो व्यक्ति रहते हैं उनके जीवन पर वास्तु का प्रभाव होता है। आगे उच्च अवस्था का वर्णन किया जा रहा है, इन उच्च अवस्था में रहने वाले व्यक्तियों के जीवन पर वास्तु का दुष्प्रभाव नहीं होता है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न ३.३ सुषुप्ति की अवस्था में मन में कौन से विचार चलते हैं?

३.८ तुरीय

अभी तक हमने जिन तीन अवस्थाओं को देखा, उसका अनुभव व्यक्ति सामान्यतः अपने जीवन में करता है।

तुरीय अवस्था को हम समझ्रने के लिए कह सकते है कि यह वह अवस्था है, जिसमें हम सोए न हो तथा मन में कोई विचार भी न हो।

तुरीय अवस्था को हम भावातीत अवस्था के नाम से भी जानते हैं। भावातीत का अर्थ है भाव से अतीत, भाव से परे या भाव से दूर। यह, वह अवस्था है, जब एक विचार या भाव समाप्त हुआ है तथा दूसरा भाव या विचार अभी उठा नहीं है। अर्थात् भाव के बीच के सन्धि स्थल या भाव के बीच की गेप (अन्तराल) का बोध, हमें इससे होता है। यह अवस्था पूर्ण शान्ति की अवस्था है। इस अवस्था में कोई क्रिया नहीं है तथा हम जाग भी

रहे हों तथा चित्त पर या मानस पटल पर कोई विचार या चित्र न हो।

इसे एक उदाहरण के द्वारा देखने का प्रयास करते हैं। माना कि हमारा एक मित्र जिसने कभी सिनेमाघर में जाकर चल चित्र नहीं देखा है। वह हमसे मिलने आता है तथा हम उससे आग्रह करते हैं कि आज सिनेमा देखने चलेंगे। किसी कारणवश सिनेमाघर पहुँचने में विलम्ब हो जाता है तथा जब हम सिनेमा हॉल में प्रवेश करते हैं, तब तक मूवी प्रारंभ हो चुकी होती है। अब यदि हम उससे कहें कि यह जो चित्र चल रहा है वह एक पर्दे पर चल रहा है, तो उसे चित्र ही दिखाई देता है पर्दा नहीं दिखाई देता। अब मान लो कि किसी कारणवश चलचित्र की रील टूट जाए तथा पर्दे पर प्रकाश पड़ रहा हो तब पर्दा आसानी से समझ में आ जाएगा।

ठीक इसी प्रकार हमारे मन या चित्त पर सतत विचार का प्रक्षेपण होता रहता है, विचार चलते रहते हैं। किसी भी कारण से विचार का प्रक्षेपण रुक जाए, मन में कोई विचार न हो तथा हम जाग्रत अवस्था में हों तो वह अवस्था भावातीत अवस्था होती है। उस अवस्था में जाग्रत अवस्था में रहते हुए भी मन में कोई विचार नहीं होता है।

(अब सबसे महत्वपूर्ण व कठिन बात यह है कि पर्दे पर देखने जाओं तो दिखता चित्र है परन्तु हमें समझाना पर्दा है। बगैर पर्दे को देखे आप चित्र को नहीं देख सकते हैं, परन्तु जब आप देखते हैं तो दिखता चित्र है, उसका आधार (पर्दा) नहीं दिखता। जबकि चित्र को सत्ता (आधार) पर्दा दे रहा है और वही दिखता नहीं है। सारे जगत को आप सत्ता दे रहे हैं परन्तु दिख जगत रहा है। यह समझाना थोड़ा मुश्किल है, इसीलिए कहा है कि कई जन्म के पुण्य उदित हों, गुरु कृपा हो तो यह भेद खुल जाता है कि सारे जगत को मैं सत्ता प्रदान कर रहा हूँ। सारे वेदान्त व आगम ग्रन्थों या शास्त्रों का चरम लक्ष्य इसी अवस्था की प्राप्ति है।)

यह जो चेतना का स्तर है, यह सर्वसमर्थ स्तर है। इस चेतना में ही सारी क्रिया की शक्ति है। यह चेतना सब कुछ करने में समर्थ है। सारी प्रकृति, सारा जगत शून्य कहें या ईश्वर कहें या ऊर्जा कहें यही से आया है। उस ऊर्जा से आया है जो ऊर्जा किसी भी रूप में (मेकेनिकल, इलेक्ट्रिकल, ऊष्मा आदि) व्यक्त नहीं हुई है, अपने शुद्धतम रूप में है।

अर्थात जब हमारे मन में कोई विचार नहीं होता है, उस समय हमारा मन सर्व समर्थ अवस्था में होता है। वहाँ से हम कोई भी विचार उठा सकते हैं, उसे

प्रकृति की शक्तियाँ पूरा करती हैं।

उदाहरण

रात के बाद भी दिन एकदम से नहीं हो जाता है वरन् रात की समाप्ति पर एवं दिन उगने से पहले, सन्धि का समय होता है। इसी प्रकार दिन की समाप्ति पर एवं रात्रि से पहले भी सन्धि, सन्ध्या या गेप का समय होता है। सन्धि की यह जो बेला है, चाहे वह दिन-रात की सन्धि हो या रात-दिन की, का बड़ा महत्व है। यह सन्धि की बेला, यदि दो विचारों के बीच की है तो **भावातीत** कहलाती है।

सन्धि की यह जो बेला है, चाहे वह दिन-रात की सन्धि हो या रात-दिन की, का बड़ा महत्व है। यह सन्धि की बेला, यदि दो विचारों के बीच की है तो भावातीत कहलाती है। इसका समय इतना कम होता है कि हम सामान्यतः इसका अनुभव भी नहीं कर पाते हैं। ध्यान आदि की विधियों द्वारा इस अन्तराल को, गेप को, सन्धि को बढ़ाया जा सकता है तथा इसका अनुभव भी किया जा सकता है।

भावातीत अवस्था में जो चेतना होती है, उसे **सर्वसमर्थ चेतना (फिल्ड ऑफ ऑल पॉसिब्लिबीटीस)** भी कहते हैं। यह पूर्ण शान्ति की अवस्था है यह पूर्ण विश्राम की अवस्था है तथा इसमें कोई क्रिया नही होती है।

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन .... (ऋग्वेद सूक्त १०८४)

भावातीत अवस्था में जो चेतना होती है, उसे सर्वसमर्थ चेतना (फिल्ड ऑफ ऑल पॉसिब्लिबीटीस) भी कहते हैं। यह पूर्ण शान्ति की अवस्था है यह पूर्ण विश्राम की अवस्था है तथा इसमें कोई क्रिया नही होती है।

इस अवस्था में एक विचार उठा, कुछ क्षण वह विचार रहा, उसके पश्चात् वह विचार समाप्त हुआ, फिर भावातीत अवस्था रही तथा उसके पश्चात् दूसरा विचार उठा। सूक्ष्म रूप से विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि पहला विचार भी भावातीत अवस्था से उठा, दूसरा विचार भी भावातीत अवस्था से उठा तथा और

अधिक चिन्तन करने पर हम देखते हैं कि प्रत्येक विचार भावातीत अवस्था से ही उठता है। यह सभी विचारों का मूल केन्द्र है, इसी अवस्था में सभी विचार रहते हैं। सारे संकल्प इसी अवस्था से उठते हैं। यह सारे संकल्पों का मूल केन्द्र है।

बोध प्रश्न

प्रश्न-३.४ तुरीय अवस्था में मन में कौन सा विचार चलता है?

प्रश्न-३.५ तुरीय अवस्था में तथा सुषुप्ति में क्या अन्तर या फर्क होता है?

३.९ तुरीयातीत

चेतना का पाँचवा स्तर, जो कि हर दृष्टि से, व्यवहारिक जगत में, अत्यन्त उपयोगी एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

पहले हम एक उदाहरण देखेंगे, जिसके द्वारा हम यह समझेंगे कि तुरीयातीत अवस्था क्या है?

मान लो कि हमें एक सफेद रंग के लठ्ठे (कपड़ा) को रंगना है। इस हेतु किसी बर्तन में उस रंग का (जिस रंग से रंगना है) घोल बना लेंगे तथा उसमें लठ्ठे के कपड़े को कुछ समय के लिए डुबो देगें, जिससे उस कपड़े पर रंग चढ़ जाएगा। उसके बाद उसे धूप में सूखा देगें, सुखाने से कुछ रंग उड़ जाएगा।

उस कपड़े को पुनः, उस घोल में डुबोएगे, जिससे कुछ रंग और उस पर चढ़ जाएगा, फिर पुनः उसे धूप में सुखा देगें। उसका कुछ रंग पुनः धूप में उड़ जाएगा। इस क्रिया को बार-बार करने के बाद, एक अवस्था, ऐसी आएगी कि अब उस कपड़े पर न तो रंग चढ़ेगा तथा न ही धूप में उसका रंग उड़ेगा।

ठीक इसी प्रकार, जब हम भावातीत ध्यान करते है, तुरीय अवस्था में रहते हैं, तो हम पूर्ण शान्ति का अनुभव करते हैं। इस अवस्था में कोई क्रिया नहीं होती। ध्यान से उठने के बाद, जब हम इस जगत में क्रिया करते हैं तो जो शान्ति हमें ध्यान से मिली थी, जो स्थिरता हमने ध्यान से पाई थी, उसमें कुछ कमी होती है या उसका क्षय होता है। इस क्रिया की अवस्था के बाद, हम पुनः ध्यान करते हैं (जैसे कपड़े का रंग उड़ा और पुनः डुबोया)। इस प्रकार बार-बार ध्यान कर, क्रिया करने से अर्थात क्रिया और शान्ति (ध्यान),

क्रिया और शान्ति, क्रिया और शान्ति, करने से, हमें क्रिया में भी शान्ति का अनुभव होने लगता है। कार्य करते समय भी हम शान्ति का अनुभव कर सकते हैं, अर्थात ध्यान की शान्ति, क्रिया करते समय भी, बनी रहती है। जैसे हमने उदाहरण में देखा था कि धूप में सूखाने पर भी, कपड़े का रंग नहीं उड़ता।

तो जब क्रिया के समय भी शान्ति, सजगता बनी रहती है तो, उस अवस्था को **तुरीयातीत अवस्था** कहते हैं। यही अवस्था साक्षी अवस्था के नाम से भी जानी जाती है।

इस अवस्था में, मुझे क्रोध आया, मुझे पता है। मुझमें कामना जगी, मुझे पता है। मेरा मन खुश है, मुझे पता है। आज मेरा मन दुखी है, मुझे पता है। मैं विचारों का दृष्टा हूँ, मैं विचारों को देखता हूँ, मैं साक्षी हूँ, मैं मन नहीं हूँ, मैं मन का दृष्टा हूँ, साक्षी हूँ।

इस प्रकार की जो अवस्था है, वही **तुरीयातीत या साक्षी** ~~(witness)~~ अवस्था कहलाती है, इस अवस्था तक पहुँचना, प्रत्येक स्थपति या वास्तुशास्त्री के लिए परम आवश्यक है।

जब हम साक्षी भाव से कार्य को करते हैं तो कार्य के परिणाम का बुरा फल हमें नहीं मिलता, कार्य हम पर अपना प्रभाव नहीं डालते, इसे ही निष्काम कर्म कहते हैं। इस अवस्था में रहने वाले व्यक्ति पर वास्तु अपना दुष्प्रभाव नहीं डालती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न-३.६ तुरीयातीत अवस्था को पर्यायवाची नाम बताएँ।

प्रश्न-३.७ साक्षी को इंग्लिश में क्या कहते हैं?

प्रश्न- ३.८ एक वास्तुशास्त्री की चेतना का स्तर कम से कम तुरीयातीत तक क्यों होना चाहिए?

प्रश्न-३.९ तुरीयातीत स्तर पर रहने वालों व्यक्तियों को वास्तु का कितने प्रतिशत दुष्प्रभाव होता है?

३.१० भगवत चेतना

यह अवस्था द्वैत की अवस्था है, इससे सारा जगत दो के रूप में दिखता है। परम ऊर्जा, जो अलग-अलग रूप में व्यक्त होती है, भासती है।

३.११ ब्राह्मी चेतना

(अद्वैत अवस्था) इस अवस्था में सारा भेद मिट जाता है तथा अह्म का भी नाश हो जाता है एवं सब कुछ निर्गुण निराकार हो जाता है।

३.१२ सारांश

इस प्रकार से, यह चेतना के सात (चार) स्तर होते हैं। पहले तीन स्तर का अनुभव, प्रत्येक व्यक्ति, अपने जीवन में करता है। वास्तुशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र के नियम, इन तीन अवस्था में रहने वाले, जीने वाले, व्यक्ति के जीवन पर ही लागू होते हैं, वास्तु इन्हें ही प्रभावित करती है।

इन तीन अवस्थाओं के अलावा, अन्य अवस्था (तुरीय, तुरीयातीत आदि) में रहने वाले व्यक्ति पर, वास्तु के दुष्प्रभाव का असर नहीं होता हैं।

इसके अतिरिक्त, एक अच्छा वास्तुशास्त्री बनने के लिए भी, चेतना के पाँचवें स्तर तक जाना परम आवश्यक है, क्योंकि आगे जब स्थपति (वास्तुशास्त्री) के लक्षण या गुण देखेंगे, तब देखेंगे कि स्थपति या वास्तुशास्त्री प्रज्ञावान होना चाहिए, उसकी चेतना का स्तर ऊपर उठा हुआ होना चाहिए।

त्इस प्रकार से वास्तुशास्त्र के साथ जब हम चेतना विज्ञान को भी जोड़ देते हैं तो दोनों मिलकर स्थापत्य वेद कहलाते हैं।

तुरीय तथा उसके ऊपर की अवस्था प्राप्त करने के लिए, ध्यान, साधना की आवश्यकता होती है। हमारे पाठ्यक्रम का यह एक महत्वपूर्ण व विशेष अंग है। हमारी ऐसी दृढ़ मान्यता है कि वास्तुशास्त्र को अच्छी तरह समझने के लिए, ध्यान सीखना व करना आवश्यक है। हमारे यहाँ ध्यान सीखने की व्यवस्था उपलब्ध है, आप इसका लाभ ले सकते हैं।

एक ही व्यक्ति की परिस्थिति अनुसार दो मनःस्थिति का विश्लेषण करते हैं-

आइए एक उदाहरण के द्वारा देखने का प्रयास करें। एक व्यक्ति तथा उसका एक पाँच वर्ष का पुत्र है। वह व्यक्ति अपने स्थान पर बैठा है, किसी कार्य से उसका पाँच वर्षीय पुत्र, उसके कमरे में प्रवेश करना चाहता है। बरसात के दिन हैं तथा पुत्र के जूते कीचड़ में हैं, जैसे ही पुत्र कमरे में प्रवेश करने का प्रयास करता है उसका पिता अपने पास में रखी हुई लकड़ी, पुत्र की ओर फेंकता है, (पुत्र को दण्डित करने के लिए) क्योंकि उसने पूर्व में भी पुत्र को कीचड़ के पैर लेकर प्रवेश करने को मना किया है।

एक भिन्न स्थिति में भी पिता अपने कमरे में बैठा है, पुत्र कीचड़ के जूते पहने प्रवेश करता है। पिता उसे प्यार से डराते हुए हाथ दिखाकर यह दर्शाता है कि यदि उसने प्रवेश किया तो वह उसे प्यार से गाल पर मारेगा। पुत्र प्रवेश करता है, पिता के अत्यन्त निकट पहुँच जाता है, पिता उसे प्यार से (मारने का नाटक करते हुए) गाल पर हल्की-हल्की चपत लगाते हुए कहता है कि अब तुमने यह सारा ऑफिस गंदा कर दिया है, अब इसे कौन साफ करेंगा? अब तुम्हारी मम्मी ही आकर ऑफिस के फ्लोर को साफ करेंगी।

जब हम घटना का विश्लेषण करते हैं तो देखते हैं कि क्रिया (कीचड़ के जूते पहने हुए प्रवेश करना) एक ही होने पर भी प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न होती है। ऐसा व्यक्ति की भिन्न मनःस्थिति पर निर्भर करता है। पहली स्थिति में जब व्यक्ति किसी अन्य कारण से क्रोध या आवेश या गुस्से में है, उस समय उसने अपनी प्रतिक्रिया बच्चे की ओर लकड़ी फेंककर व्यक्त की, जबकि दूसरी परिस्थिति में जब व्यक्ति का मन शान्त, स्थिर व प्रसन्न है, उसने अपनी प्रतिक्रिया, बालक को प्यार से उसकी गलती का अहसास कराते हुए अभिव्यक्त की।

इस प्रकार से हमने देखा कि क्रिया एक होने पर भी उसकी प्रतिक्रिया भिन्न हो सकती है। यह हमारे मन की स्थिति पर निर्भर करता है कि हमारी प्रतिक्रिया क्या व किस प्रकार की हो। हमारे जगत की सारी क्रियाएँ (प्रतिक्रियाएँ) हमारे अन्तर्मन से संचालित होती है। जगत की बाहरी क्रियाएँ, हमारे अन्तर्मन की स्थिति को दर्शाती हैं, अभिव्यक्त करती हैं।

आइए एक उदाहरण से और अधिक स्पष्ट करें-माना कि किसी पीढ़ी में यह ज्ञान लुप्त हो जाएं कि जड़ में पानी डालने पर पत्ते हरे होते हैं। किसी दिन कोई

पत्ता पीला पड़े तो व्यक्ति उस पत्ते पर पानी डालेगा, दूसरे दिन अन्य पत्ता पीला दिखाई देने पर उसमें पानी डालेगा। इसी प्रकार पत्तों के पीले पड़ने पर वह उन पत्तों पर पानी डालेगा, स्प्रे करेगा। धीरे-धीरे वह देखेगा कि अन्दर तक पानी की पहुँच न होने के कारण पूरा पौधा सूख गया।

ठीक इसी प्रकार आज जगत की क्रिया करते समय हम कहते हैं कि कार्य में मन नहीं लग रहा या किसी अमुक व्यक्ति से आपका व्यवहार ठीक नहीं है या आप कार्य को ठीक प्रकार से नहीं कर पा रहें है आदि-आदि। यह सब हमारे मन की अन्तर्स्थिति को दर्शाता है कि मन शान्त नहीं है, अशान्त है, अस्थिर है, खिन्न है आदि। जिस प्रकार जड़ में पानी डालने से पूरा पौधा हरा-भरा रहता है उसी प्रकार मन के शान्त, स्थिर व प्रसन्न रहने पर जगत की सारी क्रियाएँ ठीक प्रकार से होती हैं। पत्तों को पानी से सींचकर हम वृक्ष को हराभरा नहीं रख सकते हैं। पेड़ को हरा-भरा रखने के लिए उसकी जड़ में ही पानी डालना होगा अर्थात मन को स्थिर व शान्त रखना आवश्यक है, न कि जगत की एक-एक क्रिया (बाहरी व्यवहार) को सुधारने का प्रयास करना। हमारा सारा व्यवहार मन के प्रसन्न रहने पर प्रसन्नता का ही होता है।

ध्यान, भगवत-गीता के अध्ययन व विश्लेषण से मन शान्त व स्थिर रहता है।

वृक्ष की जड़ में पानी डालने से पत्ते हरे होते हैं। उसी प्रकार व्यक्ति का मन शान्त, स्थिर व प्रसन्न हो तो बाहरी जगत की क्रियाएँ भली प्रकार करता है।

इकाई ४

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ

इकाई ४

वास्तुशास्त्र

४.० उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

- वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों के नाम बता पाएँगे।
- वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में बताए गए विषय के बारे में कह पाएँगे।

४.१ वास्तुशास्त्र

बाह्य सज्जा का अर्थ, व्यक्ति के शरीर से बाहर का क्षेत्र, बाहर का क्षेत्र कैसा हो, इसका वर्णन वास्तुशास्त्र में मिलता है। अतः इसे बाह्य सज्जा कहा है।

वास्तुशास्त्र का वर्णन विभिन्न ग्रन्थों में मिलता है। इसका उल्लेख ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में मिलता है। इस इकाई में हम वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

४.२ प्रमुख ग्रन्थ के नाम व विषय वस्तु

ग्रन्थ

४.२१ अग्नि पुराण

अग्नि पुराण में अनेक विषयों (ज्योतिष, वास्तु, तन्त्र, व्याकरण आदि) का समावेश है। अग्निपुराण वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ के रूप में मान्य है। इसमें भूमि चयन, परीक्षण, भवन निर्माण, मुहूर्त्त, वास्तुशान्ति, दुर्ग निर्माण, प्रतिमा निर्माण, प्रतिमा की प्रतिष्ठा, अभिषेक विधि आदि विषयों को बताया गया है।

४.२२ मत्स्य पुराण

अग्नि पुराण के समान ही मत्स्य पुराण में अनेक विषयों का समावेश है एवं वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ रूप में मान्यता प्राप्त है। इसमें गृहारम्भ मुहूर्त्त, विधि, स्तम्भ, एकशाला से चतुःशाल गृह, गृह दोष, द्वार स्थापना, लिंग व पीठ मान स्थापना आदि विषयों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

४.२३ मानसार

मानसार ऋषि के द्वारा रचित ग्रन्थ मानसार है। इस ग्रन्थ में ७० अध्यायों में ५२७५ श्लोक हैं। वास्तुशास्त्र के सभी पक्षों का विस्तार से वर्णन है। यह पूरा ग्रन्थ वास्तुशास्त्र को ही समर्पित है। इसमें भूमि चयन, परीक्षण एवं अधिग्रहण, भूमि पर देवताओं की स्थापना, हवन, नगर रचना, बहुमंजिला भवन, देवताओं के मन्दिर, गृह की योजना, गृहप्रवेश, प्रतिमा निर्माण एवं स्थापना विधि का वर्णन है।

४.२४ मयमत

मयमुनि द्वारा रचित मयमत वास्तुशास्त्र का अत्यन्त ही प्रचलित व प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में कुल ३६ अध्याय हैं। मानसार के समान ही इसमें भूमि चयन, परीक्षण, नींव भरने की विधि, नगर व ग्राम की रचना, मंदिर स्थापना, गृह बनाने की विधि का वर्णन है।

४.२५ समरांगण सूत्रधार

धार के राजा भोज द्वारा १० वीं शताब्दी में इस ग्रन्थ की रचना की गई। यह वास्तुशास्त्र का अत्यन्त ही लोकप्रिय ग्रन्थ है। इसमें कुल ८४ अध्याय तथा ८००० से अधिक श्लोक हैं। विद्वान टी. गणपति शास्त्री जी ने इसका सम्पादन किया, गायकवाड़ ओरियन्टल लाइब्रेरी, बड़ौदा ने इसका प्रकाशन किया। सन् १९५६ से ६० के मध्य विद्वान डॉ. द्विजनाथ शुक्ल ने इसका अनुवाद किया, यह लखनऊ, देहली से प्रकाशित है।

इस ग्रन्थ में भवन, राजमहल, मंदिर, नगर आदि के निर्माण का वर्णन मिलता है। प्रतिमा बनाने की विधि, रंग बनाने, लेप बनाना व लगाना आदि का वर्णन विस्तार से किया गया है। इस ग्रन्थ के यन्त्र अध्याय में विमान का वर्णन मिलता है।

४.२६ विश्वकर्म वास्तुशास्त्र

इस ग्रन्थ में ८४ अध्यायों में ३००० से अधिक श्लोक हैं। वास्तुशास्त्र के सभी पक्षों को विस्तार से बताया गया है। विभिन्न प्रकार के नगर नियोजन तथा विभिन्न कक्षों के नियोजन को विशेष रुप से कहा गया है।

४.२७ विश्वकर्म प्रकाश

विश्वकर्मा जी द्वारा रचित इस वास्तुशास्त्र में १३ अध्याय हैं, १३७४ श्लोक हैं। इसमें भूमि चयन, परीक्षण, मुहूर्त्त, गृह-पदार्थ, पदविन्यास, शिलान्यास, मंदिर निर्माण, जलाशय, दुर्ग निर्माण विषय को विस्तार से कहा है। शल्य ज्ञान, शल्य दोष दूर करने की विधि, गृह दोषों का वर्णन किया गया है।

४.२८ मनुष्यालय चन्द्रिका

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है मनुष्य के घरों के बारे में विवरण देने वाला यह ग्रन्थ है। इसमें ७ अध्यायों में लगभग २४० श्लोक हैं। गृहों के निर्माण की विधि को विस्तार से बताया गया है।

४.२९ राजवल्लभ

१४ अध्यायों के ४६० श्लोक में वास्तुविद्या के सभी पक्षों को बताया गया है। आयादि, द्वार, मुहूर्त्त, जलाशय आदि विषय पर प्रकाश डाला गया।

४.३० इसके अतिरिक्त वास्तुशास्त्र के अन्य ग्रन्थ इस प्रकार हैं-

काश्यप शिल्प (काश्यप ऋषि)

कामिकागम

कारणागम

प्रासाद-लक्षण

बृहत-संहिता

भविष्य-पुराण

रूपमण्डन (सूत्रधार मण्डन)
लिंग-पुराण
वायु-पुराण
वास्तु-मंजरी
वास्तु-मण्डन
वास्तु-विद्या
शिल्प प्रकाश
शिल्प रत्नाकार
वास्तु-सार
वास्तु-सारणी
विश्वकर्मिय-शिल्पशास्त्र
शुक्र-नीति
शुल्व-सूत्र
प्रासाद तिलक

बोध प्रश्न

प्रश्न ४.१ वास्तुशास्त्र के किन्हीं पाँच ग्रन्थों के नाम बताएँ।

प्रश्न ४.२ मानसार ग्रन्थ में कितने अध्याय हैं।

उत्तरः- ७०

प्रश्न ४.३ मयमत ग्रन्थ की रचना किसने की।

उत्तरः मयमुनि

प्रश्न ४.४ मयमत ग्रन्थ में कितने अध्याय हैं।

उत्तरः- ३६

प्रश्न ४.५ समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ की रचना किसने की तथा इस ग्रन्थ में कितने अध्याय हैं।

उत्तरः- राजा भोज, ८४ अध्याय

प्रश्न ४.६ मनुष्यालय चन्द्रिका विशेष रुप से किस प्रकार के निर्माण से संबंधित है- गृह मन्दिर नगर किला

उत्तरः- गृह

प्रश्न ४.७ सूत्रधार मण्डन द्वारा रचित किन्हीं दो वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ के नाम बताएँ।

उत्तरः- राजवल्लभ, प्रासाद मण्डन

४.१३ सारांश

इस प्रकार से हमने वास्तुशास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों के नाम का अध्ययन किया तथा उनकी विषय वस्तु के बारे में जानकारी प्राप्त की।

४.१४ उपयोगी पुस्तकें

मानसार भाग २ डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य (डी. के. पब्लिशर, देहली)

इकाई ५

मयमत ग्रन्थ का परिचय

इकाई ५

मयमत ग्रन्थ का परिचय

५.० उद्देश्य

इस पाठ में हम यह देखने का प्रयास करेंगे कि वास्तुशास्त्र में किन-किन विषयों का अध्ययन किया जाता है। वास्तुशास्त्र के अध्ययन का क्षेत्र कितना बड़ा है।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप बता पाएँगे कि-

कौन कौन से विषय वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आते हैं।

५.१ मयमत ग्रन्थ की विषय वस्तु

वास्तुशास्त्र के सारे ग्रन्थों की विषय को देखना तो प्रायोगिक रूप से बहुत ही बड़ा विषय हो जाएगा अतः यहाँ एक ग्रन्थ मयमत में वर्णित विषय को देखेंगे, अन्य किताबों में, ग्रन्थों में इन्हीं विषयों को कम या अधिक मात्रा (संक्षेप या विस्तार) में बताया गया है।

आइए मयमत ग्रन्थ को देखें इसका पहला अध्याय का नाम संग्रह अध्याय है।

अध्याय (१) संग्रह-अध्याय

इस अध्याय में, पूरे मयमत ग्रन्थ के, सभी अध्याय के नाम (विषय वस्तु) का वर्णन हैकि इस ग्रन्थ में कौन कौन से विषय हैं।

अध्याय (२) वस्तुप्रकार

इस अध्याय में, वास्तु की परिभाषा तथा भूमि, भवन, यान (वाहन) व शयन (फर्नीचर आदि) वास्तु है यह बताया गया है।

अध्याय (३) भूमि की परीक्षा

इस अध्याय में भूमि का चयन करने की विधि का वर्णन है।

अध्याय (४) भूमि का अधिग्रहण

भूमि का चयन करने के बाद, उस भूमि का परीक्षण व अधिग्रहण, किस प्रकार करना चाहिए, इस अध्याय में बताया गया है।

अध्याय (५) माप के उपकरण

इस अध्याय में, नापने की इकाई (अंगुल, हस्त, दण्ड) तथा नापने के उपकरण (रस्सी आदि) का वर्णन किया गया है। इसमें वास्तुशास्त्री के लक्षण भी बताए गए हैं।

अध्याय (६) दिशा ज्ञान की विधि

इस अध्याय में शंकु (कोनिकल शेप) की सहायता से, सूर्य के द्वारा, किस प्रकार दिशा का ज्ञान किया जाता है, यह बताया गया है।

अध्याय (७) पदविन्यास

इस अध्याय में वास्तु के अनुसार, जिस भूमि पर नगर, ग्राम, मन्दिर या घर बनाना हो, उसे किस प्रकार से, अलग-अलग भागों में विभाजित करना, यह बताया है। सामान्यतः उसे ८-८ याने ६४ या ९-९ अर्थात ८१ बराबर भागों में विभाजित करते हैं। प्रत्येक भाग पद कहलाता है। प्रत्येक पद एक प्रकार की ऊर्जा को प्रदर्शित करता है, जिसे पद देवता के नाम से जानते हैं।

इस प्रकार पद के अनुसार, देवता का न्यास (स्थापना, प्लानिंग) करना, पद विन्यास कहलाता है। किस पद-देवता के पद में, नगर, मन्दिर या घर के किस कक्ष को बनवाना चाहिए, यह वास्तुशास्त्र में बताए, अनुसार करते हें।

इसके अलावा पूरे क्षेत्र पर, एक वास्तुपुरूष की कल्पना की गई है। यह वास्तुपुरूष एक पुरूष के समान होता है। इसके शरीर पर कुछ नाजुक या संवेदनशील बिन्दु या स्थान होते हैं, उस स्थान पर, दीवार या स्तम्भ नहीं बनवाना चाहिए।

अध्याय (८) बलिकर्म

वास्तु के पद-देवता के लिए, हवन किया जाता है। जिसे बलि कर्म विधि कहते हैं।

अध्याय (९) ग्राम विन्यास

वास्तुशास्त्र के अनुसार, ग्राम को किस प्रकार बसाया जाए, यह वर्णन इस अध्याय

में मिलता है। ग्राम को व्यक्ति के व्यवसाय के अनुसार, उसके कार्य क्षेत्र के अनुसार, बसाया जाता है। ग्राम का नियोजन, आकार, आबादी आदि के अनुसार भी किया जाता है। उचित आकार निकालने (ज्ञात करने) के लिए सूत्र (आयादि -सूत्र) (फार्मूले) का वर्णन इस अध्याय में किया गया है।

अध्याय (१०) नगर नियोजन

नगर, ग्राम से अधिक बड़े होते हैं, उनके नियोजन का वर्णन, इस अध्याय में किया गया है। नगर नियोजन कई प्रकार से किया जाता है।

अध्याय (११) भवन की लंबाई, चौड़ाई व ऊँचाई आदि का निर्धारण

वास्तु के अनुसार, भवन की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई का निर्धारण, उसके उपयोग के अनुसार किया जाता है, यह बताया गया है।

अध्याय (१२) गर्भविन्यास

भवन की नींव में, विधि-विधान व पूजा के साथ, सकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थ, भवन के उपयोग के अनुसार, रखे जाते हैं, इसका विस्तार से वर्णन इस अध्याय में हैं।

अध्याय (१३) उपपीठ के लक्षण

भवन का सबसे निचला भाग, जो भूमि के ऊपर दिखता है, उपपीठ कहलाता है।

शिखा (चोटी, finial)

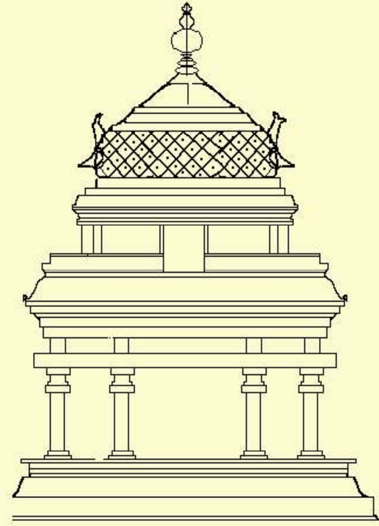
अध्याय १८ शिर (सिर, roof)

कन्धर (गल, गला, कण्ठ, attic)

अध्याय १६ प्रस्तर (मंच, entablature)

अध्याय १५ स्तम्भ

अध्याय १३, १४ उपपीठ व अधिष्ठान



यह भवन के अधिष्ठान (बेस) के नीचे होता है। भवन के उपयोग के अनुसार, उपपीठ की (पर) नक्काशी (मोल्डिंग) होती है। मन्दिरों में, उसमें स्थापित देवता के आधार पर, उपपीठ की मोल्डिंग होती हैं।

अध्याय (१४) अधिष्ठान

अधिष्ठान (बेस) भवन का आधार होता है। इस पर, पूरा भवन टिका होता है। सामान्यतः इसकी ऊँचाई, स्तम्भ की ऊँचाई के अनुपात में होती है। इस पर, कई प्रकार की नक्काशी (मोल्ड़ीग) होती है, जिसके अनुसार इसके अलग-अलग नाम होते है।

अध्याय (१५) स्तम्भ

स्तम्भ, छत तथा भवन के ऊपर के हिस्से का भार (वजन) नीचे स्थानान्तरित (ट्रांसफर) करता है। इसे पिलर या खम्बा भी कहते हैं। इसका क्रास-सेक्शन गोल, चौकोर, षटकोण या अष्टकोणिय हो सकता है। उपयोग के अनुसार इसका क्रास-सेक्शन होता है, उसी के अनुसार, इसका नाम भी होता है।

अध्याय (१६) प्रस्तर

स्तम्भ के ऊपर, प्रस्तर होता है। इसे बोधिका, पोतिका या केपीटल ब्रेकेट कहते हैं। इस पर कई प्रकार के चित्र उकेर कर, इसे सुन्दर बनाया जाता है। (नक्काशी की जाती है।)

अध्याय (१७) सन्धिकर्म

इस अध्याय में लकड़ियों को जोड़ने की विधि का वर्णन है।

अध्याय (१८) भवन के अंग

इस अध्याय में भवन के ऊपरी अंग शिखर, कलश आदि का वर्णन मिलता है।

इनका आकार गोल, चौकोर, अष्टकोण आदि बताया गया है। ईंट आदि को जोड़ने के पदार्थ का वर्णन है, लेप तैयार करने की विधि है। घर की आन्तरिक सज्जा में किन चित्रों का उपयोग करना शुभ होता है, किन चित्रों का उपयोग निषेध है यह बताया है। भवन के अंग को सकारात्मक ऊर्जा से चार्ज करने के विधान भी बताए गए हैं।

अध्याय (१९) से अध्याय २१ तक १ मंजिल से १२ मंजिल तक, भवन बनाने की विधि का वर्णन है।

अध्याय (२२) परकोटा

इस अध्याय में भवन के आसपास, चारों ओर का परकोटा किस प्रकार हो, इसका वर्णन है।

अध्याय (२३) परिवार विधान

मन्दिर निर्माण करते समय, देवता के परिवार के जो अन्य सदस्य होते हैं, उनका स्थान भी बनाया जाता है। किस सदस्य का स्थान, किस दिशा में हो, यह इस अध्याय में बताया गया है।

अध्याय (२४) गोपुर (प्रवेश द्वार)

मन्दिर, किले, नगर आदि का जो प्रवेश द्वार होता है, वह विशेष प्रकार का होता है। यह, एक से सात मंजिल तक हो सकता है। इसे किस प्रकार बनाना, इसके विधान इस अध्याय में बताए गए हैं।

अध्याय (२५) मण्डप

अलग-अलग कार्य जैसे विवाह, उत्सव, उपनयन आदि के लिए अलग-अलग प्रकार के मण्डप बनाए जाते हैं।

अध्याय २६ व २७ में एक शाला (एक दिशा में कमरे) से चार शाला (चारों दिशाओं में कमरे) का वर्णन है। कौन सा कक्ष, किस दिशा में बनवाना चाहिए, यह वर्णन है। कमरों की प्लानिंग के बारे में विस्तार से बताया है। स्नान कक्ष कैसा हो, सभा कक्ष, मन्त्रणा कक्ष किस प्रकार हो, यह बताया है।

अध्याय (२८) गृह-प्रवेश

घर या भवन पूरा होने के बाद, विधि-पूर्वक प्रवेश विधि का वर्णन इस अध्याय में है।

अध्याय (२९) राजमहल विधान

इस अध्याय में, राजा या आज के समय में नगर का मुखिया या प्रधान व्यक्ति के घर की प्लानिंग का वर्णन किया गया है।

अध्याय (३०) द्वार विधान

द्वार या दरवाजा, नगर, ग्राम, मन्दिर या घर का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस स्थान से ऊर्जा, घर आदि में प्रवेश करती है। इसके स्थान (पद), आकार आदि को, विस्तार से, इस अध्याय में बताया है।

अध्याय (३१) वाहन

एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए, वाहन का प्रयोग किया जाता है। पहले के समय में रथ, पालकी आदि का प्रयोग करते थे। इसके बारे में, इस अध्याय में बताया गया है। आज के समय में भी हम इसका उपयोग, वाहन की आन्तरिक व बाहरी सज्जा के लिए कर सकते हैं।

अध्याय (३२) शय्या व आसन

पलंग तथा कुर्सी आदि के बारे में इस अध्याय में बताया गया है।

अध्याय (३३) लिंग लक्षण

लिंग के बारे में, उसकी निर्माण विधि के बारे में, इस अध्याय में बताया है।

अध्याय (३४) पीठ लक्षण

प्रतिमा या लिंग जिस पर स्थापित करते हैं, उसे पीठ कहते हैं, यह देवता या लिंग का आसन होता है। इसका वर्णन इस अध्याय में किया गया है।

अध्याय (३५) जीर्णोद्धार विधि

इस अध्याय में जीर्णोद्धार के बारे में बताया है।

अध्याय (३६) प्रतिमा लक्षण

इस अध्याय में, विभिन्न प्रतिमाओं के लक्षण बताए हैं। इसके साथ ही किस प्रतिमा की पूजा करने से क्या लाभ होता है, यह भी बताया है।

५.३ सारांश

इस प्रकार से हमने एक ग्रन्थ, मयमत, की विषय वस्तु को देखा।

इसमें हमने यह जाना कि वास्तुशास्त्र का कितना क्षेत्र है, इसमें हमने भूमि चयन, परीक्षण, वास्तु पदविन्यास, हवन, नगर-नियोजन, गर्भविन्यास, निर्माण के प्रकार, बहुमंजिला भवन, परकोटा, प्रतिमा विज्ञान आदि को बताया गया है।

वास्तुशास्त्र के अन्य ग्रन्थ मानसार, समरांगण-सूत्रधार, काश्यप शिल्प आदि में इन्हीं विषयों को अलग-अलग रीति से बताया गया है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न-५.१ मयमत ग्रन्थ में वर्णित किन्हीं पाँच विषयों के नाम बताएँ।

प्रश्न ५.२ अधिष्ठान किसे कहते हैं।

प्रश्न ५.३ उपपीठ किसे कहते हैं।

प्रश्न ५.४ स्तम्भ शब्द से आप क्या समझते हो।

प्रश्न५.५ प्रस्तर कहाँ होता है-

(अ) स्तम्भ के नीचे (आ) स्तम्भ के ऊपर

प्रश्न ५.६ गोपुर किसे कहते हैं।

प्रश्न ५.७ प्रतिमा निर्माण वास्तुविद्या का अभिन्न अंग हैं

(अ) हाँ (आ) नहीं

प्रश्न ५.८ वास्तुशास्त्र में आन्तरिक सज्जा का वर्णन मिलता है।

(अ) हाँ (आ) नहीं

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ में विभिन्न विषयों के बारे में बताया है, उनमें से प्लानिंग भी एक है। सभी अध्यायों का महत्व है। उदाहरण के लिए यदि हम पूरा एक अध्याय भी प्लानिंग को दे दें तो प्लानिंग का महत्व १/३६ भाग होगा, वेटएज अधिक भी दे दें तो १/१८ भाग होगा। इसका तात्पर्य यह है कि वास्तु का अर्थ केवल प्लानिंग या प्लेसमेन्ट नहीं है।

५.४ उपयोगी पुस्तकें

मानसार भाग-२ डॉ. प्रसन्न कुमार आचार्य (डी. के. पब्लिशर देहली)

इकाई ६

वास्तुशास्त्री के लक्षण एवं महत्व

६.० उद्देश्य

हम इस इकाई में इस बात का अध्ययन करेंगे कि एक वास्तुशास्त्री में क्या-क्या गुण होना चाहिए तथा इन गुणों की आवश्यकता क्यों है एवं महत्व क्या है?

६.१ वास्तुशास्त्री के लक्षण का महत्व

वास्तुशास्त्र (स्थापत्य वेद) में जो निपुण व्यक्ति है, वह **स्थपति** कहलाता है। वास्तुशास्त्री (स्थपति) के क्या-क्या लक्षण होते हैं, इसका अध्ययन हम आगे की इकाई में करेंगे। सबसे पहले वास्तुशास्त्री के लक्षण के महत्व का, प्रतिपादन करते हैं।

समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ, जिसे राजा भोज ने ११वीं शताब्दी में रचा, के अनुसार वास्तुशास्त्री के चार प्रमुख लक्षण बताए गए हैं जो इस प्रकार हैं-

स्थापत्यमुच्यतऽस्माभिरिदानीं प्रक्रमागतम्।
ज्ञातेन येन ज्ञायन्ते स्थपतीनां गुणागुणाः।।१।।
शास्त्रं कर्म तथा प्रज्ञा शीलं च क्रिययान्वितम्।
लक्ष्यलक्षणयुक्तार्थशास्त्रष्टो नरो भवेत्।।२।। अध्याय ४४ स. सू.

अब क्रमप्राप्त स्थापत्य का मैं वर्णन करता हूँ जिसके जानने से स्थपतियों के गुण-दोषों का ज्ञान होता हैं। यह स्थापत्य चार प्रकार का होता हैं शास्त्र, कर्म, प्रज्ञा तथा

क्रियान्वितशील अर्थात् आचरण। इस प्रकार लक्ष्य (उदाहरण) तथा लक्षण अर्थात् शास्त्र में निष्ठा रखने वाला नर ही स्थपति होता हैं।

शास्त्र, कर्म, प्रज्ञा व शील।

अब शास्त्र क्या है? कर्म क्या है? प्रज्ञा क्या है? शील क्या है? इसे हम क्रमशः देखने का प्रयास करेंगे।

हमारे यहाँ शास्त्रों में एक परम्परा सी जान पड़ती है कि सबसे खास बात, सबसे पहले कही गई। फिर चाहे वो श्रीमद्भगवत गीता हो या पतञ्जलि योगसूत्र।

गीता जैसे ही शुरू होती है सबसे पहले भगवान ने दूसरे ही अध्याय में अर्जुन को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया।

पतञ्जलि योगसूत्र में भी, प्रारम्भ में ही कह दिया, योगश्चचित्तवृत्ति निरोधः।

अर्थात चित्त की वृत्तियों का रुक जाना ही योग है।

इस प्रकार सबसे खास बात, सबसे पहले कह देने की परम्परा, हमारे यहाँ, शास्त्रों में है।

वास्तु के लगभग सभी ग्रन्थों में, चाहे वो मानसार हो या मयमत हो या मनुष्यालय चन्द्रिका हो, सबसे पहले, लगभग पहले या दूसरे अध्याय में स्थपति के लक्षण बताए गए हैं, अतः इनकी महत्ता प्रतिपादित होती हैं।

इससे यह सिद्ध होता है कि एक वास्तुशास्त्री को शास्त्र में बताए गए गुणों से युक्त होना ही चाहिए।

६.३ उदाहरण

आइए एक उदाहरण के द्वारा वास्तुशास्त्री के लक्षण के महत्व को देखने का प्रयास करते हैं-

कहानी- राजा भोज के समय में, एक चरवाह (पशु चराने वाला) बालक, मिट्टी के टीले पर बैठ कर, अपने मित्र इत्यादि लोगों के झगड़े,

वाद-विवाद बड़ी कुशलता से, उचित निर्णय देकर सुलझाता था तथा उन्हें सन्तुष्ट करता था। उसकी ख्याति, जब राजा भोज के कानों तक पहुँची तब उन्होंने, विद्वानों के परामर्श के अनुसार, टीले की खुदाई करवाई। उसमें से एक सिंहासन निकला, जिसे विद्वानों ने, राजा विक्रमादित्य का सिंहासन बताया।

राजा जब भी, ज्योतिषियों के बताए गए, शुभ मुहूर्त में, पवित्र होकर, उस सिंहासन पर बैठने जाता तो उसमें जड़ी ३२ पुतलियों में से एक पुतली निकल कर, राजा विक्रमादित्य के किसी गुण (शौर्य, दान इत्यादि) के बारे में, कोई एक कहानी सुनाती तथा कहानी की समाप्ति पर, राजा भोज से पूछती कि, क्या आप में यह गुण हैं। यदि हैं तो आप इस सिंहासन पर बैठ सकते हैं अन्यथा जब आप इस गुण से सम्पन्न हों, तब बैठें।

इस प्रकार, प्रत्येक बार जब भी राजा, उस सिंहासन पर बैठने जाता, एक पुतली निकल कर, राजा भोज को, राजा विक्रमादित्य की एक कहानी सुनाती। राजा, अपने आप को सिंहासन पर बैठने के उपयुक्त नहीं पाता और लौट जाता। इस प्रकार आखरी ३२ वीं पुतली, कहानी सुनाकर, उस सिंहासन को लेकर उड़ जाती है।

इस कहानी के माध्यम से, हम यह बताना चाहते हैं कि जो भी व्यक्ति, स्थपति (वास्तुशास्त्री) की कुर्सी पर बैठना चाहता हो, उसमें शास्त्र में बताए गए चार गुण (शास्त्र, कर्म, प्रज्ञा व शील) होना चाहिए। ये गुण वास्तव में उस कुर्सी (वास्तुशास्त्री) के चार पैर हैं। कुर्सी पर, बैठने के पहले पूछते हैं कि, क्या आपने शास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर लिया ? क्या आप कर्म में निपुण है? क्या आप प्रज्ञावान है? क्या आप शीलवान है? यदि यह सब गुण आप में है तो स्वागत है अन्यथा पहले, ये चार गुण प्राप्त करें, तब स्थपति (वास्तुशास्त्र) की कुर्सी पर आपका स्वागत है। अस्तु

बोध प्रश्न-

प्रश्न-६.१ क्या एक वास्तुशास्त्री गुणवान होना चाहिए?

प्रश्न ६.२ एक वास्तुशास्त्री में क्या-क्या गुण होना चाहिए?

उत्तर-वह शास्त्र का ज्ञाता, शास्त्र में लिखे कर्म को करने में निपुण, प्रज्ञावान तथा

शीलवान होना चाहिए।

६.५ वास्तु शास्त्री के लक्षण

. शास्त्र . कर्म. प्रज्ञा. शील

६.६ शास्त्रीय-ज्ञान का महत्व

शास्त्र के विषय में अध्ययन करने से पूर्व हम शास्त्रीय ज्ञान की महत्ता प्रतिपादन करते हैं। एक स्थपति को वास्तुशास्त्र से संबंधित सभी शास्त्रों का ज्ञान होना चाहिए।

मनुष्यालय चन्द्रिका ग्रन्थ में स्थपति के बारे में इस प्रकार कहा है-

सर्वशास्त्रविहितक्रियापटुः सर्वदावहितमानसः शुचिः।
धार्मिको विगतमत्सरादिको यः स च स्थपतिरस्तु सत्यवाक्।।१२।।१।।

स्थपति वह है जो सभी शास्त्रों में कही गई तकनीकों के क्रियान्वयन में निपुण हो। जिसका मन पवित्र व शान्त हो, जो धार्मिक हो, जो मत्सर आदि दोषों से रहित हो तथा जो केवल सत्य वचन ही कहता हो, ऐसा व्यक्ति स्थपति कहलाता है।

(मत्सर आदि ७ दोष-ईर्ष्या, लालच, दरिद्र, दुष्ट, घमंड, शत्रुता रखने वाला, क्रोध)

मयमत ग्रन्थ में भी स्थपति के लक्षण इस प्रकार बताएं हैं- (अध्याय ५ श्लोक १३ से २४ तक)

स्थपतिः सूत्रग्राही च वर्धकिस्तक्षकस्तथा।
प्रसिद्धदेशसङ्कीर्णजातियोऽभीष्टलक्षणः।।१४।।
स्थपतिः स्थापनार्हः स्यात् सर्वशास्त्र विशारदः।
न हीनाङ्गोऽतिरिक्ताङ्गो धार्मिकस्तु दयापरः।।१५।।

स्थपति प्रसिद्ध देश व संकीर्ण जाति का एवं अभीष्ट लक्षण से युक्त होना चाहिए। वह स्थापना का कार्य भली प्रकार जानता हो एवं सभी शास्त्रों में विशारद (निपुण) हो। वह हीन अंग या अधिक अंग का नहीं हो। वह धार्मिक तथा दयालु हो। वह अभिजात वर्ण (कुलीन परिवार) का हो। वह लालच (लोभ), ईर्ष्या (द्वेष) एवं कमज़ोरी से रहित हो।

अमात्सर्योऽनसूयश्चातन्द्रितस्त्वभिजातवान्। गणितज्ञः पुराणज्ञः सत्यवादी जितेन्द्रियः।।१६।।

वह गणित में निपुण हो, पुराण का ज्ञाता हो, सत्यवादी एवं जितेंद्रिय हो।

चित्रज्ञः सर्वदेशज्ञश्चान्नदश्चाप्यलुब्धकः। अरोगीचाप्रामादी च सप्तव्यसनवर्जितः।।१७।।

वह चित्रकारी में निपुण हो, सभी देशों की जानकारी रखता हो। वह दानी हो तथा लोभी न हो। वह रोगी व प्रमादी न हो तथा सात व्यसन से रहित हो।

(टिप्पणी- सप्त व्यसन- मृगया, द्यूत, दिवा-स्वपन, परिवाद, स्त्रीयाह, मद, तर्क-वितर्क)

सुनामा दृढबुद्धिश्च वास्तुविद्याब्धिपारगः। स्थपतेस्तस्य शिष्यो वा सूत्रग्राही सुतोऽथवा।।१८।।
स्थपत्याज्ञानुसारी च सर्वकर्मविशारदः।

वह विख्यात तथा दृढ़ बुद्धि हो एवं वास्तुशास्त्र के समुद्र को लाँघ चुका हो, पार कर चुका हो। उसकी महत्ता को समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ में इस प्रकार प्रतिपादित किया है-

वास्तुद्वारक्षणान् भूयः सर्वान् जानाति शास्त्रतः।
यस्तु शास्त्रमविज्ञाय प्रयोक्ता स्थपतिर्भवेत्।।६।।४४।।
हन्तव्यः स स्वयं राज्ञा मृत्युवद् राजहिंसकः।
मिथ्याज्ञानादहङ्कारी शास्त्रे चैवाकृतश्रमः।।७।।४४।।
अकालमृत्युर्लोकस्य विचरेद् वसुधातले।
यस्तु केवलशास्त्रज्ञः कर्मस्वपरिनिष्ठितः।।८।।४४।।

भावार्थ-(जो व्यक्ति, शास्त्र को न जानकर, कार्य-संचालक स्थपति का ढोंग करता है, उस राजहिंसक कुस्थपति को, राजा स्वयं, मृत्यु के समान उसे मारे, क्योंकि ऐसा स्थपति, मिथ्या-ज्ञान के कारण अहंकारी है और जिसने शास्त्र में परिश्रम भी नहीं किया है, वह संसार में, लोगों की अकारण मृत्यु के समान विचरण करता है।)

भवन का आकार, विभिन्न अनुपात, द्वार आदि की स्थिति, किस कमरे का निर्माण किस दिशा में करना, पलंग का सिरहाना किस दिशा में होना चाहिए, आदि अनेकानेक बातों का निर्धारण शास्त्र के आधार पर ही किया जाता है, अतः शास्त्रीय ज्ञान होना आवश्यक है।

अब मानो कि शास्त्रीय ज्ञान न हो तो क्या हो? उदाहरण के लिए जैसे वास्तु में एक स्थान (पूर्व दिशा व आग्नेय कोण के बीच में, अन्तरिक्ष का पद) होता है उस स्थान पर द्वार बनवाए तो चोरी होने का भय बना रहता है। अब यदि इस बात की जानकारी उस वास्तुशास्त्री को नहीं होगी जिसने शास्त्र का अध्ययन नहीं किया है। (वैसे तो शास्त्र का अध्ययन न करने वाला वास्तुशास्त्री नहीं कहलाता है) तो क्या होगा? जो व्यक्ति ऐसे

घर में निवास करेगा उसके यहाँ चोरी होने की आशंका बनी रहेगी, अब इस बात का दुष्परिणाम उसे भोगना होगा। अतः कहा है कि वास्तुशास्त्री को शास्त्र का ज्ञान होना आवश्यक है।

चलो एक उदाहरण और देख लें, वास्तु में एक स्थान होता है जिसे मर्म स्थान कहते हैं (इसे ज्ञात करने की विधि आगे बताएंगे) उस स्थान पर स्तम्भ (कॉलम) या दीवार नहीं होना चाहिए, यदि हो तो गृहस्वामी का अनिष्ट (हृदय रोग, मृत्यु आदि) होने की आशंका बनी रहती है। इस प्रकार शास्त्र की जानकारी वास्तुशास्त्री को न होने से दोष का परिणाम गृहस्वामी को भोगना पड़ता है। इसीलिए कहा है कि ऐसे वास्तुशास्त्री को राजा मृत्युदण्ड दे।

अतः एक वास्तुशास्त्री को शास्त्र का ज्ञान होना परम आवश्यक है।

बोध प्रश्न

प्रश्न ६.३ एक वास्तुशास्त्री में कौन-कौन से गुण होना चाहिए।

प्रश्न ६.४ क्यों एक वास्तुशास्त्री को शास्त्र का ज्ञान होना चाहिए।

प्रश्न ६.५ समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ के अनुसार ऐसे स्थपति को जिसे शास्त्र का ज्ञान न हो राजा क्या दण्ड दें-

(१) १ हजार स्वर्ण मुद्रा (२) कारावास (३) मृत्युदण्ड

प्रश्न ६.६ मानसार ग्रन्थ के अनुसार स्थपति या वास्तुशास्त्री के क्या लक्षण या गुण हैं।

प्रश्न ६.७ मनुष्यालय चन्द्रिका ग्रन्थ के अनुसार स्थपति कैसा हो।

६.७ कर्म की महत्ता

स मुह्यति क्रियाकाले दृष्टवा भीरुरिवाहवम्। केवलं कर्म यो वेत्ति शास्त्रार्थं नाधिगच्छति।।९।। स. सू. ४४

जो स्थपति, केवल शास्त्र को जानता है, परन्तु कार्य करने में दक्ष नहीं है, एक्सपर्ट नहीं है, वह कार्य के समय युद्ध को देखकर डरपोक के समान मोह को प्राप्त होता है।

इसके विपरीत जो केवल कार्य को करना जानता है, परन्तु कैसे करना,

यह नहीं जानता, वह नेत्रहीन (अन्धे) के समान है।

बचपन में, एक कहानी अधिकांश लोगों ने पढ़ी होगी, एक नेत्रहीन और एक पंगु (लंगड़ा,चलने में असमर्थ) दो दोस्त थे। दोनों मेले में जाना चाहते थे। पंगु, उस नेत्रहीन के कन्धे पर बैठ गया तथा वह नेत्रहीन को रास्ता बताता रहा, इस प्रकार दोनों मेले में पहुँच गए।

यहाँ पंगु, बिना क्रियाज्ञान के केवल शास्त्रीय ज्ञान को ले सकते हैं। केवल शास्त्रीय ज्ञान, केवल थ्योरी का ज्ञान पर्याप्त नहीं है, उसका प्रेक्टीकल पक्ष, उसका प्रायोगिक पक्ष भी स्पष्ट होना चाहिए व कार्य करते आना चाहिए।

नेत्रहीन, कर्म को कहा है। जिसे केवल कर्म करना आता है परन्तु क्या कार्य करना, कैसे करना, उसे नहीं आता है। अतः शास्त्र व कर्म दोनों का ज्ञान आवश्यक है।

एक स्थपति को प्लाट का ले ऑउट बनाना, ड्राईंग बनाना, मर्म निकालना, उस पर गुनिया करना, दिशा ज्ञात करना, पदविन्यास करना, कमरों आदि का आयादि निकालना, कॉलम की स्थिति, उन्हें प्लेस करना, दीवार आदि की चुनाई, आदि अनेकानेक कार्य प्रेक्टीकल करना, उसे स्वयं आना चाहिए।

जैसे कार, साईकल या स्कूटर को चलाने के सिद्धान्त (किताबी ज्ञान या पुस्तकिय ज्ञान) का ज्ञान होना एक बात है परन्तु उसको व्यवहारिक रूप में चलाना एकदम अलग है।

अतः एक स्थपति को, शास्त्र के ज्ञान के साथ-साथ, उसका प्रायोगिक पक्ष अर्थात कार्य का क्रियान्वयन करना व कराना, आना चाहिए।

बोध प्रश्न

प्रश्न ६.८ स्थपति तो स्वयं भवन नहीं बनाता वह तो कारीगर बनाता है, फिर क्यों एक स्थपति को कार्य करना आना (प्रायोगिक कर्म का ज्ञान) चाहिए।

६.७ प्रज्ञा

शास्त्र तथा कर्म का भली प्रकार ज्ञान होने के अलावा, स्थपति की प्रज्ञा

(विशेष प्रकार की चेतना, बुद्धि) अत्यन्त विकसित होना चाहिए। उसे प्रज्ञावान होना चाहिए। इस प्रज्ञा को विकसित करने में, ध्यान की जो अपनी विधि है, वह विशेष रूप से सहायक होती है। अतः प्रतिदिन, दोनों समय, नियमित रूप से ध्यान करना परम आवश्यक है।

यह जो वास्तु का विषय है, अत्यन्त ही कठिन पहेली के समान है, अनेक अर्थ को रखने वाला है, गुप्त रहस्यों को अपने अन्दर समेटे है तथा बहुत विस्तारित है, ऐसे विशाल सागर को केवल प्रज्ञा के सहारे ही पार किया जा सकता है।

यह जो वास्तुशास्त्र है, इसमें अनेक रहस्य हैं, इसमें बहुत सी बातों को सांकेतिक रुप से कहा है, कई बार विषय को समझ कर उसे परिस्थिति के अनुसार कार्य रुप में परिणित करना होता है, बदलना होता है। यह सारा कार्य चेतना शुद्ध होने पर ही किया जा सकता है, अतः कहा है कि वास्तुशास्त्री चेतनावान हो, प्रज्ञावान हो।

वोध प्रश्न

प्रश्न- ६.९ क्यों एक वास्तुशास्त्री को प्रज्ञावान होना चाहिए।

६.८ शील

समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ में कहा है कि-

शास्त्र का भी ज्ञान हो, कार्य करने में भी कुशल हो तथा प्रज्ञावान होने पर यदि स्थपति शील से रहित है, उसका आचरण पवित्र नहीं हो तो, वह पूजनीय नहीं हो सकता है। एक स्थपति को, आचरण से भी पवित्र होना चाहिए। इस संसार में शीलवान स्थपति ही पूजनीय होता है। उसका दर्शन ही शुभ माना गया है।

स्थपति का मन, न केवल पवित्र होना चाहिए, बल्कि यह बात उसके आचरण एवं व्यवहार से भी दिखना चाहिए।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि-

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि।।२०।।
यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरूते लोकस्तदनुवर्तते।।२१।।

इस प्रकार जनकादि ज्ञानीजन भी आसक्ति रहित कर्म द्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त हुए हैं, इसलिए तथा लोकसंग्रह को देखता हुआ तू (अर्जुन) भी कर्म करने के ही योग्य है। क्योंकि श्रेष्ठ पुरूष, जो-जो आचरण करता है, अन्य पुरूष भी उसके अनुसार ही आचरण करते है। वह पुरूष जो कुछ प्रमाण कर देता है, लोग भी उसी के अनुसार आचरण करते हैं।

जैसा आचरण, व्यवहार बड़े लोग करते हैं, उनके भक्त, अनुयायी, शिष्य भी वैसा ही व्यवहार करते हैं। अतः स्थपति शीलवान होना चाहिए, अस्तु।

बोध प्रश्न

प्रश्न ६.१०	स्थपति को चार गुणों के नाम बताए।
प्रश्न ६.११	क्यों एक स्थपति शीलवान होना चाहिए?

६.९ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि स्थपति को शास्त्रों का ज्ञान होना चाहिए। वह कर्म करने में कुशल होना चाहिए। उसकी चेतना कम से कम साक्षी के स्तर (इसके बारे में जानकारी हेतु स्थापत्यवेद की विशेषता इकाई देखें) की होना आवश्यक है तथा वह आचरण से पवित्र होना चाहिए।

६.१० उपयोगी पुस्तकें

समरांगण सूत्रधार-अध्याय ४४ स्थपति लक्षण

मनुष्यालय चन्द्रिका-अध्याय १-भू परीक्षा व परिग्रह

मयमत अध्याय-५-मानोपकरण

मानसार अध्याय-२ शिल्पी लक्षण एवं माप के उपकरण

इकाई ७

शास्त्र

७.० उद्देश्य

इस इकाई में यह बताया गया है कि एक वास्तुशास्त्री को किन-किन शास्त्रों का ज्ञान होना चाहिए।

७.१ समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ के आधार पर

- ज्योतिष शास्त्र
- सामुद्रिक शास्त्र (शरीर आकृति विज्ञान)
- छन्दशास्त्र
- शरीर रचना विज्ञान (सिरा ज्ञान)
- धातुकर्म (विभिन्न धातु), यन्त्र विधि
- गणित, रसायन शास्त्र, चित्र, शिल्प आदि।

७.२ आज के संदर्भ में, इन्हीं विषयों को अलग-अलग करके देखें, तो निम्न विषयों को पाते हैं-

१ ज्योतिष

- मुहूर्त
- कुण्डली देखना व मिलान (महादशा का प्रभाव)
- अंगविद्या
- शकुन-अपशकुन

२ गणित

- क्षेत्रफल निकालना,
- ज्यामिति (ज्योमेट्री)
- नक्शा बनाना,
- नक्शे का अध्ययन करना

३ आन्तरिक सज्जा

- दृश्य का प्रभाव
- विषय वस्तु का प्रभाव
- रंग का प्रभाव

४ निघण्टु विद्या (आगे बताएँगे)

५ कर्मकाण्ड (पूजा)

- शिलान्यास
- स्तम्भ स्थापन
- गर्भविन्यास
- गृह-प्रवेश
- वास्तु पूजा

६ मनोविज्ञान

देखने व सुनने का प्रभाव (आडियो वीडियो का प्रभाव)

७ आयुर्वेद

८ वातावरण (परिवेश, सोसाईटी का प्रभाव)

९ शल्य ज्ञान (भूमि में स्थित दोष का पता लगाना)

१० भूगर्भ शास्त्र (भूमि के गुण)

११ यन्त्र (उपकरण आदि)

१२ रत्न विज्ञान

१३ मिट्टी

१४ जड़

१५ गन्ध विज्ञान

१६ लकड़ी

१७ वनस्पति शास्त्र

१८ नक्षत्र

१९ मन्त्र शास्त्र

२० स्वर शास्त्र

२१ अक्षर शास्त्र

२२ संस्कृत, छन्द शास्त्र

२३ योग

२४ ध्यान

२५ योगासन

२६ प्राणायाम

२७ आहार चिकित्सा

२८ प्राकृतिक चिकित्सा

यहाँ हम संक्षेप में कुछ विषयों के महत्व को देखेंगे।

हमारा उद्देश्य यहाँ यह बताना है कि जितने अधिक से अधिक विषय का ज्ञान एक वास्तुशास्त्री को होगा, उतनी ही सूक्ष्मता से वह प्रॉब्लम को देख पाएगा, तथा उतना ही सटीकता उसका हल निकालेगा।

सारी विद्याओं की जानकारी आपको हो जाए, यह आवश्यक नहीं है।

जैसे आज के समय में भी कोई व्यक्ति डॉक्टर बनना चाहता है तो उसे कई बातों का ज्ञान कराया जाता है। उदाहरण के लिए शरीर रचना विज्ञान (एनाटॉमी), शरीर क्रिया विज्ञान (फिजियोलाजी), उसके बाद मेडिसन, सर्जरी, आँख, नाक, कान व गला, प्रसूति आदि। अब सभी विद्याओं में वो डॉक्टर निष्णात होगा, एक्सपर्ट होगा यह आवश्यक नहीं है, परन्तु संबंधित विषयों की जितनी अधिक जानकारी होगी उतना वह सटीक इलाज कर पाएगा।

मेकेनिकल इंजीनियरींग के ही क्षेत्र को लें तो व्यक्ति को फिजिक्स, केमेस्ट्री, ड्राईंग, सर्वे, इलेक्ट्रिकल, मेकेनिकल, मशीन डिजाइन, हीट इंजीनियरींग, थर्मोडाईनामिक्स, मेनेजमेन्ट आदि विषयों का ज्ञान कराया जाता है, इसका मतलब (अर्थ) यह नहीं है कि वह सब विषयों में निष्णात हो गया। परन्तु मेकेनिकल इंजीनियरींग के संबंधित जितने भी विषय हैं, उनका ज्ञान तो अवश्य कराया जाता है। ठीक उसी प्रकार वास्तु के संबंधित सारे विषयों का ज्ञान इस पाठ्यक्रम में कराया जाता है, यह जानकारी प्रारम्भिक स्तर की है, इसमें विशेषज्ञता हासिल (अर्जित) की जा सकती है।

जैसे कोई व्यक्ति बीमार हो, रोगी हो, तो वह एक डॉक्टर के पास जाता है, डॉक्टर जैसा आहार-विहार, परहेज, उपचार बताता है, वैसा वह करता है और ठीक हो जाता है। अब यह आवश्यक नहीं है कि वह डॉक्टर के पास जाए या वैद्य के पास जाए या होम्योपैथी के चिकित्सक के पास जाए या एक्यूप्रेशर वाले व्यक्ति के पास जाए। वह जिस भी निपुण चिकित्सक के पास जाएगा वह ठीक हो जाएगा।

ठीक इसी प्रकार वास्तुशोधन में वास्तुशास्त्री, गृहनिर्माण रचना, ज्योतिष, आदि विधाओं का ज्ञान होने से दोष ढूढने, उसका पता लगाने तथा दोष दूर करने में विशेष सहायता मिलती है।

हम एक-एक विषय के साथ उसके महत्व का प्रतिपादन करेंगे।

बोध प्रश्न

प्रश्न- वास्तु एवं उससे संबंधित अन्य विषयों के नाम बताएँ।

प्रश्न- क्या वास्तु व ज्योतिष शास्त्र का आपस में संबंध है?

प्रश्न- क्या एक वास्तुशास्त्री को ड्राईंग का ज्ञान होना चाहिए?

प्रश्न क्या एक वास्तुशास्त्री को वनस्पति विज्ञान की जानकारी होना चाहिए?

७.४ उपयोगी पुस्तकें

पाठ्यक्रम इकाई ४ बाह्य सज्जा

समरांगण सूत्रधार अध्याय-३ प्रश्न वर्ग

समरांगण सूत्रधार अध्याय -४४ स्थपति लक्षण

इकाई ८

ज्योतिष शास्त्र

८.० उद्देश्य

इस इकाई में हम वास्तुशास्त्र व ज्योतिष शास्त्र में संबंध स्थापित करेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगें कि एक वास्तुशास्त्री को ज्योतिष विद्या का ज्ञान क्यों आवश्यक है।

८.१ ज्योतिष शास्त्र का सामान्य परिचय

किसी व्यक्ति के जीवन पर ग्रह-नक्षत्र के पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन हम ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत करते हैं।

ज्योति शब्द का अर्थ है रश्मि या किरणें। सूर्य आदि विभिन्न ग्रह तथा अश्विन आदि विभिन्न नक्षत्र से आने वाली किरणें के प्रभाव का अध्ययन ज्योतिष शास्त्र का विषय है।

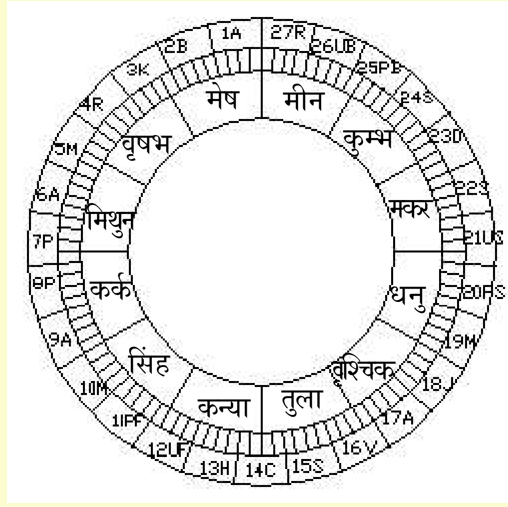
पराशर उवाच

श्रृणु विप्र! प्रवक्ष्यामि भग्रहाणां परिस्थितिम्।
आकाशे यानि दृश्यन्ते ज्योतिर्बिम्बान्यनेकशः।।२।।
तेषु नक्षत्रसंज्ञानि ग्रहसंज्ञानि कानिचित्।
तानि नक्षत्रनामानि स्थिरस्थानानि यानि वै।।३।।

पराशर जी ने कहा- हे विप्र, अब मैं आकाश में नक्षत्र व ग्रहों की स्थिति का वर्णन करता हूँ, उसे सुनो। आकाश में जितने ज्योति बिम्ब दिखाई देते हैं, उनमें से कुछ को नक्षत्र तथा कुछ को ग्रह कहते हैं।

जिनसे स्थान सदैव स्थिर रहते हैं अर्थात जिन तारों में परस्पर अन्तर (दूरी) सदैव समान रहता है, वे नक्षत्र कहलाते हैं।

व्याख्या-पराशर जी सबसे पहले आकाश में स्थिर तारों का वर्णन करते हुए कहते हैं तो आकाश में जो चमकते हुए पिण्ड दिखाई देते हैं, वे तारे कहलाते हैं। इन चमकते हुए पिण्ड को भी जब हम ध्यान से देखते हैं तो पाते हैं कि कुछ पिण्ड ऐसे हैं जिनकी परस्पर दूरी बदलती रहती है या चलते हुए दिखाई देते हैं, जबकि अन्य पिण्ड की परस्पर दूरी समान रहती है। इस प्रकार जो चलते हैं, वे ग्रह तथा जिनकी परस्पर दूरी बदलती नहीं है वे नक्षत्र कहलाते हैं।



(१) अश्विनी
(२) भरणी
(३) कृतिका
(४) रोहिणी
(५) मृगशिरा
(६) आर्द्रा
(७) पुनर्वसु
(८) पुष्य
(९) आश्लेषा
(१०) मघा
(११) पूर्वा फाल्गुनी
(१२) उत्तरा फाल्गुनी
(१३) हस्त
(१४) चित्रा
(१५) स्वाती
(१६) विशाखा
(१७) अनुराधा
(१८) ज्येष्ठा
(१९) मूल
(२०) पूर्वाषाढा
(२१) उत्तराषाढा
(२२) श्रवण
(२३) धनिष्ठा
(२४) शतभिषा
(२५) पूर्वाभाद्रपद
(२६) उत्तराभाद्रपद
(२७) रेवती

गच्छन्तो भानि गृह्णन्ति सततं ये तु ते ग्रहाः।
भाचक्रस्य नगाश्व्यंशा अश्विन्यादिसमाह्वयाः।।४।।
तद्द्वादशविभागास्तु तुल्या मेषादिसंज्ञकाः।
प्रसिद्धा राशयः सन्ति ग्रहास्त्वर्कादिसंज्ञकाः।।५।।

जो ज्योति पिण्ड आकाश में सदैव परिभ्रमण करते हुए उक्त तारों या नक्षत्रों को पार करते हुए चलते हैं वे ग्रह कहलाते हैं।

भचक्र को सत्ताईस बराबर भागों में विभाजित करने पर अश्विन आदि सत्ताईस नक्षत्रों के स्थान हैं।

इसी भचक्र को बारह बराबर भागों मे विभाजित करने पर मेष आदि बारह राशियाँ प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त सूर्य आदि ग्रह प्रसिद्ध हैं।

ग्रह (सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि) होते हैं। ये ग्रह विभिन्न नक्षत्र या राशियों में घूमते हैं। जब कोई ग्रह किसी राशि में होता है तो उसका अपना एक प्रभाव होता है। वही ग्रह जब दूसरी राशि में जाता है तो उसका अलग प्रभाव होता है।

जैसे उदाहरण के लिए जब सूर्य मेष राशि में होता है तो खूब गर्मी होती है, ज्येष्ठ का महीना होता है। वही सूर्य जब धनु राशि में होता है तो खूब ठण्ड होती है। अर्थात उसी सूर्य का प्रभाव मेष राशि में बहुत तेज है, वहीं धनु राशि में कमजोर है। इसी प्रकार सभी ग्रह अलग-अलग राशि में अपना अलग-अलग प्रभाव देते हैं।

योग सत्ताईस होते हैं :-

(१) विष्कम्भ	(१०) गण्ड	(१९) परिघ
(२) प्रीति	(११) वृद्धि	(२०) शिव
(३) आयुष्मान	(१२) ध्रुव	(२१) सिद्ध
(४) सौभाग्य	(१३) व्याघात	(२२)साध्य
(५) शोभन	(१४) हर्षण	(२३) शुभ
(६) अतिगण्ड	(१५) वज्र	(२४) शुक्ल
(७) सुकर्मा	(१६) सिद्धि	(२५) ब्रह्म
(८) धृति	(१७) व्यतीपात	(२६) ऐन्द्र
(९) शूल	(१८) वरीयान्	(२७) वैधृति

इन्हीं ग्रहों-नक्षत्रों के स्थाई प्रभाव तथा किसी व्यक्ति के जीवन पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन करते हैं तो कहते हैं कि यह ज्योतिष शास्त्र का विषय है।

८.२ शुभ मुहूर्त जानने हेतु

किर्सी भी निर्माण कार्य को प्रारम्भ करने के लिए हम सबसे पहले यह देखते हैं कि उसका मुहूर्त क्या है। वह कौन सा शुभ समय है जब हम निर्माण कार्य प्रारम्भ करें।

कार्य प्रारम्भ करने का समय मुहूर्त (शुभ समय-शुभ मुहूर्त) कहलाता है।

मुहूर्त ज्ञात करने के लिए सामान्य रूप से पंचांग का प्रयोग करते हैं। पंचांग का अर्थ है पाँच अंग। किसी भी मुहूर्त को जानने के लिए पाँच बातें देखते हैं-तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण।

तिथि-हिन्दी महीनों के दिन को तिथि कहते हैं। ये १५ होती है। पड़वा, दूज, तीज, चतुर्थी, पंचमी, छठ आदि। हिन्दी महीने के दो पक्ष (१५-१५ दिन) होते हैं। एक शुक्ल पक्ष तथा दूसरा कृष्ण पक्ष।

तिथियों में चतुर्थी, नवमी व चौदस तिथि को गृहारम्भ, गृह-प्रवेश आदि कार्य नहीं करते हैं।

वार सात होते हैं-रवि, सोम, मंगल आदि। इनमें रविवार, मंगलवार तथा शनिवार को गृहराम्भ व गृहप्रवेश नहीं करते हैं।

नक्षत्र- नक्षत्र २७ होते हैं। अलग-अलग नक्षत्र अलग-अलग कार्य के लिए शुभ होते हैं। जैसे पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र आदि गृह आरंभ के लिए शुभ हैं।

मुहूर्त के बारे में विस्तार से जानकारी गृहारम्भ अध्याय में बताएँगे।

इस प्रकार से हमने देखा कि एक वास्तुशास्त्री को शुभ मुहूर्त ज्ञात करने के लिए ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान होना चाहिए।

व्याख्या- शास्त्र में नक्षत्रों की विभिन्न संज्ञा बताई गई है। ये संज्ञा नक्षत्रों के गुणों को व्यक्त या प्रदर्शित करती है। जैसा कार्य करना हो, उसके अनुसार नक्षत्र का चयन कर, उस नक्षत्र में जब चन्द्रमा हो तब उस कार्य को करना चाहिए। जैसे खुदाई सम्बन्धी कार्य अधोमुख नक्षत्र तथा गृहप्रवेश संबंधी कार्य स्थिर संज्ञा वाले नक्षत्र में करना

चाहिए।

अधोमुख- तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद) आश्लेषा, भरणी, कृत्तिका, मूल, मघा और विशाखा इन नक्षत्रों को अधोमुख जाने।

तिर्यक मुख -चित्रा, अश्विनी, अनुराधा, पुनर्वसु, स्वाती, ज्येष्ठा, मृगशीर्ष, रेवती और हस्त ये नौ नक्षत्र तिर्यगमुख (पार्श्वमुख) जानें।

ऊर्ध्व मुख- पुष्य, तीनों उत्तरा (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपद), आर्द्रा, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी व शतभिषा नक्षत्रों को ऊर्ध्वमुख (ऊपर मुख वाला) जानें।

चर-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती,

स्थिर-उत्तराषाढा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी

मृदु-मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती

तीक्ष्ण (दारुण)-ज्येष्ठा, आर्द्रा, मूल, आश्लेषा,

क्रूर-भरणी, मघा, पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद

मिश्र-विशाखा, कृत्तिका

बोध प्रश्न

प्रश्न ज्योतिष शास्त्र किसे कहते हैं?

प्रश्न नक्षत्र कितने होते हैं?

प्रश्न ग्रह कितने होते हैं?

प्रश्न पंचांग के कितने अंग होते हैं, उनके नाम बताएँ?

प्रश्न क्या मंगलवार गृहारम्भ के लिए शुभ है?

प्रश्न क्या चतुर्थी तिथि को गृहारम्भ करना चाहिए?

८.३ दोष ज्ञान एवं निवारण हेतु

पहले एक उदाहरण देखें उसके पश्चात अपनी बात कहेंगे। माना कि एक रोगी है उसका सिर दुखता है, अब वह डॉक्टर के पास आया। सिर दुखने के कई कारण हो सकते हैं जैसे नींद का पूरा न होना, टेन्सन होना, शोरगुल भरे वातावरण में कार्य करना, पेट में गड़बड़ होना या आँखों से ठीक प्रकार न दिखना (चश्मे का नम्बर होना या नम्बर बदलना)। अब यदि मानो कि आँखों से ठीक प्रकार से दिखाई न देने के कारण सिर दुखता हो तो हम अन्य कोई भी उपचार या इलाज कर लें स्थाई रूप से सिरदर्द ठीक नहीं होगा। अतः एक डॉक्टर के लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि सिरदर्द का कारण क्या है?

ठीक इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति एक वास्तुशास्त्री के पास परामर्श (सलाह) लेने के लिए आए तो सबसे पहले वास्तुशास्त्री के लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि उस व्यक्ति के जीवन में समस्या क्यों है? समस्या का कारण क्या है?

समस्या का कारण क्या वह घर है जिसमें व्यक्ति निवास करता है या कार्यालय या उसकी पत्रिका (ज्योतिष) का दोष है?

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में ग्रहों का अलग-अलग समय आता है, जिसे उस ग्रह की महादशा के नाम से जानते हैं।अब माना कि व्यक्ति के जीवन में कोई समस्या है और वह अपने पास आया। उस समय उसे सूर्य की महादशा चल रही है। अब यदि जन्म के समय उसका सूर्य कमजोर था, जिसके कारण उस व्यक्ति के जीवन में इस सूर्य के समय में समस्या आई तो क्या करना। उस व्यक्ति को सूर्य की ऊर्जा बढ़ाने के उपाय बताना, जैसे रविवार का व्रत, रत्न धारण (पहले देखकर कि माणिक्य उसके लिए शुभ है या नहीं), लाल पुष्प से पूजन करना, सूर्य देव को जल चढ़ाना आदि। इस प्रकार से ज्योतिष शास्त्र के बताए अनुसार हम उसका उपचार कर सकते हैं। इस तरह वास्तुशास्त्र के अनुसार तोड़फोड़ भी नहीं करना होगी तथा शुभ परिणाम भी कम समय में प्राप्त कर पाएँगे।

गोचर में (वर्तमान समय में जब कोई व्यक्ति अपने पास आया तब), ग्रह दूषित होने पर जो अशुभ परिणाम होता है, वह गोचर में ठीक होने पर शुभ हो जाता है। या यूँ कहें कि वह अशुभ परिणाम, उतने ही समय के लिए होता है। यह मालूम हो तो भवन नहीं तोड़ना पड़ेगा (वास्तु के सुधार की आवश्यकता नहीं रहेगी।)।

जैसे किसी को त्वचा (चमड़ी) से संबंधित कोई रोग हुआ। त्वचा जिस ग्रह से संबंधित है, वह है बुध। अब आकाश में बुध की स्थिति ठीक न हो या उस व्यक्ति की जन्म पत्रिका में बुध अशुभ हो, ऐसे समय जब उसके जीवन में बुध का अन्तराल (समय) आता है, उस समय, उसे त्वचा संबंधी रोग हो सकता है, उस समय उपाय, ज्योतिष के अनुसार करना उचित होता है।

८.४ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान के आधार पर मुहूर्त तथा दोष के कारण व निराकरण का पता लगाया जाता है। ज्योतिष से संबंधित समस्या होने पर उसका निराकरण ज्योतिष शास्त्र के आधार पर ही करना उचित होगा तथा वास्तु के अनुसार तोड़फोड़ करने की आवश्यकता भी नहीं होगी तथा सुधार से परिणाम भी कम समय में प्राप्त किए जा सकेंगे।

बोध प्रश्न

प्रश्न क्या मुहूर्त के लिए ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान होना चाहिए ?

प्रश्न वास्तुशास्त्री को ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान होने के क्या-क्या लाभ हैं ?

इकाई ९

गणित

९.१ उद्देश्य

इस इकाई में वास्तुशास्त्र व गणित का संबंध देखेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप वास्तु में गणित का महत्व बता पाएँगे।

९.२ गणित

गणित से हमारा तात्पर्य रेखागणित, अंकगणित व बीजगणित से है।

गणित हमें निम्न गणना में सहायक होता है-

प्लाट या घर का क्षेत्रफल ज्ञात करना।

घर में लगने वाली ईंट, सीमेन्ट, सरिया आदि की संख्या पता लगाना।

निर्माण में कुल कितना खर्च होगा आदि-आदि

रेखागणित का उपयोग निम्न प्रकार से किया जाता है

- ड्राईंग बनाना व समझना
- पद विन्यास करना।
-मर्म स्थान ज्ञात करना आदि।
- आयादि के लिए

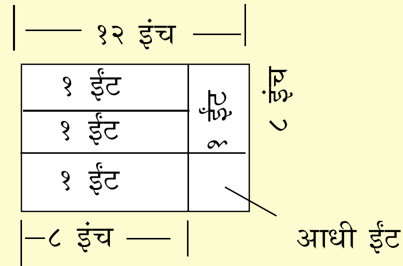
९.३ अंक गणित

उदाहरण -१

मान लें कि घर बनवाने का खर्च ३५० रुपए प्रति वर्गफीट है तथा हमें प्लाट पर २० फीट चौड़ा तथा ४० फीट लम्बा निर्माण करना है तो क्या खर्च आएगा?

तो हमें क्षेत्रफल (लम्बाई गुणित चौड़ाई) ज्ञात करना होगा। तो निर्माण का क्षेत्र हुआ २० गुणित ४० बराबर ८०० वर्ग फीट।

एक वर्ग फीट बनवाने का खर्च ३५० रुपए है तो ८०० वर्गफीट का खर्च होगा- ३५० गुणित ८०० बराबर- २,८०,००० रुपए। दो लाख अस्सी हजार रुपए।



उदाहरण -२

इसी प्रकार माना कि एक ईंट की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई ८ इंच तथा ४ इंच व ४ इंच है तो १० फीट लम्बी तथा १० फीट ऊँची दीवार में कितनी ईंट लगेगी ?

हल-पहले दीवार का क्षेत्रफल निकाला- १० फीट गुणित १० फीट बराबर १०० वर्गफीट।

अब देखते हैं कि १ वर्गफीट में कितनी ईंट लगती है। (अभी सरल बनाने के लिए रेत व सीमेन्ट कितनी जगह लेगा यह गणना नहीं कर रहे हैं।)

चित्र देखें एक वर्गफीट में साढ़े चार ईंट लगती है।

तो १०० वर्गफीट में १०० गुणित ४.५ बराबर ४५० ईंट लगेगी।

इस प्रकार यदि १ ईंट की कीमत मालूम हो तो कुल ईंट की कीमत ज्ञात कर सकते हैं। (ईंट जो टूट-फूट होगी, उसका मार्जिन रखना होगा।)

९.४ पदविन्यास हेतु

किसी भी निर्माण कार्य को करने से पहले भूखण्ड (प्लाट) को विभिन्न भागों में विभाजित करते हैं। जिसे पद विन्यास कहते हैं, इसके लिए भी गणित का ज्ञान आवश्यक है। (विस्तृत विवरण हेतु पदविन्यास इकाई देखें)

९.५ आयादि हेतु

गृहस्वामी के शरीर के अनुपात में भवन का निर्माण किया जाता है, उसमें गणना करना होती है, इसलिए गणित का ज्ञान आवश्यक है। (इस हेतु आयादि इकाई देखें)

९.६ रेखागणित

ड्राईंग के लिए तथा ड्राईंग समझने के लिए रेखागणित का ज्ञान आवश्यक है।

जब कोई व्यक्ति परामर्श लेने आता है तथा अपने साथ एक इंजीनियरींग ड्राईंग भी लाया है तो हमें वह ड्राईंग समझ में आना चाहिए कि इस ड्राईंग में कहाँ दरवाजा बताया है? कहाँ रोशनदान है? पलंग आदि कहाँ हैं?

इसी प्रकार जब हम किसी व्यक्ति को प्लानिंग दें कि यह कमरा (जैसे शयन कक्ष) यहाँ बनवाओं तो वह हमें ड्राईंग पर ड्रा (खींच) कर देना होगी, जिससे उसके कारीगर (कार्य करने वाले व्यक्ति) समझ सकें। इस हेतु किसी ड्राफ्टस्मेन या अर्किटेक्ट या सिविल इंजीनियर या आन्तरिक सज्जा से प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

इसी प्रकार निर्माण में वर्गाकार, त्रिकोणाकार, आयताकार, गोल आकार देना होता है। इनका प्रयोग करना होता है। अतः रेखागणित का ज्ञान आवश्यक है।

बोध प्रश्न

प्रश्न- एक वास्तुशास्त्री को अंकगणित का ज्ञान क्यों होना चाहिए ?

प्रश्न- एक वास्तुशास्त्री को रेखागणित का ज्ञान क्यों होना चाहिए ?

९.७ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि एक वास्तुशास्त्री को अंकगणित, रेखा गणित तथा बीजगणित का ज्ञान होना चाहिए।

९.८ उपयोगी पुस्तकें

निम्न लिखित वैदिक ग्रन्थों में विस्तार से गणित का वर्णन किया गया है-

कात्यायन शुल्व सूत्र (रेखागणित)

बोधायन शुल्व सूत्र (रेखागणित)

मानव शुल्व सूत्र (रेखागणित)

आपस्तम्भ शुल्व सूत्र (रेखागणित)

लीलावती (अंकगणित)

वास्तुराजवल्लभ (वास्तुशास्त्र के इस ग्रन्थ में गणित से संबंधित एक अध्याय है।)

इकाई १०

भूगर्भ शास्त्र

१०.० उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगें कि-

भूमि के अन्दर स्थित पदार्थ का मानव जीवन पर क्या प्रभाव होता है?

१०.१ भूगर्भ विज्ञान

वास्तु विद्या में निपुण व्यक्ति के लिए, भूगर्भ विद्या अर्थात भूमि के अन्दर कौन कौन से पदार्थ हैं? इसकी जानकारी होना आवश्यक है। भूमि के अन्दर जो तत्व होते हैं, वह उस स्थान पर रहने वाले व्यक्ति, जीव व वनस्पति, सब पर अपना विशेष प्रभाव डालते हैं।

भूमि में स्थित पदार्थ एक विशेष प्रकार के विकिरण का उत्सर्जन करते हैं या सरल भाषा में कहें कि अलग-अलग पदार्थ से अलग-अलग प्रकार की किरणें निकलती है, उसका मानव जीवन पर अलग-अलग प्रभाव होता है।

भूमि के अन्दर गहराई से निकलने वाली किरणों को उपग्रह (सेटेलाईट) ग्रहण कर यह बताता है कि भूमि के अन्दर कौन सा पदार्थ है, लोहा या सोना या कोई अन्य? और तो और हम यह भी पता लगा सकते हैं कि भूमि में कितनी मात्रा में वह पदार्थ है।

अब इस बात का पता कैसे लगाया जाए कि भूमि में किस प्रकार का विकिरण है और क्या वह नुकसानदायक है?

स्वाभाविक रूप से उत्पन्न वनस्पति के माध्यम से भूमि, अपने गुणों को प्रकट करती है या व्यक्त करती है। एक सामान्य सा नियम प्रकृति में है कि सभी प्रकार की वनस्पतियाँ सभी स्थानों पर स्वाभाविक रूप से नहीं उगती है। जैसे, ऐसा कहा जाता है कि जहाँ पर खजूर के पेड़ बहुतायत में पाए जाते हैं, वहाँ भूमि के अन्दर कम गहराई पर ही अधिक जल पाया

जाता है। ठीक इसी प्रकार, जहाँ पृथ्वी में विकिरण निकलने वाले पदार्थ होते हैं, रेडियोएक्टिव तत्व होते हैं या अन्य कोई नकारात्मक क्षेत्र उपस्थित होता है तो विशेष प्रकार की वनस्पति ही स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती है एवं सामान्य वनस्पति में भी, कुछ विभिन्नता जैसे पत्ते-पत्तियों का विकृत हो जाना, फल का सामान्य रूप से छोटा या बड़ा हो जाना, आकार में परिवर्तन हो जाना, इत्यादि पाया जाता है।

यदि किसी भूमि में रेडियो-एक्टिव तत्व हैं तो उसमें से निकलने वाले विकिरण के प्रभाव के कारण, उस भूमि पर निवास करने वाले व्यक्ति, कई प्रकार की असाध्य बीमारियों से ग्रसित हो सकते हैं, जैसे केन्सर इत्यादि। कई स्थानों पर यह भी पाया गया है कि किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाले व्यक्ति, कोई एक विशेष प्रकार की बीमारी से अधिक ग्रसित पाए जाते हैं, जैसे गंजापन या कोई चर्म रोग इत्यादि। इसमें सबसे अधिक असर, भूमि से निकलने वाले विकिरण का है।

इसके अतिरिक्त यह भी संभव है कि किसी भूखण्ड या बने हुए हिस्से के किसी विशेष स्थान पर, नकारात्मक तत्व हो तो उसका वैसा ही प्रभाव उस स्थान पर रहने वाले व्यक्ति पर होता है। जैसे व्यक्ति के स्वभाव में चिड़चिड़ापन, नींद का पूरा न होना, डरावने सपने आना, इत्यादि का पाया जाना संभव है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न १- भूगर्भ शास्त्र किसे कहते हैं?

प्रश्न २- भूमि के अन्दर स्थित पदार्थ का मानव जीवन पर असर होता है या नहीं।

प्रश्न ३- किसी स्थान पर भूमि के अन्दर नकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थ का होना शुभ है या अशुभ?

प्रश्न ४- भूमि के अन्दर नकारात्मक पदार्थ होने पर उस स्थान पर घर बनाकर रहने से किस प्रकार की कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है (कौन-कौन रोग हो सकते हैं)?

१०.३ शल्य

वास्तुशास्त्र में भूमि के अन्दर स्थित नकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थों को **शल्य** कहा है।

शास्त्र में नकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थ जैसे बाल, हड्डी, कपाल, कोयला, राख, भूसी व लोहा **शल्य** कहलाते हैं। भूमि के अन्दर शल्य रहने से उस भूमि पर निवास करने वाले व्यक्तियों को रोग, चोरी, धनहानि तथा मृत्यु होने की आशंका बनी रहती है।

शास्त्र में शल्य ज्ञात करने की सरल विधियों का वर्णन किया गया है। बृहद संहिता, वास्तुसौख्यम् ग्रन्थ में शल्य ज्ञान की विधि का वर्णन मिलता है। विश्वकर्म प्रकाश ग्रन्थ में भी एक अध्याय (अध्याय १२) में शल्य ज्ञान तथा उस दोष को दूर करने के उपाय का वर्णन किया गया है।

शास्त्र में वर्णित विधियों के द्वारा हम न केवल प्लाट, बल्कि (वरन्) बने हुए घर में भी दोष का पता लगा सकते हैं। शल्य दोष कुछ विशेष स्थान जैसे मर्म आदि पर होने से अत्यधिक हानिकारक होते हैं। (मर्म-मानव शरीर के संवेदनशील (नाजुक) अंग के समान प्लाट या भूमि पर नाजुक बिन्दु)

इस प्रकार से हमने देखा कि वास्तुशास्त्री को शल्य का ज्ञान होना आवश्यक है। शल्य जानने की विधि का ज्ञान होने से वह दोष का पता लगा पाएँगा तथा उस दोष को दूर भी कर पाएगा।

बोध प्रश्न-

प्रश्न १ शल्य किसे कहते हैं?

प्रश्न २ कौन-कौन से पदार्थ भूमि के अन्दर रहना दोषकारक होते हैं?

प्रश्न ३ भूमि में शल्य रह जाने पर गृह में रहने वालों को कौन-कौन सी कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है?

प्रश्न ४ किन स्थानों पर शल्य अत्यधिक दोषकारक है?

१०.४ सारांश

भूमि के अन्दर स्थित पदार्थ उस स्थान पर निवास करने वाले व्यक्तियों पर गहरा प्रभाव डालते हैं। नकारात्मक पदार्थ होने पर निवास करने वाले व्यक्ति रोग आदि से ग्रस्थ रहते हैं। इस प्रकार शास्त्र में वर्णित विधि से दोष का पता लगा कर उसे दूर किया जा सकता है।

भूगर्भ से संबंधित एक शास्त्र है, जिसे उदार्गल (उदक-जल) कहते हैं। इसमें भूमि के अन्दर स्थित जल स्त्रोत का पता लगाया जाता है।

१०.५ उपयोगी पुस्तकें

बृहद संहिता

वास्तु सौख्यम्

विश्वकर्म प्रकाश अध्याय ५ व १२

राजवल्लभ

अग्नि पुराण

मत्स्य पुराण

इकाई ११

शरीर रचना विज्ञान

११.० उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य वास्तु तथा मनुष्य के बीच संबंध स्थापित करना है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगें -

कि घर के किस भाग में (किस दिशा में) दोष होने पर गृहस्वामी या घर में रहने वाले व्यक्तियों के शरीर का कौन सा अंग प्रभावित होता है।

११.१ मानव शरीर व वास्तुपुरुष

जिस प्रकार मानव शरीर के विभिन्न अंग होते हैं, उसी प्रकार भूमि (वास्तु) पर स्थित ऊर्जा को शास्त्रों में वास्तुपुरुष के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। मानव शरीर के समान ही भूमि पर भी एक पुरुष की आकृति में हाथ, पैर, सिर, नाक, कान, नाड़ी, वंश, सिरा आदि अंग-प्रत्यंग व उप-अंग होते हैं। इसे **वास्तुपुरुष** कहते हैं। इसका सिर ईशान (उत्तर-पूर्व) दिशा, पैर नैर्ऋत्य कोण (दक्षिण-पश्चिम दिशा) तथा कोहनी व घुटने वायव्य व आग्नेय कोण में होते हैं। यह अधोमुख होता है अर्थात इसका मुख नीचे की ओर होता है।

११.२ भूमि व व्यक्ति के प्रभावित अंग

भूमि की ऊर्जा तथा मनुष्य की ऊर्जा के बीच एक संबंध होता है। पूरे भवन की ऊर्जा सकारात्मक होने पर व्यक्ति प्रकृति का पूरा पोषण प्राप्त कर स्वस्थ रहता है। ऊर्जा दूषित होने पर रोग आदि से ग्रस्त हो सकता है।

जैसा हमने देखा कि वास्तुपुरुष का सिर ईशान कोण में होता है तो घर के ईशान भाग में दोष होने पर व्यक्ति के सिर संबंधित भाग में दोष उत्पन्न होता है या हो सकता है।

वास्तुपुरुष का दाहिना घुटना आग्नेय कोण में होता है, तो आग्नेय कोण में वास्तुशास्त्र के नियम के विरुद्ध निर्माण करने पर या दोष होने पर, सामान्य रूप से गृहस्वामी का दाहिना घुटना प्रभावित होता है।

इसी प्रकार घर का प्रत्येक भाग, व्यक्ति के शरीर के उसी भाग को प्रभावित करता है।

गहराई से विचार करने पर हम कह पाएँगे कि यदि किसी व्यक्ति के बाएँ हाथ में कोई रोग है तो उस घर् के पश्चिम-उत्तर भाग में कोई वास्तुदोष होगा।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ घर के नैर्ऋत्य कोण में दोष होने पर गृहस्वामी के किस अंग में दोष या रोग हो सकता है?

प्रश्न २ घर के पूर्व भाग में दोष होने पर गृहस्वामी के शरीर का कौन सा अंग प्रभावित होगा?

प्रश्न ३ गृहस्वामी के बाएँ हाथ में रोग होने पर वास्तु के किस भाग या दिशा में दोष हो सकता है?

११.३ वास्तुपुरुष व गृहस्वामी

जैसा की हमने देखा कि भूमि या भवन तथा गृहस्वामी की ऊर्जा के बीच में एक संबंध होता है। शास्त्र में, वास्तुपुरुष के शरीर में ४५ प्रकार की ऊर्जा बताई गई है। जिसे शास्त्र में वास्तुपुरुष के शरीर पर स्थित देवता के माध्यम से कहा गया है अर्थात वास्तुपुरुष के शरीर में ४५ देवता होते हैं। ये देवता अलग-अलग ऊर्जा को बताते हैं या व्यक्त करते हैं।

भूमि के जिस भाग में दोष होता है, भूमि या भवन के उस भाग की ऊर्जा प्रभावित या दूषित होती है, जिससे गृहस्वामी को वह ऊर्जा स्वस्थ रुप से नहीं मिल पाती है, जिससे उस अंग को पूरा पोषण नहीं मिल पाता है वह अंग सुचारु रुप से कार्य नहीं कर पाता है। ऊर्जा की अत्यधिक कमी होने पर वह अंग रोगग्रस्त हो जाता है।

सरल शब्दों में समझने के लिए एक उदाहरण देंगे कि कोई व्यक्ति के शरीर में विटामिन ए की कमी हो तो कौन से रोग होंगे? उसे वही रोग होंगे जो विटामिन ए की कमी से होते हैं जैसे आँख से कम दिखाई देना आदि। इसी प्रकार केल्शियम की कमी होने पर हड्डी से संबंधित रोग होने की आशंका बनी रहती है। ठीक इसी प्रकार घर की जो ऊर्जा (४५ में से) दूषित होगी, गृहस्वामी का उस ऊर्जा से संबंधित अंग प्रभावित होता है।

एक श्रेष्ठ वास्तुशास्त्री बनने के लिए यह आवश्यक है कि आपको यह मालूम हो कि घर की किस भाग की ऊर्जा, व्यक्ति के किस अंग को प्रभावित करती है तथा उसका उपचार किस प्रकार किया जा सकता है।

(उपचार की विधि हम बलि-कर्म अध्याय में देखेंगे।)

११.४ मर्म स्थान

एक मानव शरीर के समान ही वास्तु (वास्तुपुरूष) में नाड़ी, वंश (मेरुदण्ड, रीड़) व शिराएँ होती है। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में, कुछ अत्यन्त संवेदनशील बिन्दु होते हैं, जिन्हें हम मर्म स्थान कहते हैं। ठीक उसी प्रकार वास्तु में भी नाड़ी, वंश, शिराएँ व मर्म स्थान होते हैं। जिस प्रकार मानव शरीर में, मर्म स्थान आहत होने पर या चोट लगने पर, मृत्यु भी हो सकती है, ठीक उसी प्रकार वास्तु के मर्म स्थान पीड़ित होने पर, उन पर कॉलम, दीवार या अन्य कोई नकारात्मक ऊर्जा देने वाला पदार्थ होने पर, वास्तु अत्यन्त दोषपूर्ण होकर रोग, भय व मृत्यु का कारण भी बन सकता है।

नगर की रचना करते समय भी इस बात का ध्यान रखा जाता है कि यह नाड़ी, वंश व मर्म स्थान पर निर्माण न हो, इन पर मार्ग, चौराहे आदि बनाए जाते हैं।

इन स्थानों को सकारात्मक ऊर्जा से चार्ज (आवेशित) करने से पूरा घर व नगर सकारात्मक ऊर्जा से चार्ज हो जाता है। इसका वर्णन गर्भविन्यास नामक अध्याय में करेंगे।

मर्म स्थान को ज्ञात करने की विधि पदविन्यास नामक अध्याय में देखेंगे।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ मर्म स्थान किसे कहते हैं?

प्रश्न २ मर्म स्थान पर निर्माण करना चाहिए या नहीं?

प्रश्न ३ मर्म स्थान पर सकारात्मक ऊर्जा होने से पूरा घर सकारात्मक या नकारात्मक ऊर्जा से आवेशित होता है?

११.५ सारांश

भूमि पर स्थित ऊर्जा की कल्पना मानव शरीर के समान वास्तुपुरुष के रुप में की गई है। घर या भवन के जिस भाग की ऊर्जा ठीक नहीं होगी (दूषित होगी), गृहस्वामी के उसी अंग में पीड़ा होती है। मानव शरीर के नाजुक अंग के समान वास्तुपुरुष के भी मर्म स्थान होते हैं इन मर्म स्थान पर दीवार या स्तम्भ नहीं होना चाहिए।

मर्म स्थान सकारात्मक या धनात्मक ऊर्जा से चार्ज होने पर पूरा स्थान धनात्मक ऊर्जा से चार्ज हो जाता है।

११.६ अभ्यास

यह देखें कि किसी घर के मालिक के शरीर के किस अंग में दोष है तथा घर के उस भाग या दिशा में क्या है? एक विवरणिका तैयार करें।

११.७ उपयोगी पुस्तकें

बृहद संहिता अध्याय ५३

विश्वकर्म प्रकाश अध्याय ५

राजवल्लभ

मनुष्यालय चन्द्रिका

समरांगण सूत्रधार अध्याय १२

इकाई १२

आन्तरिक सज्जा

१२.० उद्देश्य

इस इकाई में आप घर, ऑफिस, फैक्ट्री आदि स्थान की आन्तरिक सज्जा का महत्व देखेंगे। इसमें हम देखेंगे कि किस प्रकार आन्तरिक सज्जा का तात्पर्य आकार, रंग व चित्र तथा उसकी विषय वस्तु से होता है।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

आन्तरिक सज्जा का महत्व प्रतिपादित कर पाएँगें।

१२.१ आन्तरिक सज्जा

आन्तरिक सज्जा का तात्पर्य या अर्थ होता है-अन्दर की सजावट। घर, ऑफिस या फैक्ट्री आदि के अन्दर की सजावट को आन्तरिक सज्जा कहते हैं। इससे उस स्थान की सुन्दरता में निखार आता है। वातावरण कार्य के अनुकूल बनाया जाता है।

घर हो या ऑफिस या अन्य किसी स्थान पर की जाने वाली आन्तरिक सज्जा का व्यक्ति के चित्त या मन पर, गहरा प्रभाव पड़ता है। बाहरी जगत के ज्ञान का लगभग ८५ प्रतिशत भाग, हम आँखों से ग्रहण करते हैं।

घर की आन्तरिक रंग तथा सजावट का, हमारे भीतर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। अतएव आन्तरिक सज्जा जिसे आजकल इन्टीरियर डेकोरेशन (इन्टीरियर डिजाईनिंग) कहते है, का चयन अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए।

आँख से हम देखते हैं आकार व रंग, जिनका हमारे जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव होता है। प्रत्येक आकार का अपना एक प्रभाव होता है। उदाहरण के लिए सामान्य रूप से कहें तो चक्र गति का प्रतीक है, चक्र हमें गति प्रदान करता है। अब जिस व्यक्ति के शरीर में जड़ता अधिक हो, आलस्य अधिक हो तो हम कहेंगे कि उसके कमरे में चक्र की आकृति लगाई जाए, जिसको देखकर उसके सब-कॉन्सियस मस्तिष्क में ऊर्जा का, उत्साह का संचार हो, उसमें गति का संचार हो तथा वह कर्मठ बने।

इसी प्रकार दौड़ते हुए घोड़े महत्वाकांक्षा को बढ़ाते है। कोई व्यक्ति में महत्वाकांक्षा बिल्कुल न हो, वह युवा हो, उस पर पारिवारिक जिम्मेदारी हो तो कहेंगे कि इसके कक्ष में या ऑफिस या कार्य क्षेत्र में दौड़ते हुए घोड़े का चित्र लगाना चाहिए, उसके लिए यह शुभ है।

इसके ठीक विपरीत कोई व्यक्ति बहुत महत्वाकांक्षी हो तथा उसकी इच्छा (महत्वाकांक्षा) उतनी तेजी से पूरी न होती हो, जिससे उसके मन में हताशा, निराशा आदि आ रही हो तथा उसके कमरे में दौड़ते हुए घोड़े का चित्र हो तो वह चित्र वहाँ से हटाना होगा। अर्थात यह परिस्थिति पर निर्भर करता है कि एक चित्र किसके लिए शुभ है, वही चित्र दूसरे के लिए अशुभ हो सकता है। एक सफल वास्तुविद् में चित्र, उसकी विषय वस्तु तथा व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करने की क्षमता होना चाहिए।

चित्र, अपने विषय व रंग संयोजन के अनुरूप, अपना प्रभाव उत्पन्न करते हैं। युद्ध के चित्र, हमारे भीतर लड़ने की भावना प्रदान करते हैं। जबकि करूण रस से बने हुए चित्र, हमारे भीतर करूण रस को जगाते हैं, हमें करूणा से भरपूर करते हैं। सामान्यरूप से वास्तु में इन दोनों प्रकार के चित्रों का निषेध (मना) है।

तो फिर चित्र कैसा होना चाहिए या आन्तरिक सज्जा किस प्रकार की हो? आन्तरिक सज्जा इस प्रकार हो कि उसमें निवास करने वाले व्यक्ति की इन्द्रियाँ संतृप्त हो, मन प्रसन्न हो तथा जीवन में उत्साह का संचरण हो या उत्साह बढ़े।

यह तो बात हुई चित्र की, विषय वस्तु की, आइए अब रंग के प्रभाव को भी देखें।

इसी प्रकार रंग भी अपना प्रभाव देते हैं। जैसे सफेद रंग ज्ञान, कीर्ति आदि को बढ़ाता है। लाल रंग उचित मात्रा में प्रयोग करने पर उत्साह बढ़ाता है। काला रंग शोक, दुःख व अपकीर्ति या अपयश देता है।

यहाँ इस बात का हमें विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक कक्ष की आन्तरिक सज्जा, अलग-अलग प्रकार की होगी। ड्राईंग रूम की आन्तरिक सज्जा, इस प्रकार की हो कि व्यक्ति उसमें मित्रता, प्रसन्नता, आनंद एवं रिलेक्स अनुभव करें। जबकि रसोई घर की आन्तरिक सज्जा उत्साह एवं सतर्कता लिए हो। शयन कक्ष का अलंकरण इस प्रकार करेंगे कि उसमें श्रृंगार रस प्रमुख रूप से हो।

बोध प्रश्न

प्रश्न- १ आन्तरिक सज्जा का क्या अर्थ है?

प्रश्न-२ आन्तरिक सज्जा का व्यक्ति के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

प्रश्न-३ आन्तरिक सज्जा में मुख्य रुप से किन तीन बातों का अध्ययन करते हैं?

प्रश्न-४ क्या व्यक्ति के जीवन में उत्साह का संचार आन्तरिक सज्जा के माध्यम से किया जा सकता है?

प्रश्न-५ दौड़ते हुए घोड़े किस बात का प्रदर्शन करते हैं या दर्शाते हैं?

प्रश्न-६ युद्ध के चित्र हमारे भीतर किस प्रकार की प्रेरणा जगाते हैं?

सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि किसी भी स्थान की आन्तरिक सज्जा व्यक्ति के मन या चित्त पर गहरा प्रभाव डालती है। आन्तरिक सज्जा अनुकूल होने पर व्यक्ति आसानी से कार्य कर सफल होता है तथा प्रतिकूल होने पर कार्य में बाधा उत्पन्न होती है।

अभ्यास

किसी घर, ऑफिस आदि को देखें कि कहाँ-कहाँ जाने पर अच्छा लगता है या मन प्रसन्न होता है और क्यों (वहाँ की आन्तरिक सज्जा की विवरणिका तैयार करें।)

उपयोगी पुस्तकें

समरांगण सूत्रधार- अध्याय ३४

मयमत- अध्याय १८

श्री

इकाई १३

आयुर्वेद व वास्तुशास्त्र का संबंध

१३.० उद्देश्य

इस इकाई में हम आयुर्वेद तथा वास्तुशास्त्र के संबंध का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगें कि-

आयुर्वेद से वास्तुशास्त्र का क्या संबंध है?

१३.१ आयुर्वेद व वास्तुशास्त्र का संबंध

स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना आयुर्वेद है। सामान्य शब्दों में हम इसे वैदिक चिकित्सा शास्त्र कह सकते हैं।

आयुर्वेद के अनुसार, तीन प्रकृति बताई गई है- वात, पित्त व कफ। इन्हीं के सन्तुलित होने पर, व्यक्ति स्वस्थ तथा असन्तुलित होने पर व्यक्ति अस्वस्थ महसूस करता है या होता है। आयुर्वेद का उद्देश्य, स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना है, जिससे उसका मन प्रसन्न रहे।

वात का अर्थ है वायु, पित्त का अर्थ है अग्नि तथा कफ का अर्थ है जल। आयुर्वेद की दृष्टि से देखें तो, खाने-पीने के पदार्थो को भी इसी प्रकार विभाजित किया गया है कि कुछ पदार्थ वात को बढ़ाने वाले, कुछ पित्त को, तो कुछ पदार्थ कफ प्रकृति को बढ़ाने वाले होते हैं।

व्यक्तियों की स्वाभाविक प्रकृति को भी मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं- वात प्रकृति प्रधान, पित्त प्रकृति प्रधान, कफ प्रकृति प्रधान। यह उस व्यक्ति की स्वाभाविक प्रकृति है। इसी के अनुसार व्यक्ति, स्वाभाविक रूप से जगत में व्यवहार करता है।

कफ प्रकृति प्रधान व्यक्ति शान्त, गम्भीर, विवेकशील आदि होता है। पित्त प्रधान व्यक्ति या अग्नि तत्व प्रधान व्यक्ति में क्रियाशीलता अधिक पाई जाती है। वात प्रधान व्यक्ति या वायु प्रधान व्यक्ति में चंचलता अधिक पाई जाती है।

वास्तु के अनुसार जब हम किसी व्यक्ति को भोजन प्रिस्क्राइब करते हैं अर्थात परामर्श देते है, तो उस व्यक्ति के स्वाभाविक गुण तथा उसके कार्य क्षेत्र के अनुसार ही देते हैं। जिन व्यक्तियों को कार्य में अधिक क्रियाशीलता की आवश्यकता होती हैं, उन्हें अग्नि तत्व प्रधान भोजन दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार अन्य प्रकार के व्यक्तियों के लिए भी उनकी प्रकृति एवं कार्य के अनुकूल, भोजन का सुझाव देना चाहिए।

जिस प्रकार का व्यक्ति का कार्य है, उसके अनुसार ही उसका भोजन होना चाहिए। ताकि वह भोजन उसके कार्य में सहयोग प्रदान करें, न कि रुकावट।

जैसा सामान्य रुप से कहा है कि ब्राह्मण या मनन, चिन्तन करने वाले व्यक्ति को लहसुन या प्याज नहीं खाना चाहिए क्यों। क्योंकि इस प्रकार के पदार्थ उसमें क्रियाशीलता बढ़ाते हैं, जिससे मन को स्थिरता प्राप्त करने में बाधा होगी, क्रियाशीलता अधिक होगी, चंचलता अधिक होगी अतः कहा है कि इस प्रकार का भोजन न करें।

वहीं जिन व्यक्तियों को अधिक क्रियाशीलता की आवश्यकता है उनके भोजन में लहसुन, प्याज आदि को आवश्यक बताया गया है। इस प्रकार से हमने देखा कि भोजन कार्यक्षेत्र या प्रकृति के अनुकूल होना चाहिए।

इन्हीं सब बातों को वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में भूमि के स्वाद के माध्यम से कहा है। जब हम भूमि का चयन करते हैं तो शास्त्र कहता है कि ब्राह्मण मीठे स्वाद वाली भूमि पर निवास करें। वैश्य या व्यापारी गण खट्टे स्वाद वाली भूमि पर निवास करें। इसका तात्पर्य यही है कि ब्राह्मण को मीठा भोजन करना चाहिए, वैश्य या व्यापारी के भोजन में खटाई होना चाहिए।

व्यक्ति जैसा भोजन करता है उसी प्रकार की उसकी प्रवृत्ति या प्रकृति बनती है। अतः भोजन का चयन सावधानी पूर्वक करना चाहिए।

वास्तुपरामर्श करते समय इन सब बातों का ज्ञान होना आवश्यक है। जैसे हम कहीं वास्तु परामर्श देने जाएँ, वहाँ परिवार में कलह अधिक होता है, झगड़े अधिक होते

हों, तो देखें कि क्या इसका कारण अधिक मिर्च वाला भोजन तो नहीं है। यदि परिवार सामान्य से अधिक मात्रा में लाल मिर्च का सेवन करता है तो यह क्रोध को बढ़ावा दे सकता है। वहाँ हम परामर्श देगें कि आप मिर्च का सेवन कम करें।

व्यापारी को परामर्श देते समय उसमें वैश्योचित गुण बढ़ाने के लिए हम कह सकते हैं कि आपके भोजन में खटाई (अचार, टाटरी, निम्बू या टमाटर आदि) होना चाहिए।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ आयुर्वेद के अनुसार मुख्य रुप से प्रकृति कितने प्रकार की होती है?

प्रश्न २ क्या भोजन का व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव होता है?

प्रश्न ३ व्यापार बढ़ाने के लिए किस प्रकार का भोजन करना चाहिए?

प्रश्न ४ मनन, चिन्तन आदि कार्य में किस प्रकार का भोजन सहायक होता है?

१३.२ वात, पित्त व कफ प्रकृति का दिशाओं से संबंध

वास्तु में चार विदिशाएँ अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य तथा ईशान कोण अलग-अलग तत्वों को प्रदर्शित करती हैं।

ईशान में जल तत्व

आग्नेय में अग्नि तत्व

नैर्ऋत्य में पृथ्वी तत्व

तथा वायव्य में वायु तत्व, प्रधान रूप से रहता है। मध्य में आकाश तत्व का स्थान बताया गया है।

आकाश से ही सारा भौतिक जगत आया है, उत्पन्न हुआ है। यह मध्य में है। इसे ही ब्रह्म अर्थात अव्यक्त सत्ता का स्थान कहा है। यहाँ से ही सारा सृजन होता है, रचना होती है, निर्माण होता है। यह वास्तव में केन्द्र है, सेन्टर है, न्यूक्लियस है। यह शान्त पवित्र होना चाहिए। यह सकारात्मक ऊर्जा से भरा हुआ होना चाहिए। अतः वास्तुशास्त्र में कहा गया है कि ब्रह्म स्थान या मध्य स्थान खुला हो, वहाँ पूरा कॉस्मिक रेडिएशन आता हो। **ईशान** कोण को जल तत्व या कफ प्रकृति का कहा है। उस दिशा में हम जलस्थान बनवा सकते है, जैसे पानी की टंकी, कुआँ, जल संग्रहण का स्थान आदि।

आग्नेय कोण में अग्नि तत्व या पित्त प्रकृति की प्रधानता रहती है तो कहा है कि यहाँ रसोई घर बनवाना चाहिए। गाय के लिए आग्नेय कोण का स्थान बताया है।

वायव्य कोण में वायु तत्व या वात प्रकृति की प्रधानता रहती है तो कहा है कि फैक्ट्री में फिनिश्ड गुड्स रखना चाहिए।

इसके अतिरिक्त भवन में निवास करने वाले व्यक्ति को जिस तत्व (जल, अग्नि या वायु) की आवश्यकता हो अर्थात् जिस दिशा में दोष हो, उस दिशा से संबंधित तत्व का भोजन दिया जा सकता है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि वास्तुशास्त्री को आयुर्वेद का ज्ञान होना चाहिए।

१३.४ बोध प्रश्न

प्रश्न ईशान कोण में कौन सा तत्व प्रधान रूप से रहता है?

प्रश्न आग्नेय कोण में कौन सा तत्व प्रधान रूप से रहता है?

प्रश्न वायव्य कोण में कौन सा तत्व प्रधान रूप से रहता है?

प्रश्न किसी भी निर्माण के मध्य में कौन सा तत्व प्रधान रूप से रहता है?

१३.५ सारांश

इस इकाई में हमने देखा कि आयुर्वेद में तीन तत्व वात, पित्त व कफ बताए गए हैं, इन तीन तत्वों का व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार प्रयोग करने पर वास्तु में शुभफल प्राप्त होता है। जिससे व्यक्ति कार्य में सरलता का अनुभव करता है।

१३.६ अभ्यास

पाँच व्यक्तियों के स्वभाव (या कार्यक्षेत्र) तथा उनके भोजन का अध्ययन कर विवरणिका तैयार करें।

१३.७ उपयोगी पुस्तकें

विश्वकर्म प्रकाश अध्याय -१

इकाई १४

योग व वास्तुशास्त्र का संबंध

१४.० उद्देश्य

इस इकाई में हम योग तथा वास्तुविद्या के आपसी संबंध का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

वास्तु सुधार में योग की उपयोगिता बता पाएँगें, उसका महत्व प्रतिपादित कर पाएँगे।

१४.१ योग

प्राचीन छह दर्शन में योग अपना विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अपने यहाँ छह दर्शन बताए गए हैं-**न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, कर्ममीमांसा** व **वेदान्त**। दर्शन को आंग्ल भाषा अर्थात अंग्रेजी या इंग्लिश में फिलासफी कहते हैं।

वैसे तो सभी दर्शन महत्वपूर्ण हैं, उनकी अपनी विशिष्टता है, परन्तु इस इकाई में हम केवल योग के महत्व का प्रतिपादन कर रहें हैं।

योग के रूप में जो प्रसिद्ध ग्रन्थ अपने पास उपलब्ध है, उसका नाम है-पतञ्जलि योगसूत्र।

१४.२ योग परिचय

एक वास्तुशास्त्री को ज्योतिष, आयुर्वेद के साथ-साथ, योग का ज्ञान होना भी अत्यन्त आवश्यक है। योग का अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रामाणिक ग्रन्थ, पतञ्जलि योगसूत्र है। हमारी दृष्टि में यह मनोविज्ञान का भी सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है। इसमें मनुष्य के मन तथा उसमें उठने वाले विचारों का बड़ी सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया है। विचार कहाँ से उठते हैं? उन्हें किस प्रकार नियन्त्रित किया जा सकता है? दुख का कारण क्या है? आने वाले प्रत्येक दुख को, किस प्रकार दूर किया जा सकता है? व्यक्ति किस प्रकार निरोगी एवं प्रसन्न रह सकता है- इन सभी प्रश्नों का विस्तृत उत्तर पतञ्जलि योग सूत्र में दिया गया है।

एक स्थपति की प्रज्ञा अर्थात् एक विशेष प्रकार की चेतना, निर्मल, शुद्ध एवं पवित्र किस प्रकार हो? किस विधि से हो? इसमें योगसूत्र अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। वास्तु शोधन की दृष्टि से, जब कोई वास्तुविद किसी मकान का अध्ययन एवं विश्लेषण करता है, तब उसे यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि दोष कहाँ है? क्या दोष नगर नियोजन का है? कॉलोनी या भूमि का है, जन्म पत्रिका या संगति का है या व्यक्ति में मनोविकार की कोई ग्रन्थि पड़ी है, हीन भावना है या कोई दुर्घटना की याद, उसके विकास में चट्टान की भाँति बाधा बन कर खड़ी है। ऐसा कहा गया है कि जैसा रोग वैसी दवा, इसलिए पहले रोग को जानना अत्यन्त आवश्यक है, तब ही उसका उपचार उचित प्रकार से किया जाएगा।

जैसे- यदि किसी व्यक्ति में कोई मनोविकार की ग्रन्थि पड़ी है और हमें यदि शीघ्रता से परिणाम चाहिए, तो वो मनोविज्ञान के ज्ञान से ही मिलेगा, भवन के तोड़फोड़ या रत्न धारण के उपाय करने पर, परिणाम जल्दी नहीं मिल पाएंगें तथा उसमें शक्ति भी उतनी नहीं होगी, सही परिणाम के लिए मनोविज्ञान का ज्ञान आवश्यक है।

व्यक्ति के मन को समझकर उचित प्रकार से परामर्श देने हेतु मनोविज्ञान का ज्ञान आवश्यक है। मन को शुद्ध, पवित्र एवं विकारों से मुक्त करने में पतञ्जलि योगसूत्र अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। इसके साधन के रुप में योग को विशेष महत्व दिया गया है।

१४.३ योग के अंग

आज हम, जिस योग को, जानते है, वह पतंजलि योगसूत्र का ही एक भाग है, जिसे हम अष्टांग योग के नाम से जानते हैं। अष्टांग योग अर्थात् योग के आठ अंग जो निम्न लिखित हैं-

(१) यम

(२) नियम

(३) आसन

(४) प्राणायाम

(५) प्रत्याहार

(६) धारणा

(७) ध्यान

(८) समाधि

इन आठ अंगों में सबसे पहले यम तथा नियम को बताया है। ये यम व नियम शारीरिक एवं मानसिक शुद्धिकरण हैं। यह अगली सीढ़ियाँ, आसन, प्राणायाम आदि पर चढ़ने के पहले अनिवार्य पात्रता है, इसके बिना अगली सीढ़ियाँ, स्थिर एवं दृढ़ नहीं हो पाएगी।

यहाँ हम विशेष रुप से केवल आसन व प्राणायाम का महत्व ही बता रहें हैं।

१४.४ यम

शारीरिक एवं मानसिक शुद्धिकरण के लिए यम इस प्रकार हैं-

१) अहिंसा

२) सत्य

३) अस्तेय (दूसरे के धन व अधिकार को न छीनना)

४) ब्रह्मचर्य

५) अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह न करना)।

ये यम बताए गए हैं।

१४.५ नियम

१) आन्तरिक व बाहरी पवित्रता

२) सन्तोष

३) तप

४) स्वाध्याय (अपने विषय से संबंधित ग्रन्थ का अध्ययन करना)

५) ईश्वर प्रणिधान (सब कुछ ईश्वर का कार्य मानकर करें एवं ईश्वर को समर्पित करें।)

१४.६ आसन

किसी एक स्थिति में लम्बे समय तक आराम से बैठना, आसन है। प्रयत्न की शिथिलता से आसन सिद्ध होता है। अनेकानेक प्रकार के आसन होते हैं, उनके प्रभाव भी भिन्न-भिन्न होते हैं।

आसन से, हमारे शरीर के अलग-अलग चक्र क्रियाशील होते हैं।

शरीर के विभिन्न रोगों का निवारण भी, आसन आदि से किया जा सकता है। किस आसन से, किस शारीरिक रोग का निवारण होता है। इसका प्रारंभिक ज्ञान होने से, वास्तु का शोधन करते समय, इस बात की सुविधा रहती है कि व्यक्ति को सुझाव दिया जा सके कि वह किस प्रकार के आसन का प्रयोग करें। इसके अलावा व्यक्ति की आलस्य, जड़ता आदि को दूर करने, उसकी शारीरिक क्षमता बढ़ाने के लिए भी, आसन का महत्वपूर्ण उपयोग किया जा सकता हैं।

१४.७ प्राणायाम

श्वास के द्वारा प्राण को नियन्त्रित करना, प्राणायाम है। अनेकानेक प्रकार के प्राणायाम होते हैं एवं उनके प्रभाव भी भिन्न-भिन्न होते हैं। प्राणायाम से हमारे शरीर में अलग-अलग चक्र (ऊर्जा के केन्द्र) क्रियाशील होते हैं।

प्राणायाम के द्वारा भी शरीर के विभिन्न रोगों का निवारण किया जा सकता है। किस प्राणायाम से कौन से शारीरिक रोग का निवारण होता है। इसका प्रारंभिक ज्ञान होने से, वास्तुशोधन करते समय, इस बात की सुविधा रहती है, कि व्यक्ति को सुझाव दिया जा सके कि वह किस प्रकार के प्राणायाम का प्रयोग करें। इसके अलावा व्यक्ति की आलस्य, जड़ता आदि को दूर करने, उसकी शारीरिक क्षमता बढ़ाने के लिए भी प्राणायाम का प्रयोग किया जाता है।

प्रत्याहार

प्रत्याहार का अर्थ है-पीछे हटना, उलटा होना, विषयों से विमुख होना। इसमें

इन्द्रियाँ अपने बहिर्मुख विषय से पीछे हटकर अन्तर्मुखी होती हैं। इसलिए इसको प्रत्याहार कहते हैं। वास्तव में ऐसी अवस्था इन्द्रियों की तब होती है, जब स्वाभाविक रूप से बाहर के विषय में उसे रस नहीं रहता, राग नहीं रहता, साथ ही साथ द्वेष भी नहीं रहता है। ऐसा तब संभव होता है जब हमारी विषयों के प्रति **शोभन बुद्धि** (आकर्षण, रस) नहीं रहती है।

धारणा

किसी एक लक्ष्य पर चित्त को ठहराना **धारणा** कहलाता है। जब आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार आदि द्वारा जब चित्त स्थिर हो जाए, तब उसे अपने लक्ष्य पर ठहराने को धारणा कहते हैं।

ध्यान

जब धारणा करते समय वह वृत्ति लगातार बनी रहे तो उसे ध्यान कहते हैं, इस अवस्था में अन्य कोई वृत्ति का उदय नहीं होना चाहिए। जैसे एक बर्तन से दूसरे बर्तन में तेल डालते समय, तेल की धार लगातार बनी रहे, उसी प्रकार धारणा करते समय वृत्ति लगातार बनी रहे तो उसे ध्यान कहते हैं।

समाधि

आइए समाधि को समझने से पहले उसकी प्रक्रिया को समझे। जब कोई व्यक्ति ध्यान करता है तो तीन की स्थिति बनती है। एक लक्ष्य, दूसरा ध्यान करने वाला तथा तीसरा वृत्ति। इसे हम ज्ञाता, ज्ञान व ज्ञेय के नाम से भी जानते हैं। ज्ञाता का अर्थ है जानने वाला, ज्ञेय का अर्थ है जिसे जाना जाता है। ज्ञान वह प्रक्रिया या विधि है जिसके द्वारा ज्ञाता को ज्ञेय का ज्ञान होता है। जैसे कोई फूल का ध्यान कर रहा हो, तो कहेंगे कि फूल ज्ञेय है, उसका ज्ञान प्राप्त करने वाला ज्ञाता है तथा जिस प्रक्रिया से वह ज्ञान प्राप्त कर रहा है वह ज्ञान है।

समाधि की अवस्था में ध्याता, ध्यान व ध्येय तीनों एक हो जाते हैं।

१४.८ वास्तुशास्त्र व योग का संबंध

वास्तुशास्त्र के नियमों के अनुरूप निर्माण न होने पर उसका दुष्प्रभाव व्यक्ति के शरीर व मन पर होता है। इस दुष्प्रभाव को योग के विभिन्न अंगों का अभ्यास करने से निष्प्रभाव किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ योग के प्रसिद्ध ग्रन्थ का नाम बताएँ?

प्रश्न २ योग के कितने अंग होते हैं?

प्रश्न ३ शरीर की जड़ता दूर करने का उपाय बताएँ।

प्रश्न ४ शरीर के प्रत्येक भाग को पूरी ऑक्सीजन मिले, इसके लिए योग के कौन से अंग का अभ्यास करना चाहिए?

प्रश्न ५ आसन की उपयोगिता पर प्रकाश डालें।

सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि व्यक्ति के शरीर व मन को स्वस्थ रखने में योग अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। योग के द्वारा व्यक्ति के शरीर को क्रियाशील तथा मन को विकारों से मुक्त किया जा सकता है। विकार मुक्त व्यक्ति ही अधिक कुशलता से कार्य कर सकता है।

अभ्यास

किसी योग कक्षा में जाकर सूर्य नमस्कार, आसन व ध्यान सीखें।

सूर्य नमस्कार का प्रतिदिन अभ्यास करें।

एक डायरी में प्रति सप्ताह होने वाले परिवर्तन को लिखें।

उपयोगी पुस्तकें

पतञ्जलि योग सूत्र

योग वसिष्ठ

इकाई १५

स्वर विज्ञान व वास्तुशास्त्र

१५.० उद्देश्य

इस इकाई में हम स्वर विज्ञान जिसे मातृका विज्ञान भी कहते हैं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप अक्षर (स्वर व व्यञ्जन) के माध्यम से वास्तुसुधार के विभिन्न उपाय जान पाएँगे।

१५.१ विषय प्रवेश

एक वास्तुशास्त्री को अक्षर (स्वर व व्यञ्जन), मातृका (अक्षर में स्थित शक्ति), मन्त्रशास्त्र (अक्षर के प्रयोग का विज्ञान), छन्द शास्त्र (स्वर व व्यञ्जन के उच्चारण का विज्ञान), व्याकरण (भाषा के नियम) इत्यादि शास्त्रों का ज्ञान होना चाहिए।

१५.२ अक्षर

हिन्दी या संस्कृत में हम अक्षरों का प्रयोग करते हैं। इनके क्रम को हम वर्णमाला के नाम से जानते हैं। वर्ण का एक अर्थ रंग होता है अर्थात् यह रंगों का माला है।

अक्षर का अर्थ है कि जिसका क्षरण (decay) न हो। ध्वनि की वह वेल्यु जिसका, क्षरण न हो।

अक्षर को दो वर्गो में विभाजित किया गया है-

१) स्वर (अ से अः तक)

२) व्यजंन (क से ह तक),

इनके वर्ग होते हैं। जैसे जब हम क वर्ग कहते हैं तो इसका तात्पर्य क, ख, ग, घ व ङ है। इसी प्रकार च, ट, त, प, य व श वर्ग होते हैं।

इनके वर्गो का विभाजन, उनके उच्चारण स्थान तथा वैज्ञानिक आधार पर किया गया है।

१५.३ उच्चारण स्थान

इन वर्गों के उच्चारण का एक स्थान होता है, जैसे कण्ठ, तालु, ओंठ आदि। इनके सही-सही उच्चारण करने पर ये अपना विशेष प्रभाव उत्पन्न करते हैं। किसी भी मन्त्र का जब सही प्रकार से उच्चारण किया जाता है तब वह अपना प्रभाव देता है। अतः शब्द की शक्ति को प्रकट करने के लिए शुद्ध उच्चारण होना अत्यन्त आवश्यक है। संगीतकार विशेष रुप से जानते हैं कि स्वर उदात्त, अनुदात्त या स्वरित हो सकता है, तभी तो कहा है कि दीपक राग से गाने में दीये जलते हैं या मल्हार राग का प्रयोग करने पर बारिश होती है आदि।

इन्हीं अक्षरों को मिलाकर, जब हम कोई शब्द बनाते हैं या कोई छन्द बनाते हैं या उन्हीं अक्षरों को उच्चारित करते हैं तो वे अपना प्रभाव अधिक शक्तिशाली ढ़ग से उत्पन्न करते हैं। यही अक्षर जब बीजाक्षर या बीज मन्त्र के रूप में भी आते है, तब अधिक प्रभाव देने में सक्षम होते हैं। इसी प्रकार मन्त्र बनते हैं। प्रत्येक मन्त्र का अपना एक देवता होता है। प्रत्येक मन्त्र का अपना एक छन्द होता है। छन्द से, वह देवता ढका होता है। छन्द वास्तव में उस मन्त्र को उच्चारित करने की विधि है। मन्त्र की लय क्या हो, यह बताया है। छन्द उस देवता का आवरण है, उसके हटने पर वह देवता प्रकट होता है। जैसे किसी भी अक्षर को उच्चारित करने के १८ भेद हो सकते हैं। तो किसी भी मन्त्र या बीज मन्त्र के शब्द का अपना सही-सही प्रभाव उत्पन्न करने के लिए इन सब बातों का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। हालाँकि यह जानना आवश्यक नहीं है फिर भी विषय से सम्बन्धित होने के कारण यहाँ इस बात का उल्लेख करना भी आवश्यक है कि मन्त्र हो या छन्द को आठ प्रकार के भेद से गाया जा सकता है। यह कार्य (८ प्रकार से गाने का) किसी मन्त्र में आई हुई त्रुटि या विकृति की जाँच में भी सहायक होता है, अर्थात कालान्तर में यदि कोई मन्त्र किसी ग्रन्थ में प्रक्षेपित (डाल दिया जाए) कर दिया जाए तो वह आठ प्रकार के भेद से गाने पर पता चल जाता है। इसी प्रकार जब हम मन्त्र का उच्चारण □ुद्ध रूप में करते हैं तो वे अपना प्रभाव देते है। (मन्त्र के छन्द के अनुसार उच्चारण करने पर)।तभी तो अपने यहाँ कहा है ‡ क पर्जन्य सूक्त का उच्चारण करने पर वर्षा होती है।‡ व„ ेष मन्त्रों के अनुष्ठान से पुत्र प्राप्ति, „ त्रु पर ‡ वजय आ‡ द अनेक कार्य ‡ सद्ध होते हैं।

१५.४ अक्षर व उनका प्रभाव

प्रत्येक अक्षर का अपना एक अर्थ होता है। जो अपना वैसा प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम होता है। इन्हीं अक्षरों का उच्चारण, जब लगातार किया जाता है, तो वे अपना प्रभाव दिखाने में सक्षम होते हैं।

जैसे अ अक्षर का मतलब है वासुदेव

इ का अर्थ है कामना

ज का अर्थ है जय

ण का अर्थ है निश्चितता, आदि, आदि।

जैसे कोई व्यक्ति जब बार-बार लगातार र अक्षर, जो कि अग्नि का प्रतीक है, अग्नि को प्रदर्शित करता है, का उच्चारण करता है, तो उसके शरीर के तापमान में बढ़ोत्तरी होती है।

कोई व्यक्ति के मन में यदि दुविधा हो, वह निर्णय लेने में कठिनाई का अनुभव करता हो, तो यदि आँखों के सामने, जहाँ वो अधिक समय तक बैठता हो, उस स्थान पर दीवार पर ण अक्षर, उसी रंग से जिससे वह अक्षर बना है, लिख दिया जाए तो उस अक्षर का रंग तथा उसकी आकृति मिलकर, उसके मस्तिष्क के उस केन्द्र या भाग को एक्टिवेट करते हैं, जो निर्णय लेने की क्षमता रखता है तथा निर्णय लेने का कार्य करता है। इस प्रकार वह व्यक्ति निर्णय लेने में सक्षम होता है। और वह किसी एक निश्चय पर पहुँचता है।

इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति, कार्य में सफलता पाना चाहता हो, प्रतिद्वन्दि पर विजय प्राप्त करना चाहता हो, तो ज अक्षर का प्रयोग, बार-बार उसका उच्चारण तथा ज अक्षर दीवार पर लिखकर, उस रंग का जिससे वह अक्षर बना है, प्रयोग किया जाना चाहिए।

इसके साथ, प्रतिमा विज्ञान का प्रयोग भी किया जाए तो इस कार्य में और अधिक सहायता मिलने की संभावना रहती है। इस प्रकार से हमने देखा कि केवल एक अक्षर किस प्रकार से प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम है।

१५.५ अक्षर का रंग व प्रतिमा विज्ञान

उच्चारण भेद के साथ-साथ प्रत्येक अक्षर का अपना एक रंग होता है एवं उसका एक प्रतिमा विज्ञान होता है। जिसके माध्यम से वह अक्षर, अपने गुणों को व्यक्त करता है।

एकाक्षरी के माध्यम से भी इन अक्षरों के गुण बताए गए हैं-

कः	प्रजापति, दक्ष,
को	जल, वायु, अग्नि
कं	जल, मस्तक, सुख
कुः	पृथ्वी, पाप, खराब
ख	इन्द्रिय, आकाश
खः	शून्य, सामान्य
गः	गन्धर्व
गौ	गणेश, धेनु, सरस्वती
गं	गीत
अ	वासुदेव, पूजा, मंगल कार्य
आ	ब्रह्मा, पीड़ा, दया
आः	लक्ष्मी
इ	कामदेव, क्रोध, करूणा, आश्चर्य
ई	लक्ष्मी, क्रोध, करूणा, आश्चर्य
उः	शिव, क्रोध, आदेश, स्वीकृति
ऊः	शिव, चंद्रमा, करूणा, उमा, पार्वती
ऋ	दिति, दैत्यों की माता
लृकार	अदिति
ए	विष्णु
ऐ	शंकर

ओ	ब्रह्म, स्मरण करना, करूणा
औ	शेषनाग, आमंत्रण, विरोध, शपथोक्ति
अं	परब्रह्म
अः	महेश्वर (शंकर जी)
ङ	भैरव, दैव (विषय की इच्छा)
क	ब्रह्मा, विष्णु, कामदेव, अग्नि, वायु, यम, सूर्य, आत्मा, राजा, मन, समय, प्रसन्नता
ग	जाने वाला, ठहरने वाला, मैथुन करने वाला (अरूण)
घ	प्रहार करने वाला (कृष्ण)
ङ	(कृष्ण)
च	चंद्रमा, चोरी करना, चोट (श्वेत)
छ	अंश, खण्ड, तरल पदार्थ (सफेद)
ज	गायन (जय), (सफेद)
जाः	पिता, प्रेत, विजेता, प्रभा, विष्णु जी, जयकार
झ	शहद, (सफेद)
झः	नष्ट, झंझावत, समय बिताना, बृहस्पति
ञ	(कलाला)
टो	पृथ्वी, ध्वनि
ठ	जनता (पीत-विद्युतलताकार)
ठो	ध्वनि, महेश
ठः	शून्य, सूर्य, चन्द्रमा
ड	शंकर, ध्वनि, मंगल, त्रास (पीतविद्युत लताकार)
ढ	डमरू, निर्धन, निर्गुण (पीतविद्युत लताकार)
ण	निश्चय, निर्णय (पीतविद्युत लताकार)
त	चोर, पक्षी (कंकुम)
थ	पत्थर, शिला, नीति की रक्षा (पीला)

द	बादल, कलह से रक्षा, दान, छिद्र (रक्तविद्युतलताकार)
धो	धन
धः	सुन्दर छत (पीतविद्युत)
धी	बुद्धि
धूः	भार, धन
नः	नेता, जवानी, बुद्धि
न	स्वागत, बन्धु, वृक्ष, सूर्य (रक्तविद्युत)
प	कुबेर, पश्चिम (शरदचन्द्रतुल्य)
पः	वायु, मान, पातक (पाप)
फ	कफ, वायु, बुलाने के अर्थ में (रक्तविद्युत)
फः	फूंकने, निष्फल (कोई फल नहीं)
व	वरूण, फल
व	(ब) वक्षस्थल, गदा
ब	(अरूण)
भ	भवन
भा	प्रकाश, भूमि, भय
मः	सेवा, चन्द्रमा, ब्रह्माजी,(तरूण आदित्य)
मा	माता, मान, सम्मान
य	यश, यान, माता, त्याग (धूम्र)
यो	वायु
र	वायु, अग्नि, भूमि, धन (रक्तविद्युत)
रा	(स) इन्द्रिय, धन को रोकना, भय
लो	प्रकाश, आकाश, लवण, वायु, दान
लः	भूमि, यम, आनन्द, प्राण, प्रलय (केशर)
व	पक्षी, जाना

शं	कल्याण, सुख (पीतविद्युत)
शः	शयन
शो	हिंसा
ष	श्रेष्ठ, गंभीर (लाल चन्द्र)
षः	परोक्ष
स	क्रोध, कष्ट, ईश्वर (कोटिविद्युत)
सा	लक्ष्मी, गौरी
हा	क्रोध, शंकर (रक्तविद्युत)
हि	हेतु, अवधारणा
क्ष	खेत, वक्षस्थल

सावधानी-प्रारंभिक अवस्था में आप ज, र, ण, म, स शब्द का प्रयोग कर सकते हैं। ट, ठ, ड, ढ, फ, ल, ह, झ अक्षर का प्रयोग बिल्कुल न करें।

१५.६ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि अक्षरों, मन्त्रों के समुचित प्रयोग से विशेष प्रकार का प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है तथा व्यक्ति की जड़ता, आलस्य आदि को दूर किया जा सकता है। कुछ विशेष अक्षरों के प्रयोग करने पर निर्णायक शक्ति को विकसित किया जा सकता है। इस विधि का यह एक लाभ यह भी है कि इसका प्रभाव तुरन्त होता है तथा इसका उपयोग करने पर आर्थिक बोझ भी नहीं आता है।

१५.७ उपयोगी पुस्तकें

एकाक्षरी

मातृका विज्ञान

शारदा तिलक

रुद्रयामल

इकाई १६

गन्ध विज्ञान व वास्तुशास्त्र

१६.० उद्देश्य

इस इकाई में हम वास्तु व गन्ध का संबंध स्थापित करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- वास्तु में गन्ध का महत्व बता पाएँगें।
- कक्ष विशेष में गतिविधि के अनुरूप प्रभाव उत्पन्न कर पाएँगे।
- वास्तु दोष होने पर गन्ध द्वारा सुधार कर पाएँगें।

१६.१ इकाई की उपयोगिता

जैसा कि हम जानते हैं कि मनुष्य की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ होती है, इनसे मनुष्य बाहरी ज्ञान ग्रहण करता है। नाक ज्ञानेन्द्रिय के अतिरिक्त कर्मेन्द्रिय भी है, मनुष्य नाक से न केवल सूंघता है वरन् (बल्कि) श्वसन भी करता है। शरीर में शुद्ध प्राणवायु (ऑक्सीजन) नाक से ही प्रवेश करती है। यहाँ हम नाक की सूंघने की शक्ति तथा उसके प्रभाव का अध्ययन कर रहें हैं। यह हमारे सारे कार्यों को प्रभावित करती है।

१६.२ गन्ध विज्ञान का महत्व

पूरे घर का निर्माण, आकार, शुभ मुहुर्त, दरवाजे की स्थिति, खूब हवादार होना इत्यादि वास्तु के अनुरूप होने पर भी, घर के पास में कोई नाला हो, आसपास कोई दुर्गन्ध हो तो उससे संपूर्ण वास्तु प्रभावित होती है एवं वास्तु के अनुरूप निर्माण करने के बाद भी, बहुत अच्छे परिणाम नहीं आ पाते हैं क्योंकि वह दुर्गन्ध, मस्तिष्क के अलग-अलग भाग पर, अपना दुष्प्रभाव डालती है।

अतः जब हम सम्पूर्ण वास्तु की बात करते हैं तो, उसमें गन्ध का भी, अपना एक महत्वपूर्ण भाग है। हमारे मस्तिष्क में, अलग-अलग कार्य करने के लिए, अलग-अलग सेन्टर होते हैं। जैसे स्मरण शक्ति का एक केन्द्र अलग है, तो मित्रता के लिए दूसरा केन्द्र है। धन कमाने का केन्द्र अलग है, तो कामोत्तेजना का केन्द्र अलग है। संवेदनशीलता का स्थान अलग है, तो महत्वकांक्षा का केन्द्र अलग है, कौनसा सेन्टर या केन्द्र कितना एक्टिव है, क्रियाशील है, कितना विकसित है, यही हमारे क्रियाकलापों का निर्धारण करता है। जिस समय, हमारे जो सेन्टर अधिक क्रियाशील होते हैं, एक्टिव होते हैं, उस अवधि हम में वैसा ही व्यवहार करते हैं। इन केन्द्रों को किस प्रकार से एक्टिवेट किया जाए, इसमें गन्ध का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है।

१६.३ अलग-अलग स्थान के लिए अलग-अलग गन्ध

घरों में, जब हम कक्षों का नियोजन करते हैं तो एक ड्राईंग रूम होता है, एक किचन या रसोईघर, बेडरूम, लीविंग रूम, स्टडी रूम, पूजा इत्यादि के कमरे होते हैं। इन अलग-अलग कमरों में, हमारी क्रिया, हमारी गतिविधि भी, अलग-अलग प्रकार की होती है। जैसे ड्राईंग रूम में हम मेहमान को अटेण्ड करते हैं, अर्थात मित्रता इत्यादि का व्यवहार करते हैं, तो रसोई घर में हम सजगता का व्यवहार चाहते हैं या करते हैं। पूजा देवस्थान के कक्ष में, ध्यान के कक्ष में, हम शान्ति चाहते हैं। बेडरुम में हम सुख व आनंद चाहते हैं, तो पढ़ाई के कमरे में हम विश्लेषण एवं स्मरण शक्ति का उपयोग करना चाहते हैं अर्थात अलग-अलग कक्षों में, हम अलग-अलग भावना या क्रिया करते हैं।

गन्ध के द्वारा, अलग-अलग कक्षों में की जाने वाली गतिविधि को, प्रधान रूप से एक्टिवेट किया जा सकता है, ताकि हम जब जिस कक्ष में जाए तो उस कक्ष से सम्बन्धित ब्रेन या मस्तिष्क के सेन्टर या केन्द्र एक्टिवेट हों।

वास्तुशास्त्र के लगभग सभी ग्रन्थों में गन्ध का वर्णन मिलता है। यह बताया गया है कि ब्राह्मण (अध्ययन, अध्यापन, मनन-चिन्तन करने वाले व्यक्तियों) के लिए मीठी गन्ध उपयुक्त है, तो प्रशासनिक कार्य करने वालों के लिए तीव्र गन्ध तो व्यापारी वर्ग के लिए शहद के समान वाली गन्ध उपयुक्त बताई है। यहाँ सांकेतिक रूप से यह बताया है कि जिस प्रकार की गतिविधि वहाँ करना हो उस प्रकार की गन्ध का प्रयोग करना चाहिए।

अन्य ग्रन्थ जैसे बृहदसंहिता आदि में गन्ध के बारे में एक पूरा अध्याय है। इस ग्रन्थ में १ लाख ७४ हजार प्रकार की गन्ध का उल्लेख किया गया है। इसमें विभिन्न प्रकार की गन्ध, उनको बनाने की विधि, उसके पदार्थ तथा उपयोगिता का वर्णन किया गया है। जिसे हम यहाँ संक्षेप में कह रहे हैं।

जैसा कि हम जानते हैं कि विभिन्न देवी-देवताओं के लिए हम अलग-अलग प्रकार की गन्ध का प्रयोग करते हैं। यह गन्ध उन-उन देवी देवता के अनुकूल होती है, उनके गुणों को विकसित करती है। उदाहरण के लिए जैसे जिस गन्ध का प्रयोग हम लक्ष्मी जी के लिए करते हैं, उस गन्ध का प्रयोग स्वयं के लिए करने पर धन की वृद्धि होगी।

टीका लगाने का महत्व-सेन्टर को एक्टीवेट करना।

अब आइए देखें कि, गन्ध बनाने के लिए, किन-किन पदार्थो का प्रयोग या उपयोग किया जा सकता है-

१६.४ गन्ध बनाने के लिए पदार्थ

मंजीठ, समुद्रफेन, शूक्ति, दालचीनी, कूट, बोल, गन्धपत्र, तगर आदि का प्रयोग किया जाता है।

१६.५ गन्ध

बेडरूम के लिए, गन्धपत्र, सिंह्लक नेत्रवाला, तगर से बनने वाली गन्ध का प्रयोग करना चाहिए।

वस्त्रों को सुगंधित करने के लिए- मोथा, गुड़, गूगल, श्रीवास, सर्ज, खस, इलायची, कस्तूरी, कर्पुर से भी सुगंध बनाई जाती है। इस सुगंध का प्रयोग धूप देने तथा कपड़ों को सुगन्धित करने के काम में लिया जाता है।

सब गन्ध द्रव्यों के श्रीवास, श्रीराल (सर्ज), गुड़, नख इन चारों से अलग-अलग धूप देना चाहिए। इस प्रकार से विभिन्न अनुपात में मिलाने पर १,७४,७२० प्रकार के सुगन्धित द्रव्य बनते हैं।

गन्ध का प्रयोग बालों को सुगन्धित करने, शरीर को सुगन्धित करने तथा इत्र की तरह वस्त्रों को सुगन्धित करने तथा कमरों को सुगन्धमय बनाने में किया जाता है।

इन गन्ध पदार्थों का उपयोग स्वविवेक के आधार पर कर सकते हैं। इनका उपयोग अगरबत्ती के रूप में, धूपबत्ती के रूप में या इलेक्ट्रीक प्लेट के ऊपर पदार्थ के रूप रखकर किया जा सकता है।

इस प्रकार से, वास्तु में, विभिन्न कक्षों या कमरों के आधार पर, गन्ध का निर्धारण कर, उसका उपयोग किया जा सकता है। व्यक्ति के व्यवसाय के अनुसार भी गन्ध का चयन कर, उसका उपयोग कर सकते हैं।

ऋतु के अनुसार भी गन्ध का प्रयोग किया जा सकता है। आजकल के समय में यह विद्या एरोमाथेरेपी के नाम से प्रसिद्ध हो रही है।

अतः एक वास्तुशास्त्री को गन्ध विज्ञान का ज्ञान भी होना चाहिए। अस्तु

बोध प्रश्न-

प्रश्न १ वास्तु में गन्ध का महत्व समझाएँ।

प्रश्न २ क्या सभी व्यक्तियों के लिए एक ही प्रकार की गन्ध उपयुक्त है?

प्रश्न ३ क्या सभी कमरों में एक ही प्रकार की गन्ध का उपयोग किया जा सकता है?

प्रश्न ४ रसोई घर में किस प्रकार की गन्ध का प्रयोग करना चाहिए?

प्रश्न ५ बैठक कक्ष में किस प्रकार की गन्ध का प्रयोग करना चाहिए?

१६.६ दोष, परिणाम, सुधार का उपाय

दोष व परिणाम- किसी घर के पास नाला होने पर या अन्य किसी कारण से दुर्गन्ध (बेक लाईन या आसपास में गन्दगी होना, आसपास कचरे के ढेर होना, आदि) हो तो उस घर में निवास करने वाले व्यक्ति सामान्य से अधिक बीमार रहते हैं। व्यापार व्यवसाय के स्थान पर दुर्गन्ध होने से कार्य में ताजगी का अनुभव नहीं होता है, निर्णय सही नहीं होते हैं जिससे सफलता प्राप्त करने में कठिनाई होती है या अधिक समय लगता है। विद्यार्थी होने पर पढ़ाई का ठीक से न हो पाना, पाठ का ठीक से याद न रह पाना आदि समस्याएँ होती है। गृहणी (परिवार की महिला) का बीमार रहना, सरदर्द होना आदि परिणाम होते हैं।

सुधार का उपाय- उस स्थान की गन्दगी को तुरन्त हटाया जाए। उस स्थान पर दुर्गन्ध व कीटाणुनाशक पदार्थों का छिड़काव किया जाए। उस स्थान को साफ सुथरा रखा जाए। सुगन्धित पदार्थों का छिड़काव किया जाए। कपूर आदि गन्ध का प्रयोग करें। जिस ओर गन्दगी आदि हो उस दिशा की खिड़की आदि बन्द रखें (अन्य दिशा से ताजी हवा घर में आना आवश्यक है।)

सावधानी-वास्तुशोधन करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि दुर्गन्ध के दोष दूर करने का उपाय, दुर्गन्ध व कीटाणु का नाश तथा सुगन्ध का छिड़काव आदि ही है। यहाँ कोई यन्त्र लगाने, विशेष रंग करने, पिरामिड आदि लगाने या ताम्बे का तार बांधने से कोई सीधा-सीधा लाभ नहीं होगा।

१६.७ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि अलग-अलग प्रकार की गन्ध अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करती है इनका गन्ध का उपयोग हम वास्तुसुधार के रूप में कर सकते हैं।

१६.८ उपयोगी पुस्तकें

बृहद संहिता-गन्धर्पयुक्ति अध्याय

मानोल्लास

गन्ध तीन प्रकार की होती है- शैव, शाक्त व वैष्णव

शैव-चन्दन, कुंकुम, अगरु, कुष्ठ, दल, उशीर, कपूर, हिरिबेर

शाक्त-चन्दन, कुंकम, अगरु, नाग, कपूर, मांसी, रोचना, कच्चोरवान,

वैष्णव-चन्दन, कुंकुम, अगरु, उशीर, तोयाह्वे, मांसी, कुष्ठं, मुरा,

पुष्पाणि चैव कथ्यन्ते प्राग्वच्चैवादिभेदतः।
तान्योयानि सौम्यानि सौम्योयानि च त्रिधा॥ ८-५९.
सात्त्विकानीह शुानि राजसान्यरुणानि तु।
वाृष्णानि तामसानि स्युः पीतं राजससात्त्विकम्॥ ८-६०॥

श्यामं तमोरजोमिश्रं पत्रेष्वप्येवमेव हि।
सात्त्विकाद्यैस्तु कुसुमैः फलं स्यात् सात्त्विकादिकम्॥ ८-६१॥
श्वेतार्कं करवीरकं च कमलं दुर्धूरकार धे
राजार्कं च सिताम्बुजं च तुलसीसाशोकसच्चम्पकैः।
कल्हारं बकपाटले वकुलकं द्वे मङ्किे मालती-
पालाशस्थलपद्मदर्भदमने नै मार्गच्चदं दूर्वया॥ ८-६२॥
तद्वद् ग्रन्थिशमीबृहन्मरुवकैः पुन्नागनागासनै-
र्नन्द्यावर्ततमालकुब्जविजयामन्दारकाश्मीरकैः।
शस्तान्युत्पलकर्णिकारकुसुमैः कादम्बबैल्वान्यथो
नीलं चोत्पलमित्यमूनि कुसुमान्युक्तानि शैवान्यलम्॥ ८-६३॥
शस्ते द्वे तुलसी सिताम्बुजमथो रक्ताब्जपालाशके
जातीकुब्जकमाधवीदमनकैः पुन्नागनागासनैः।
नन्द्यावर्तशमीस्थलाब्जविजयासन्मङ्किाचम्पकै-
र्बिल्वं चोत्पलकेतकाद्यभिनवं कुन्दं तथा पाटलम्॥ ८-६४॥
लक्ष्मीदेविसहाः सभृङ्गमुसलीभीतेन्द्रवल्ल्यस्तथा
भद्रा श्रीपतिलङ्घिता च दशमी दूर्वाथ जम्बूच्चदम्।
कल्हारं करवीरमेकदलकं पद्मं कुशाः कैरवं
रक्तं चेति विलोमतोधिकफलं पुष्पं भवेद् वैष्णवम्॥ ८-६५॥
अम्भोजोत्पलबन्धुजीवविजयाः पुन्नागनागान्यथो
जातीकुन्दकरण्डचम्पकजपायूथीरमापाटलैः।
बिल्वाशोकहयारिकुब्जदमनैर्मन्दारदूर्वादलै-
र्नन्द्याह्वाप्यपराजितेति कुसुमान्युक्तानि शाक्ताम्यलम्॥ ८-६६॥
निर्गन्धानि तथोग्रगन्धकटुकान्यस्पृश्यदुष्टानि चा-
प्यन्यायोपहृतानि वा नखकृमीचिह्नानि तुन्नानि वा।
ऊर्णासूत्रशिरोरुहाद्युपगतैर्म्लायत्पुराणानि वा

कालातीतविलङ्घितानि च तथा पुष्पाण्यथो वर्जयेत्॥ ८-६७॥
त्रेधा चोदितपुष्पजातिषु न चेदुक्तानि वर्ज्यानि तान्य-
न्योन्यप्रतिषेधदर्शनमपि स्याद् यत्र चोक्तं विना।
अन्यस्मै परिकल्पितानि च तथा वर्ज्यानि तद् युक्तितो
यद्यस्यात्र विशेषतस्तु विहितं तद्दैवतं तोषयेत्॥ ८-७८॥
सूर्याग्न्योस्त्रिविधैस्तथैव कुसुमैरिष्टं हि विघ्नेशितुः
शाक्तान्यप्यथ शाम्भवानि च तथा स्कन्दार्यचण्डादिषु।
शाक्तान्येव मनोजवाग्गिरिसुतादुर्गाष्टमातृप्रिया-
ण्यम्भोजासनदेवराजकमलाः पूज्यास्तथा वैष्णवैः॥ ८-६९॥
नन्द्यावर्तैरर्धरात्रे च काल्ये प्राग् रात्रेः स्यान्मालतीमल्लिकाभिः।
अह्न्येवाब्जैरुत्पलैः सर्वदा वा हैमैः प्रातः केसरैरर्धरात्रे॥ ८-७०॥
आ वैवर्ण्यात् केसराणां सरोजं बैल्वं पत्रं दामनं च त्रिरात्रम्।
पूजायोग्यं कार्णिकारं तु पक्षं न स्याज्जीर्णं मासषट्कं बकाख्यम्॥
८-७१॥

श्री

इकाई १७

वास्तुशास्त्र व शकुन

१७.० उद्देश्य

इस इकाई में हम शकुन (शगुन) शास्त्र के महत्व का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त-

आप वास्तुविद्या में शकुन शास्त्र का महत्व बता पाएँगें।

१७.१ इकाई की उपयोगिता

किसी महत्वपूर्ण कार्य को प्रारम्भ करते समय इस बात का अध्ययन किया जाता है कि उस समय प्रकृति (नेचर) किस प्रकार के संकेत दे रही है। **प्रकृति के संकेत** को ही हम शकुन शास्त्र कहते हैं। उस समय होने वाली घटना को भी शकुन कहते हैं। महत्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ करते समय किस प्रकार की घटना हुई। जैसे शास्त्र में कहा गया है कि भूमि खरीदते समय मधुर ध्वनि का सुनाई देना शुभ शकुन है। इस प्रकार के शुभ संकेत से मन प्रसन्न रहता है, अतः शुभ शकुन कहा है।

१६.२ शकुन

प्राचीन विधाओं में शकुनशास्त्र, एक पूर्ण एवं स्वतन्त्र विधा या विद्या है। इस विधा का प्रयोग, छोटे-बड़े, अनेकानेक अवसरों पर किया जाता है। इस विद्या का प्रयोग न केवल वास्तुशास्त्र वरन् ज्योतिष शास्त्र में भी, एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में होता है।

जो कार्य महत्वपूर्ण हो, जैसे भूमि का चयन करना या खरीदना, गृहारम्भ या स्तम्भ की स्थापना, गर्भविन्यास, द्वार की स्थापना करना, गृहप्रवेश करना, ऐसे समय में प्रकृति के

संकेत, शकुन शास्त्र के रूप में हमें प्राप्त हैं तथा वास्तु से सम्बन्धित जो भी महत्वपूर्ण कार्य को प्रारम्भ करें, उस समय शकुन का विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

ऐसा कहा गया है कि पूर्वी भारत में एक विशेष प्रकार की बर्ड या चिड़िया है, जो अपना घोंसला, वृक्ष पर बनाती है। उसके घोंसले की ऊँचाई से लोग उस वर्ष होने वाली वर्षा का पूर्वानुमान लगाते हैं।

भूकम्प आदि आने के पूर्व भी, अनेक पशु-पक्षी उस स्थान को काफी समय पहले छोड़कर, अन्य स्थान पर चले जाते हैं। पिछले वर्षों में जब गुजरात में भूकम्प आया, तब यह देखा गया कि उस दिन चूहे, कुत्ते इत्यादि पशु, अपने नियत समय व स्थान पर नहीं आए थे तथा उस स्थान को छोड़कर अन्य स्थान पर चले गये थे।

बारिश शुरू होने पर, एक दो दिन पहले हम यह देखते हैं कि चीटियाँ, अपने अण्डे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती हैं तथा इससे हम यह अनुमान लगा लेते हैं कि एक दो दिन में बारिश होने वाली है।

इन पशु-पक्षियों की चेतना, हम सामान्य जन की चेतना के समान (तरह) ज्यादा आवरित (ढकी हुई) नहीं है। हमने अपनी चेतना पर बहुत अधिक लिखकर, उसे आवृत कर रखा है, उसे ढक रखा है, अतः हम प्रकृति के स्पन्दन व संवेदन सुनकर भी, सुन नहीं पाते हैं। जबकि पशु-पक्षी उन स्पन्दनों को, हमारी अपेक्षा शीघ्रता से तथा काफी पहले ग्रहण कर लेते हैं।

ज्योतिष शास्त्र के लगभग सभी महत्वपूर्ण ग्रन्थों में, विशेष अवसरों के लिए शुभाशुभ शकुनों को बताया गया है।

इन ग्रन्थों में यात्रा के लिए शुभ मुहूर्त्त को बताया गया है तो उसके साथ ही ग्रन्थकारों ने, यात्रा के समय होने वाले शुभाशुभ शकुनों को भी कहा है।

कई विद्वत जन, केवल शकुन शास्त्र के आधार पर ही, शुभाशुभ परिणामों को कहते हैं, बताते हैं। कई बार प्रायोगिक रूप से यह देखा गया है कि कई जानकार कभी-कभी मुहूर्त्त इत्यादि को थोड़ा कम महत्व देकर या दूसरे शब्दों में कहें तो शुभ मुहूर्त्त में भी शुभ शकुन को घटित होने पर ही कार्य को आरम्भ करते हैं, शुरू करते हैं।

केवल शुभ शकुन एवं निमित्त को जानकर, महत्वपूर्ण कार्यो को प्रारम्भ किया जा सकता है। प्राचीन समय में राजा युद्ध आदि का विचार भी शकुन एवं निमित्त देखकर ही करते थे।

शकुन शास्त्र केवल पशु-पक्षी का दिखना या बिल्ली का रास्ता काटना ही नहीं वरन् अनेकानेक सामग्री का दिखना, विभिन्न आवाजों का सुनाई देना, आकाशीय घटनाएं होना, स्वाभाविक एवं अस्वाभाविक गतिविधियों का होना आदि सब कुछ शकुन शास्त्र में ही आता है।

एक और महत्वपूर्ण तथ्य है कि कोई भी शुभ शकुन, किसी कार्य विशेष के लिए ही शुभ होता है, वही शुभ शकुन किसी दूसरे कार्य के लिए अशुभ हो सकता है। जैसे मधुर स्वर का सुनाई देना, यह शकुन, गृह खरीदने जाते समय शुभ है या भूमि चयन करते समय के लिए भी शुभ है, परन्तु यही शकुन, स्तम्भ की स्थापना के समय अशुभ हैं।

मधुर ध्वनि (गीत की ध्वनि) का सुनाई देना गृह खरीदने जाते समय उत्साह का वर्धन करता हैं, अर्थात उत्साह को बढ़ाता है जबकि स्तम्भ की स्थापना करते समय जब हमें अत्यधिक एकाग्रता की आवश्कता होती हैं, ऐसे समय में मधुर स्वर, ध्यान अर्थात एकाग्रता को भंग करता है, अतः स्तम्भ स्थापन करते समय मधुर ध्वनि (गीत की ध्वनि) शुभ नहीं है।

१७.३ शकुन

संगति-

अब विश्वकर्म प्रकाश ग्रन्थ के अनुसार गृह-आरंभ करते समय, शुभ शकुन को देखें-

(ध्वनि के अनुसार) भूमि पर प्रवेश करते समय पुण्याहवाचन (पवित्र शब्द), शंख की आवाज, पढ़ने के शब्द, पानी से भरा घड़ा, ब्राह्मण, वीणा, क्षेत्र की आवाज, पुत्र की माता (पुत्र सहित माता), गुरु, मृदंग की ध्वनि (आवाज), वाद्य यन्त्रों की आवाज, भेरी (बड़ा ढोल) की आवाज सुनाई देना शुभ होता है।

(दिखने के अनुसार) स्वच्छ कपड़ों को पहने हुए कन्या, सुस्वाद व सुगन्धित मिट्टी, फूल, सोना (स्वर्ण), चांदी, मोती, मूँगा तथा अच्छे खाने की चीजों का दिखना शुभ होता है।

हिरण, सुरमा (एक प्रकार का काजल), बंधा हुआ पशु, पगड़ी, चन्दन, शीशा (मुख देखने का कांच), पंखा तथा वर्धमान (वर्धमानक- विशेष प्रकार की तश्तरी, ढक्कन) के दर्शन होना (दिखना) शुभ होता है।

मांस, दही, दूध, पालकी, छत्र (छाता), मछलियाँ, मिथुन (स्त्री-पुरुष

का जोड़ा) इनका दिखाई देना आयु व स्वास्थ्य की वृद्धि करने वाला होता है।

साफ सुथरा कमल का फूल, गाने की आवाज, सफेद बैल, हिरण, ब्राह्मण इनका गृह कार्य में आते जाते समय दिखाई देना शुभ होता है। हाथी, घोड़ा, सौभाग्यवती महिला, श्रेष्ठ स्त्री (औरत) का दिखाई देना धन, पुत्र, सुख व स्वास्थ्य को बढ़ाता है।

वेश्या, अंकुश, दीपक की माला, आभूषण (गहने) पहने हुए कन्या, तथा बारिश का होना घर को बनाना शुरू करते समय शुभ होता है।

अशुभ शकुन

(घर बनवाना शुरू करते समय) बुरे शब्द (अपशब्द), शत्रु की आवाज, शराब, चमड़ा, हड्डी, घास, भूसी, सर्प चर्म, कोयला (का दिखना अशुभ होता है।)

कपास, लवण (नमक), कीचड़, नपुंसक, तैल, दवाई, मल (विष्ठा), काले अनाज, बीमार, जिसने उबटन (तेल आदि) लगाया हो (ऐसा व्यक्ति दिखाई देना अशुभ होता है।)

पतित (स्वधर्म से गिरा हुआ, युद्ध में हारा हुआ), जटाधारी (गृहस्थ आश्रम को छोड़कर जाने वाला व्यक्ति), उन्मत्त (पागल), गंजा, नंगे सिर वाला, ईंधन (जलाऊ सामान), रोने या विलाप करने का शब्द (आवाज), पक्षी, मृग व मनुष्य एक साथ (इनका दिखाई देना अशुभ होता है।)

व्याख्या-ऊपर शुभ व अशुभ शकुन बताए गए हैं। यह बताया गया है कि किन वस्तु या आवाज का दिखना, सुनाई देना, शुभ या अशुभ होता है। यदि एक सामान्य या सरल शब्द में कहें तो केवल इतना कहे कि जिन वस्तु या शब्द के दिखने या सुनने से, स्थिर मन प्रसन्न होता हैं, उत्साहित होता है, अच्छा लगता है वो सभी शुभ है तथा जिनको सुनने से मन खिन्न होता है, हतोत्साहित होता है, उत्साह ठण्डा होता है तो अशुभ शकुन हैं।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ सरल शब्दों में बताएँ कि शकुन शास्त्र किसे कहते हैं?

प्रश्न २ वास्तुशास्त्र में शकुन शास्त्र का महत्व बताएँ।

प्रश्न ३ शकुन को कब अत्यधिक महत्व देना चाहिए?

१७.५ अशुभ शकुन घटित होने पर क्या करें?

अशुभ शकुन घटित होने पर, कार्य को स्थगित कर ध्यान, मन्त्र जप तथा यदि संभव हो तो हवन इत्यादि करने के बाद, शुभ शकुन घटित होने पर ही कार्य को प्रारम्भ करना चाहिए।

१७.६ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि वास्तु तथा ज्योतिष शास्त्र में शकुन को अत्यधिक महत्व दिया गया है। सभी महत्वपूर्ण कार्य को शुभ शकुन में ही प्रारम्भ करना चाहिए। अशुभ संकेत होने पर कार्य स्थगित कर शुभ शकुन में प्रारम्भ करें।

शकुन शास्त्र या निमित्त शास्त्र की जानकारी वास्तुशास्त्री को होना चाहिए।

१७.७ अभ्यास

इस बात का अध्ययन करें कि किसी व्यक्ति ने जब कार्य प्रारम्भ किया तो किस प्रकार के संकेत उसे मिले तथा उसके बाद कार्य में सफलता मिली या नहीं। एक विवरणिका तैयार करें।

१७.८ उपयोगी पुस्तकें

विश्वकर्म प्रकाश-अध्याय १

राजवल्लभ- अध्याय १४

मानसार

श्री

इकाई १८

सामुद्रिक शास्त्र

१८.० उद्देश्य

इस इकाई में हम सामुद्रिक शास्त्र अर्थात अंग विद्या का महत्व प्रतिपादित करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

वास्तुविद्या में सामुद्रिक शास्त्र का महत्व बता पाएँगे।

प्रतिमा निर्माण में सामुद्रिक विद्या का ज्ञान आवश्यक है यह बता पाएँगे।

१८.१ इकाई की उपयोगिता

अन्य विधाओं के साथ-साथ ही एक स्थपति को, अंग विद्या का ज्ञान भी होना चाहिए। जितनी अधिक विधाओं की जानकारी एक स्थपति को होगी, उतने ही अधिक दृष्टिकोण से, वह किसी बात का विशेष अध्ययन कर सकता है, किसी भी वास्तुदोष को हर दृष्टकोण से देखकर, आसानी से तथा जल्दी ही दोष का निवारण कर सकता है।

अंग विद्या के द्वारा, व्यक्ति के लक्षणों का पता चलता है। उसका शरीर देखकर उस व्यक्ति के बारे में बताया जा सकता है। माना लो कि एक आम का वृक्ष है, उस पर अभी फल नहीं लगा है, तो भी जो जानकार है, वह वृक्ष के पत्ते देखकर, सूंघकर इत्यादि के द्वारा यह बता सकता है कि यह आम का वृक्ष है। इस वृक्ष में आम का ही फल लगेगा। ठीक इसी प्रकार, व्यक्ति के शरीर के अंगों को देखकर, व्यक्ति के गुणों का पता लगाया जा सकता है।

व्यक्ति के शरीर में उसके विभिन्न अंगों के अनुपात के माध्यम से उसके गुण प्रकट होते हैं। जैसे जिसकी भुजाएँ घुटने तक लम्बी होती है वह महापुरुष होता है।

जिसके मुख की लम्बाई की तुलना में पूरे शरीर की लम्बाई ९ या १० गुना हो वह व्यक्ति भी महापुरुष होता है। १० गुना लम्बाई वाला पुरुष ब्रह्मा, विष्णु व शिव के समान गुणों से युक्त होता है। यह सारा वर्णन मानसार, मयमत, मत्स्य पुराण आदि ग्रन्थों के प्रतिमा विज्ञान अध्याय में मिलता है।

किसी कारणवश उस व्यक्ति का अशुभ समय चल रहा हो और यदि वह व्यक्ति महापुरूष या अन्य लक्षण से युक्त हो तो उसे, उसके जीवन के बारे में आश्वस्त किया जा सकता है।

गहराई से अध्ययन करने पर हम पाते है कि व्यक्ति के चलने, उठने, बैठने के ढंग या तरीके से भी व्यक्ति के गुण व्यक्त होते हैं। प्रश्न पूछते समय उसका हाथ कहाँ है, माथे पर हाथ रखकर प्रश्न पूँछा है तो उसका एक अर्थ है, पेट पर हाथ रखकर प्रश्न पूँछने का दूसरा आदि। इस प्रकार से अध्ययन होने से हमें वास्तु सुधार में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त देवी-देवताओं की प्रतिमा निर्माण के लिए भी प्रतिमा विज्ञान का ज्ञान होना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ सामुद्रिक शास्त्र शब्द से आप क्या समझते हैं।

प्रश्न २ वास्तुशास्त्र व सामुद्रिक विद्या में क्या संबंध है।

प्रश्न ३ प्रतिमा निर्माण के लिए किस विद्या का ज्ञान होना आवश्यक है।

१८.२ अभ्यास

सफल व्यक्तियों के शरीर के मान का अनुपात लेकर एक विवरणिका बनाएँ।

चित्र,

फोटो

१८.३ उपयोगी पुस्तकें

मानसार

मयमत

मत्स्य पुराण

बृहद संहिता

इकाई १९

प्रतिमा विज्ञान

१९.० उद्देश्य

इस इकाई में हम देवताओं की मूर्ति अर्थात प्रतिमा विज्ञान का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

वास्तुविद्या व प्रतिमा विज्ञान का आपसी संबंध बता पाएँगें।

१९.१ प्रतिमा विज्ञान

प्रतिमा सामान्य रूप से मूर्ति इत्यादि को कहते हैं, परन्तु यहाँ हम जिस विषय का उल्लेख कर रहे हैं उसका सम्बन्ध चित्र आदि से भी है। घर में अथवा ऑफिस में लगाई जाने वाली प्रतिमा या चित्र, उस स्थान पर निवास करने वाले व्यक्ति पर, अपना गहरा प्रभाव डालते हैं, जिसे हम आन्तरिक सज्जा में देख चुके हैं। इसके अतिरिक्त घर के लिए कौन सी प्रतिमा उपयुक्त है, घर में कौन-कौन से देवता की मूर्ति अथवा चित्र होना चाहिए। इसका ज्ञान भी परम आवश्यक है। इसके साथ ही किन देवी-देवता की मूर्ति घर में नहीं होना चाहिए तथा घर के बाहर द्वार पर, कौन-कौन से देवता को स्थापित करना शुभ होता है, केवल इतना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके अलावा कौन से देवता का चित्र किस दिशा में होना चाहिए, इत्यादि बातों का ज्ञान एक वास्तुशास्त्री को होना चाहिए।

सामान्य रूप से घर में पूजा के लिए मूर्ति का आकार, गृहस्वामी के अंगूठे से एक बालिस्त तक का हो सकता है। इससे बड़ी प्रतिमा, घरों के लिए शुभ फल नहीं देती है। बहुत बड़े घर में प्रतिमा की अधिकतम ऊँचाई १६ अंगुल हो सकती है। इससे बड़ी प्रतिमा अशुभ फल देती है। प्रतिमा सोने, चाँदी, ताम्बा, पत्थर, लकड़ी या शुभ धातु की बनी होनी चाहिए। ये प्रतिमा शुभ आकार तथा उचित दिशा में स्थापित होने पर ही शुभ परिणाम देती है।

प्रतिमा विज्ञान का एक महत्वपूर्ण एवं सशक्त अंग है तालमान। एक बालिस्त (span) को एक ताल कहा है। प्रतिमा के मुख की लम्बाई (मान), एक ताल होती है। तालमान वास्तव में प्रतिमा के अथवा किसी चित्र के विभिन्न अंगों का अनुपात है। पूरी प्रतिमा की ऊँचाई एक ताल

से १० ताल तक हो सकती है। विभिन्न देवी-देवता की प्रतिमा अलग-अलग तालमान में बनाई जाती है या होती है। जैसे गणेशजी की प्रतिमा, ५ ताल से बनी हो तो शुभ फल प्रदान करती है अन्यथा अशुभ फल की दाता होती है। ब्रह्मा, विष्णु, व महेश की प्रतिमा, १० ताल मान में होना चाहिए। उनके शरीर के अंगों का मान भी उचित अनुपात में होना चाहिए।

प्रतिमा का मान	परिणाम
एक अंगुल की प्रतिमा	श्रेष्ठ
दो अंगुल की प्रतिमा	धन का नाश करने वाली
तीन अंगुल की प्रतिमा	सिद्धि करने वाली
चार अंगुल की प्रतिमा	दुख देने वाली
पाँच अंगुल की प्रतिमा	धन-धान्य, यश की वृद्धि करने वाली
छः अंगुल की प्रतिमा	उद्वेग करने वाली
सात अंगुल की प्रतिमा	गौ आदि पशु की वृद्धि करने वाली
आठ अंगुल की प्रतिमा	हानिकारक
नौ अंगुल की प्रतिमा	पुत्र आदि की वृद्धि
दस अंगुल की प्रतिमा	धन का नाश करने वाली
ग्यारह अंगुल की प्रतिमा	सब इच्छित कार्य-सिद्धि करने वाली

इससे अधिक अंगुल वाली प्रतिमा, घर में पूजा के लिए नहीं रखना चाहिए। इस प्रकार से सम अंगुल की प्रतिमा अशुभ तथा विषम अंगुल की प्रतिमा शुभ फल देती है। प्रतिमा विज्ञान का ज्ञान, वास्तु में सहायक होता है। मंदिर निर्माण के लिए प्रतिमा-विज्ञान का ज्ञान अनिवार्य है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ प्रतिमा किसे कहते हैं?

प्रश्न २ वास्तुविद्या में प्रतिमा विज्ञान का महत्व बताएँ।

प्रश्न ३ सामान्य रूप से घर में प्रतिमा की अधिकतम ऊँचाई कितनी हो सकती है।

प्रश्न ४ सम अंगुल की प्रतिमा घर के लिए शुभ होती है या नहीं।

प्रश्न ५ विषम अंगुल की प्रतिमा घर के लिए शुभ है या अशुभ।

प्रश्न ६ प्रतिमा किन-किन पदार्थों की बनी हो सकती है।

प्रश्न ७ तालमान शब्द से आप क्या समझते हैं।

प्रश्न ८ ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की प्रतिमा कितने तालमान में बनाई जाती है?

१९.३ प्रतिमा व दीवार पर कोटिंग (पुट्टी, लेप)

वास्तुशास्त्र में प्रतिमा, दीवार इत्यादि को बहुत अधिक समय तक वातावरण के प्रभाव (बारिश, नमी, धूप) इत्यादि से बचाने के लिए, प्रतिमा या दीवार आदि पर एक विशेष प्रकार का लेप (कोटिंग) किया जाता है, जिसे **वज्र लेप** कहते हैं। वास्तुविद्या में अनेकानेक प्रकार के वज्र लेप का वर्णन है। इन वज्रलेप को लगाने से, वह दीवार या प्रतिमा, सीजन प्रूफ हो जाती है तथा यह लेप, हजारों वर्ष तक टिकता है, छूटता नहीं है।

बोध प्रश्न

प्रश्न ९ लेप किसे कहते हैं?

प्रश्न १० वज्र लेप शब्द से आप क्या समझते हो?

१९.४ वज्रलेप के पदार्थ व विधि

बृहत संहिता ग्रन्थ के अध्याय ५७ श्लोक क्रमांक १ से ३ में बताया गया है कि कच्चे तेंदुफल, कच्चे केथफल, सेमल के फूल, शालवृक्ष के बीज, धामन वृक्ष की छाल एवं वच, इनको बराबर मात्रा में लेकर, एक द्रोण भर पानी में अर्थात २५६ पल (१०२४ तोला) (एक तोला लगभग १२ ग्राम होता है।) डालकर क्वाथ (पानी में उबालकर उनका निकाला हुआ गाढ़ा रस) बनाए। जब पानी का आठवाँ भाग रह जाए, तब नीचे उतार कर, उसमें श्रीवासक वृक्ष का गोंद, हीराबोल, गुग्गल, भीलवाँ (भीलावाँ), देवदारू का गोंद (कुंदुरु) राल, अलसी और बेलफल इनके बराबर औषधियों का चूर्ण मिलाने पर वज्रलेप तैयार होता है। इसे गरम-गरम लगाने पर, यह एक करोड़

वर्ष तक रहता है।

(विष्णु धर्मोत्तर पुराण में बताया गया है कि) तीन प्रकार की ईंट के चूर्ण में गुगल, मोम, महुआ, मूर्वा, गुड़, कुसुम का फूल तथा इन सबके बराबर तेल मिलाए। फिर उसमें आग पर पकाया हुआ, एक तिहाई चूना, दो भाग बेल का गूदा, मषक (मूसी), कष (खैर) तथा उसके अनुरूप बालू मिलाए। उसके बाद चिकनी छाल के पानी में, इस पदार्थ को एक महीने तक भिगाए। इससे यह मिश्रण कोमल हो जाता है। इसका सूखी दीवार पर लेप करें, लेप चिकना समान व दृढ़ हो, ऊँचा-नीचा न हो, बहुत मोटा या पतला भी नहीं होना चाहिए।

इस प्रकार बार-बार लिपी हुई दीवार जब सूख जाए, तब उसे तेल, मिट्टी व चूने के मिश्रण से तैयार किए हुए लेपों एवं चिकने मंजनों से दीवार पर, सावधानी से वारनीश करें। इसके बाद बार-बार दूध से सींच कर तथा तुरन्त पौंछकर, दीवार को सूखा डालें। इस प्रकार की लिपाई, सौ वर्ष में भी नष्ट नहीं होती है।

यदा शुष्कं भवेत् कुड्यं तत्प्रलिप्तमसत्कृतम्।
तदा मृदा सर्जरसतैलभागावियुक्तया।
श्लक्ष्णीकुर्यात् प्रयत्नेन लेपनैः श्लक्षअममज्जैनः मुहूर्मुहुश्न क्षीरण रिक्तवा मार्जनयत्नतः।

बोध प्रश्न

प्रश्न ११ लेप बनाने के लिए किन-किन पदार्थों का प्रयोग करते हैं?

प्रश्न १२ वज्रलेप बनाने की एक विधि का वर्णन कीजिए।

१९.५ रंग बनाने के द्रव्य

रंग बनाने के लिए निम्न पदार्थो का प्रयोग करते हैं-

सोना, चाँदी, अबरक, ताम्बा, राजावन्त (राजावर्त), सिन्दूर, रांगा (त्रकुरेव), हरताल, चूना, लाख, हिंगुल्य तथा नील।

लोहे का रंग मोटा होता है, अबरक का पतला या पिघलाने वाला है। चित्रकारी के लिए लोहे का रंग उपयुक्त है। रंग में तुलसी, भूलिंब, चम्पा, कुश,

मोलसिरी का काढ़ा डालने से टिकाऊपन आता है। रंगों में स्थायित्व लाने के लिए, सिन्दूर तथा दूध का प्रयोग करना चाहिए। कुछ समय के लिए उत्तम दूध में भिगोए हुए वस्त्र तथा मोर की पूँछ से, चित्र को ढक देना चाहिए, ऐसा चित्र पानी पड़ने पर भी नष्ट नहीं होता है और अनेक वर्ष ठहरता है। यह सारा ज्ञान, एक वास्तुशास्त्री को मन्दिर का निर्माण करते समय, सहायक होता है। एक वास्तुशास्त्री, जिसे मन्दिर आदि का निर्माण करना हो या ऐसा निर्माण करना हो जो कई वर्षो तक टिके, स्थिर रहे तो वज्रलेप का ज्ञान **आवश्यक है** ।

बोध प्रश्न

प्रश्न १३ रंग बनाने के लिए उपयोग में आने वाले पदार्थों के नाम लिखें।

प्रश्न १४ लोहे का रंग मोटा होता है या पतला।

प्रश्न १५ चित्रकारी के लिए ..... के रंग का प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न १६ रंगों में स्थायित्व लाने के लिए ...... तथा .... का प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न १७ कुछ समय के लिए उत्तम ... में भिगोए हुए वस्त्र तथा ...... पूँछ से चित्र को ढंक देना चाहिए, ऐसा चित्र पानी पड़ने पर भी नष्ट नहीं होता है।

१९. ६ अभ्यास

पुरातत्व विभाग या प्राचीन मन्दिर के जीर्णोद्धार के समय जाकर देखें कि पुनर्रोद्धार के समय किन पदार्थों का प्रयोग किया जाता है।

१९.७ उपयोगी पुस्तकें

बृहद संहिता-अध्याय ५७ वज्रलेप

मयमत अध्याय १८

समरांगण सूत्रधार अध्याय ७३

विष्णुधर्मोत्तर पुराण

नग्नजित्-चित्रलक्षण

इकाई २०

वास्तुपूजा

२०.१ उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य वास्तु व कर्मकाण्ड (वास्तु पूजा) का संबंध स्थापित करना है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

वास्तु में पूजा का महत्व बता पाएँगें।

२०.२ इकाई की उपयोगिता

वास्तुशास्त्र के सभी ग्रन्थों में पूजा के द्वारा वास्तुदोष दूर करने की विधि का वर्णन मिलता है। वास्तुशान्ति तथा वास्तुपूजा का विधान सभी ग्रन्थ में उपलब्ध है। वास्तुशान्ति व वास्तुपूजा वास्तव में बिना तोड़फोड़ के वास्तु दोष दूर करने का उपाय है।

यहाँ हम वास्तुपूजा को ही कर्मकाण्ड के रूप में देखने का प्रयास कर रहे हैं।

२०.३ महत्व

जिस प्रकार से एक मनुष्य के शरीर में सभी अंगो का होना तथा उनका स्वस्थ या निरोग या दोष रहित होना आवश्यक है, उसी प्रकार वास्तुविद्या के विभिन्न अंग, विभिन्न भाग आपस में एक दूसरे से जुड़े हैं तथा एक-दूसरे पर आश्रित हैं। मानव शरीर में आँख, कान, नाक, हाथ, पैर इत्यादि सभी अंग महत्वपूर्ण हैं। इन बाहरी दिखने वाले अंगों के अतिरिक्त जो आन्तरिक अंग हैं, जैसे लीवर, फेफड़े, इत्यादि ये सभी अंग भी दोष रहित होना अत्यन्त आवश्यक हैं। किसी भी अंग में दोष होने पर पूरा शरीर रूग्ण या बीमार हो

जाता है।

ठीक इसी प्रकार इस वास्तुविद्या के विभिन्न अंगों की पूरी एवं सही जानकारी एवं ज्ञान परम आवश्यक है। यहाँ यही तात्पर्य है कि भले ही एक वास्तुविद्, सारे कर्मकाण्ड (पूजन इत्यादि) को स्वयं सम्पन्न न भी करें, तो भी उसे पूरे विधि-विधान की जानकारी व ज्ञान आवश्यक है।

मकान में गृह-प्रवेश के पहले वास्तुशान्ति कराने के पश्चात ही वह गृह या घर कहलाता है, होता है। वास्तुशान्ति की प्रक्रिया, वास्तव में घर को सकारात्मक ऊर्जा से भर देने की एक वैदिक प्रक्रिया है, विधि है। किसी भी शिल्प या मूर्ति को, प्राण प्रतिष्ठा के द्वारा अत्यधिक पॉजिटिवली चार्ज किया जाता है। इसके बाद ही, वह पूजा के योग्य होती है तथा अपना प्रभाव देती है।

वास्तुशास्त्र के लगभग सभी ग्रन्थों में वास्तु के विभिन्न देवताओं को बलि देने के विधान का वर्णन मिलता है। फिर चाहे वो विश्वकर्मप्रकाश नामक ग्रन्थ हो या मानसार या मयमत, समरांगण सूत्रधार हो या राजवल्लभ।

तो ऐसी क्या बात हैं कि सभी ग्रन्थ इस बात पर एक मत है कि देवताओं को भोजन के पदार्थ देना ही है, न देने पर वे देवता रुष्ट हो जाते हैं, अर्थात नाराज़ हो जाते हैं तथा विपरीत प्रभाव देते हैं।

जैसा कि हम देख चुके हैं कि देवता अपने नाम के अनुरूप ऊर्जा देते है, अपने नाम या प्रतिमा विज्ञान के अनुरूप अपनी ऊर्जा को अभिव्यक्त करते हैं एवं उसके अनुसार प्रभाव देते है। अब यदि देवता के पद में कोई दोष है, तो उस दोष का निवारण किस प्रकार किया जाए इसके लिए वास्तु के विभिन्न ग्रन्थों में विधान दिए गए है। इन विधानों के द्वारा बगैर किसी तोड़-फोड़ के वास्तु दोष का सुधार किया जा सकता है, उसका सबसे सशक्त पक्ष या अंग है बलि कर्म। ग्रन्थ चाहे विश्वकर्म प्रकाश हो उसमें सबसे पहले अध्याय में ही बताया गया है कि वास्तुदोष के लक्षण क्या-क्या है? उसके तुरन्त बाद लिखा गया है कि इन दोषों के निवारण के लिए वास्तुशान्ति करें।

कपोतकगृहावासे मधूनां निलये तथा।
अन्यैश्चैव महोत्पातैर्दूषिते शान्तिमाचरेत्।।२३।।
ऐसे घर में वास्तुशान्ति को करें।।२३।। विश्वकर्म

प्रकाश अध्याय १।।

इसके अलावा समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ के गृह-शान्ति कर्मविधि नामक अध्याय के श्लोक ५५-५६ में बताया गया है कि भवनपति भंग उत्पात (वास्तु दोष) से दुखी हो तो प्रज्ञावान् शास्त्र के जानकार स्थपति को बुलाकर वास्तु विभाग से जो देव (पद का देवता) निश्चित किया जाए, उसको आहुति देकर प्रायश्चित करना चाहिए। अर्थात यदि कोई व्यक्ति किसी वास्तुदोष के कारण परेशानी में हैं, तो उसे स्थपति को बुलाकर, जिस स्थान में (वास्तुपुरुष के जिस अंग में) परेशानी हो, उस स्थान के देवता की आहुति के लिए बताया जाए। जिससे उस स्थान पर, उस देवता को आहुति देने से वह परेशानी खत्म होगी तथा वह व्यक्ति सुखी होगा।

तो वास्तुदोष होने पर उस देवता की ऊर्जा उस घर या स्थान पर निवास करने वाले व्यक्ति को प्राप्त नहीं होती है। अतः ऐसे में उस स्थान पर स्थपति को बुलाकर उस देवता का नाम व पद निर्धारित किया जाता है, कि किस पद में दोष है, उसके बाद उस देवता को आहुति (जिसे बलि कहा गया है, जिसे हम हवन के नाम से जानते हैं।) दी जाती है।

उस देवता का जो भोजन होता हैं, उसकी जब हम आहुति देते हैं तो वह पदार्थ भस्मी भूत होकर अपनी ऊर्जा प्रदान करता है तथा उस जगह को जहाँ वास्तुदोष है, उसे ऊर्जा से भर देता है।

वर्ष में कम से कम एक बार अवश्य हवन करवाना चाहिए, ऐसा करने से वास्तुदोष दूर होकर घर में शान्ति बनी रहती है।

२०.४ देवता व बलि के पदार्थ

ब्रह्मा	फूलों का गुच्छा, धूप, गन्ध, दूध, शहद, घी, खीर, औदन
आर्यमा	खाने वाले फल
विवस्वत	तिल, भात व दही
मित्र	दही
महीधर	दूध
सवित्र	दूध, भात, घी, मछली (धान्य)
सावित्र	गुड़ व जल

इन्द्र	गुड़ व जल
इन्द्रराज	मूंग
रुद्र	गूगल की धूप व कपूर आदि सुगन्धित पदार्थ
रुद्रजय	उबला हुआ अन्न
आपवत्स	शुद्ध अन्न
अपवत्स	सफेद कमल
आपवत्स	दही
सावित्र	लड्डू
ईश	घी
पर्जन्य	फल व घी
जयन्त	फूल व मक्खन
महेन्द्र	फूल व पिष्ठ
सूर्य	शहद व गन्ध
सत्य	शहद
भृश	मक्खन
अन्तरिक्ष	हल्दी चूर्ण, घी (अज्य), तगर (बीन्स)
अग्नि	शुद्ध दूध
पूषाण	परमान्न
वितथ	पकवान
गृहक्षत	मधु व अन्न
यम	क्षमान्त
गन्धर्व	अगरु
भृंगराज	समुद्र की मछली, भृंगिका
मृश	दही, भात
पितृ	तिल पिण्ड व ओदन
दौवारिक	बीज
सुग्रीव	मोदक
पुष्पदन्त	फूल व पानी
वरुण	खीर

असुर	सोने से युक्त पिष्टक व मदिरा
शोष	तिल-चावल
रोग	शुष्कमछली
मारुत	वसा व हल्दी
नाग	लिर्लाजा
मुख्य	धान्य का चूर्ण
भल्लाट	गुड़ व भात
सोम	खीर
मृग	साठी का चावल
अदिति	मोदक
उदिति	तिल, फूल व फल

२०.५ वास्तुदोष के लक्षण

संगति-अब किसी स्थान पर वास्तु दोष होने से क्या लक्षण उपस्थित होते हैं? इसका वर्णन करते हैं–

वज्राभि (वज्रग्नि) दूषिते भग्ने सर्पचाण्डालवेष्टिते।
उलूकवासिते सप्तरात्रौ काकाधिवासिते।।२१।।
मृगाधिवासते रात्रौ गोमार्जाराभिनादिते।
वारणाश्वादिविरुते स्त्रीणां युद्धाभिदूषिते।।२२।।
कपोतकगृहावासे मधूनां निलये तथा।

जो घर बिजली गिरने से दूषित हो, अग्नि से जलने से दूषित हो, भग्न (टूटा-फूटा) हो, जो घर साँप व चाण्डाल से घिरा हो, जिसमें उल्लू रहते हों, जिस घर में सात रात्रि से कौआ आदि रहते हों। जिस घर में हिरण हो, जिस घर में पालतू जानवर गाय, बिल्ली रात्रि में आवाज करें (असामान्य रुप से चिल्लाए)। हाथी व घोड़े आदि विशेष रुप से चिल्लाएँ। जो घर, महिलाओं के झगड़े से दूषित हों, जिस घर में कबूतर रहते हों, जिस घर में मधुमक्खियों का छत्ता हो और जो इसी प्रकार अन्य उत्पाद से दूषित हो।

२०.६ वास्तुदोष दूर करने हेतु वास्तुशान्ति

इसके अतिरिक्त विभिन्न वास्तुदोषों का पता लगाने के उपरान्त, उसके निवारण के लिए, दोष को दूर करने के लिए किए जाने वाले शान्ति कर्म, प्रायश्चित इत्यादि के विधि-विधान की पूरी जानकारी एवं ज्ञान, एक वास्तुविद को होना चाहिए, ताकि वह उन दोषों को दूर कर सके।

विश्वकर्म प्रकाश ग्रन्थ के पहले अध्याय में घर में विभिन्न वास्तुदोष के लक्षण बताए हैं, उसके तुरन्त बाद ही उन्हें दूर करने के लिए वास्तुशान्ति (पूजन-हवन आदि) का उपाय बताया है।

अन्यैश्चैव महोत्पातैर्दूषिते शान्तिमाचरेत्।।२३।।

इस प्रकार के दोष व अन्य बड़े उत्पातों से दूषित घर में वास्तुशान्ति (पूजा) करें।

समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ के गृहशान्ति नामक अध्याय में वास्तु दोष दूर करने के लिए बताया है कि पहले यह निश्चित करें कि गृह के किस भाग में दोष है, उसके पश्चात् उस दिशा के देवता (ऊर्जा) का पूजन (हवन) करें।

वास्तुशास्त्र के सभी ग्रन्थ में बलिकर्म (हवन) नामक अध्याय है। इस अध्याय में वास्तु के देवताओं के पूजनविधान का वर्णन है।

२०.७ अन्य कार्य हेतु उपयोगिता

पूजन के साथ, बड़े पूजन स्थल का निर्माण भी वास्तुविद्या का ही अंग हैं।

अलग-अलग उद्देश्यों के लिए किए जाने वाले यज्ञ, अलग-अलग होते हैं। यज्ञ में उपयोग में लाई जाने वाली वेदी का आकार तथा उनकी ईंटों की संख्या का निर्धारण भी अलग-अलग है। विभिन्न देवताओं को दी जाने वाली आहुतियाँ, उनके मन्त्र, उनके मंडल, उनकी दिशा आदि की विधिवत् जानकारी व ज्ञान, इन कार्यो में सहयोग प्रदान करता है तथा आवश्यक भी है।

२०.८ सारांश

इस प्रकार से हमने देखा कि एक कुशल वास्तुविद् को वास्तु पूजा, कर्मकाण्ड, यज्ञ वेदी आदि की जानकारी होना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

प्रश्न १ वास्तुशान्ति शब्द से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न २ वास्तुशान्ति क्यों आवश्यक हैं?

प्रश्न ३ वास्तुशान्ति में हवन क्यों आवश्यक है?

प्रश्न ४ एक वास्तुशास्त्री को वास्तुपूजन विधि का ज्ञान क्यों आवश्यक है?

२०.९ अभ्यास

वास्तुशान्ति के अवसर पर उपस्थित होकर पूजन विधि का अध्ययन कर विवरणिका बनाए।

२०.१० उपयोगी पुस्तकें

गृहकर्म शान्ति विधि, वास्तुप्रतिष्ठाविधि

वास्तुमाणिक्यरत्नाकर, मानसार

मयमत

विश्वकर्मप्रकाश अध्याय १ व ५

इकाई-२१

वास्तु व अध्यात्म विद्या का संबंध

२१.० उद्देश्य

इस इकाई में हम अध्यात्म विद्या तथा वास्तुशास्त्र के बीच में संबंध स्थापित करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

वास्तुशास्त्र तथा अध्यात्म विद्या में पारस्परिक संबंध के बारे में बता पाएँगे।

२१.१ अध्यात्म विद्या

वास्तुविद्या का ज्ञान या यूँ कहें कि वैदिक विद्या का ज्ञान, एकांकी नहीं है। किसी भी वैदिक विद्या का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, उस विद्या से संबंधित क्षेत्रों का ज्ञान होना आवश्यक है। ऐसे ही वास्तुविद्या व अध्यात्म विद्या का बड़ा गहरा संबंध है।

परम सत्य का साक्षात्कार करना अध्यात्म विद्या है।

यह सब कुछ अध्यात्म विद्या से एकदम जुड़ा हुआ है यह जगत क्या है? परम सत्य क्या है? अन्तिम सत्य क्या है? हम या मैं कौन हूँ? मेरा जन्म किस लिए हुआ है? मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है? पुरुषार्थ क्या है? इन सारे सवालों का जवाब, वैसे तो प्रत्येक मनुष्य के पास होना चाहिए, परन्तु कम से कम एक स्थपति को, एक वास्तु के शिक्षक को, एक वास्तु के परामर्शदाता को, इन सब बातों का पता होना ही चाहिए।

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि विद्याओं में मैं अध्यात्म विद्या हूँ (अध्याय १० श्लोक ३२), इस प्रकार उन्होंने इस विद्या को सर्वश्रेष्ठ बताया है। अब यह परम सत्य, यह ब्रह्म क्या है। इसी विषय को लेकर अनेक मत-मतान्तर एवं दर्शन प्रचलित हुए चाहे वो छः प्रमुख सनातन धर्म के दर्शन हो या चार प्रमुख बौद्ध दर्शन, परम सत्य की खोज में, व्यक्ति हमेशा से रहा है।

समस्त पदार्थो के मूल में एक ही है, सारा का सारा जगत एक से ही आया है, एक में ही स्थित है, पुनः उसी में विलीन हो जाएगा। लगभग सभी दर्शन के मूल में यही बात है। उस एक को किसी ने ब्रह्म (आत्मा, परमात्मा) कहा, किसी ने ईश्वर कहा, किसी ने शक्ति कहा, किसी ने शून्य कहा। इस भेद से विभिन्न दर्शन बने।

२१.२ विज्ञान की दृष्टि

आज हम विज्ञान की दृष्टि से भी देखने का प्रयास करें तो कुछ इस प्रकार से विश्लेषण कर पाते हैं। उदाहरण के लिए रूमाल है, अब यह रूमाल तन्तुओं या धागे से बना है अब यदि रूमाल में से धागा निकाल ले तो धागा ही शेष रहेगा, बचेगा, रूमाल नहीं रहेगा। इस प्रकार से हमने देखा कि रूमाल सत्य नहीं था बल्कि धागे कि एक विशेष प्रकार की बुनावट से प्रतीत होता था। तो धागा सत्य हुआ और रूमाल असत्य या झूठा हुआ। ठीक इसी प्रकार जब हम धागे का एनालिसिस करते है तो पाते है कि यह विभिन्न एलीमेन्टस हाईड्रोजन, कार्बन, सल्फर आदि से बना हुआ है। मान लो हम किसी विधि से हाईड्रोजन, कार्बन, सल्फर को अलग कर दे, निकाल ले तो केवल एलीमेन्टस ही शेष रह जाएगें तथा धागा असत्य या झूठ हो जाएगा। अब यदि एलीमेन्ट का भी एनालिसिस किया जाए तो हम इलेक्ट्रान, प्रोट्रॉन व न्यूट्रॉन पाते हैं। इसका भी अधिक एनालिसिस करने पर हम पार्टीकल व वेव (तरंग) पाते है, जो कि यहाँ अपने दर्शन में शिव व शक्ति के नाम से कहा गया है। शिव में से इ की मात्रा यदि निकाल दी जाए अर्थात उसमें से कामना या स्पन्दन न रहे तो वह शव या पार्टीकल रह जाता है।

इसी परम सत्य को हम ऊर्जा के रूप में पाते है जिसके गुण भी हमें ब्रह्म या आत्मा के समान मिलते हैं। ऊर्जा भी पैदा या उत्पन्न या नष्ट नहीं की जा सकती है, उसका केवल रूपांतरण होता है अतः सारा विश्व ऊर्जा से ही उत्पन्न हुआ है, ऊर्जा में ही स्थित है एवं ऊर्जा में ही पुनः विलीन हो जाता है।

विज्ञान की दृष्टि से उस परम सत्य को ऊर्जा कहा, अध्यात्म में उसे ब्रह्म या ईश्वर कहा है।

२१.४ अध्यात्म की दृष्टि

मानव जीवन के लिए चार पुरुषार्थ बताए गए हैं-धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष। जैसा कि हम देख चुके हैं कि

धर्म का अर्थ है-स्वधर्म का आचरण करना।

अर्थ का अर्थ है-स्वधर्म का पालन करते हुए धन कमाना।

काम का अर्थ है-स्वधर्म का पालन करते हुए कमाए गए धन से कामनाओं की पूर्ति करना।

मोक्ष का अर्थ है परम सत्य को पाना, उसका साक्षात्कार करना।

मैं कौन हूँ? यह जानने के प्रयास में सबसे पहले आता है कि क्या मैं यह शरीर हूँ या मन हूँ या मन से अलग, मन को देखने वाला दृष्टा (साक्षी) हूँ।

साक्षी क्या है? कैसे जाना जा सकता है। साक्षी का मतलब है देखने वाला, दृष्टा। जो केवल देखता है, कर्ता नहीं है, केवल गवाह है, साक्षी है। यह पहले आन्तरिक सज्जा में देखा था। चेतना के जो सात स्तर हैं, उसमें पाँचवी अवस्था (स्तर) है- उसे तुरीयातीत के नाम से, स्थापत्यवेद के आन्तरिक सज्जा के विभाग में बताया था।

आइए इसे समझने का प्रयास करें-

विषय व इन्द्रियाँ

हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रिय है, आँख, कान, नाक, जीभ, व त्वचा। इनके पाँच विषय हैं, जैसे आँख का विषय है देखना, आँख से हम देखते हैं। कान से हम सुनते हैं। जीभ से हम स्वाद लेते हैं। त्वचा से हम स्पर्श करते हैं, (कोमल-कठोर, ठण्डा-गर्म, इत्यादि।) विषय को, इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण करते है। इससे बाहर का विषय, इन्द्रियों के माध्यम से हमारे भीतर पहुँचता है एवं हमें विषय का ज्ञान होता है।

तो स्टेप है- एक है विषय है और दूसरा इस विषय से सम्बन्धित इन्द्रिय।

मन

लेकिन इतना ही होना पर्याप्त नहीं है, किसी विषय के ज्ञान के लिए, मन का जुड़ना भी आवश्यक है अन्यथा कई बार, हमारे कान खुले रहते हैं और कोई, आवाज भी देता है तो एकाध बार सुनाई नहीं पड़ता है क्योंकि उस समय हमारा ध्यान, मन कहीं ओर रहता है। इस प्रकार से किसी भी विषय का ज्ञान होने के लिए, विषय के साथ इन्द्रिय और मन का होना भी आवश्यक है।

बुद्धि

इसके अतिरिक्त, उससे ऊपर की जो स्थिति है, यानि बुद्धि का होना भी आवश्यक है, क्योंकि यही तो विश्लेषण कर बताती है कि जो आवाज, हमने सुनी वह किसकी है।

यहाँ तक तो सब कुछ समझ में आता है या समझाया जा सकता है, लेकिन इसके आगे की जो एक अवस्था है, इसके लिए कहा है कि वह **कई जन्म के पुण्य और गुरूकृपा** होने पर ही उस अवस्था की प्राप्ति या उसका बोध होता है।

अवस्था है तो अत्यन्त सरल, सेकंड से हजारवें या लाखवें हिस्से में भी उसका बोध हो सकता है। यह तो ठीक वैसा ही है कि हम किसी की गोद में बैठे हों और पूछे कि कहाँ बैठा हूँ। यह अवस्था साक्षी की अवस्था है।

साक्षी

साक्षी होता है, मन का दृष्टा, मन को देखने वाला। मन में क्रोध आया, जिसे (मुझे) पता चला कि मैं क्रोध में हूँ। तो जो मन को देखने वाला है, जिसे पता चला कि मैं क्रोध में हूँ या मुझे गुस्सा आ रहा है, वह साक्षी है, दृष्टा है। यह केवल अनुभव से सिद्ध होगा। केवल आप इतना प्रयास कर सकते हैं कि प्रतिदिन कुछ समय के लिए मन को देखें कि मन कैसा है? सुखी है, दुखी है, शान्त है, खुश है, प्रसन्न है, निराश है, कैसा है? आप मन के दृष्टा हैं, मन नहीं हैं। धीरे-धीरे आप जैसे दूसरे को देखते हैं वैसे ही मन को भी देखने लगेंगे। जिस प्रकार दूसरे को दुखी देखकर कहते हैं कि क्यों दुखी है, मन की नहीं हुई तो दुखी हो गया, वैसे ही अपने मन को भी कह सकेंगे कि क्यों दुखी हो रहा है, मैंने तो पहले ही ऐसा करने को मना किया था, अब मन की नहीं हुई तो दुखी है, ठीक है रह, मैं तो आनन्द में हूँ, आदि। आप मन के दृष्टा हैं, मन नहीं है। मन की अवस्था बदलती रहती है। साक्षी हमेशा केवल देखता है। वह सुखी-दुखी नहीं होता, वह सदा आनन्द में ही रहता है। सुख-दुख से परे है।

एक उदाहरण के द्वारा यह समझने का प्रयास करते हैं कि आप मन नहीं हो। जैसे आँख से हम देखते हैं। जितनी भी वस्तुएँ दिखाई देती हैं वे आँख नहीं है। दर्पण में भी यदि आप आँख देखें तो वह आँख का प्रतिबिम्ब हैं आपकी अपनी आँख नहीं। आप अपनी स्वयं की आँख को सीधे-सीधे नहीं देख सकते। (मान लो यदि देखे भी, तो जिससे, उसे (अपनी आँख को) देखेंगे वह असली आँख होगी। यह नहीं)।

ठीक इसी प्रकार जिससे सब कुछ जाना जाता है, वह आप हो। जो कुछ जाना जाता है, वह आप नहीं हो। आप कपड़े या वस्त्र को जानते हो, तो वस्त्र आप नहीं हो। आप शरीर को जानते हो, तो शरीर भी आप नहीं हो। आप मन को जानते हो कि मेरा मन सुखी-दुखी, प्रसन्न-उदास होता है, अतः आप मन भी नहीं हो। आप बुद्धि को भी जानते हो कि मेरी बुद्धि स्थिर या विचलित है, अतः आप बुद्धि भी नहीं हो। जो यह सब जानता है वह आप हो। उसे सिद्ध नहीं किया जा सकता है। आप सब जानते हो, बस, यही सिद्ध करता है कि आप हो। (परन्तु कितनी विचित्र बात है कि उसको ही सिद्ध करना है, जिससे कारण सब सिद्ध है।)

उपनिषद में कहानी

इसी को यदि कहानी के माध्यम से देखना चाहे तो उपनिषद में एक कहानी है कि एक झाड़ पर दो पक्षी बैठे है, एक नीची डाल पर है और दूसरा ऊपरी डाल पर बैठा है। जो निचली डाल पर बैठा है वह एक डाल से दूसरी डाल पर आता जाता है तथा मीठा फल खाने पर सुख का, खट्टा या कड़वा फल खाने पर दुख का अनुभव करता है व सुखी व दुखी होता है। इसके विपरीत जो पक्षी ऊपरी डाल पर बैठा है वह कुछ नहीं खाता है केवल देखता है और सदैव आनन्द में रहता है।

इस कहानी में जो निचली डाल वाला पक्षी है, मन है, वो विषयों में इधर-उधर विचरण करता है, उन्हें भोगता है तथा जीवन में सुख व दुख का अनुभव करता है। इसके विपरीत जो ऊपरी डाल का पक्षी है, वह साक्षी है, आत्मा है, वो केवल दृष्टा है, केवल देखता है कि ये मन है, वो सुख व दुख का अनुभव करता है तथा मैं साक्षी हूँ, देखने वाला हूँ तथा आनन्द में रहता है।

सारे मानव जीवन का चरम लक्ष्य इसी परम सत्य को प्राप्त करना है, इसका बोध करना है कि मैं मन, बुद्धि से परे (अलग) साक्षी हूँ, आत्मा हूँ, इसे महसूस करना।

वास्तुशास्त्र व अध्यात्म विद्या

वास्तु में इसका महत्व यह है कि इससे हमें परामर्श देने में सहायता मिलती है। हम निष्पक्ष रूप से परामर्श दे पाते हैं।

बहुधा यह पाया गया है कि परिवार आदि में या कहें कि सामान्य रूप से सभी बातों में सारी समस्या की जड़ मन है, मन की न होने से वह दुखी रहता है, जिससे व्यक्ति का मन कार्य में नहीं लगता, व्यापार-व्यवसाय प्रभावित होता है, धन-अर्जन में कठिनाई आती है, कार्य समय पर नहीं होते आदि-आदि। अतः मन की समस्या का हल करना अत्यन्त आवश्यक है। इस मन की समस्या का हल अध्यात्म विद्या के माध्यम से सरलता से किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त शास्त्र का अध्ययन करते समय शास्त्र भी जैसा है, वैसा ही समझ में आता है। शास्त्र, अपने रहस्य स्वयं उद्घाटित (खोलने) करने लगता है।

सारांश

व्यक्ति सामान्य रूप से शरीर के स्तर पर रहता है, वह यह मानता है कि मैं शरीर हूँ। शरीर के स्वस्थ या रोगग्रस्त होने पर यह मानता है कि मैं स्वस्थ या रोगग्रस्त हूँ। बूढ़ा होने पर यह मानने लगता है कि मैं बूढ़ा हो रहा हूँ। आँख के नीचे कालिमा आने पर चिन्तित हो जाता है। अपना रंग काला होने पर उसे उज्जवल बनाने की कोशिश करता रहता है तथा सदा परेशान सा रहता है।

तो एक स्तर हुआ शरीर के स्तर पर रहकर जीवन यापन करना।

जो इससे एक स्तर ऊपर उठे वे मन के स्तर पर रहते हैं। अब मन के सुखी होने पर सुखी तथा मन के दुखी होने पर दुखी अनुभव करते हैं तथा सदा मन की करने में लगे रहते हैं, लगभग मन के गुलाम जैसे रहते हैं। शरीर के स्तर पर रहने वालों की तुलना में मन के स्तर पर रहने वालों का स्तर ऊँचा है क्योंकि वे शरीर से ऊपर हैं। अब वे गोरे-काले आदि होने पर उससे ज्यादा प्रभावित नहीं हैं। शरीर के स्तर की समस्या का समाधान शरीर के स्तर पर जीने वाले व्यक्ति नहीं कर सकते वरन् मन के स्तर पर जीने से शरीर के स्तर पर होने वाली समस्या का समाधान किया जा सकता है।

इससे ऊपर का स्तर है बुद्धि का स्तर। बुद्धि के स्तर पर रहने पर कार्य, बुद्धि के अनुसार करने से मन के अनुकूल हो या न हो, व्यक्ति कार्य करने की ओर प्रेरित होता है। बालक है पढ़ाई में मन नहीं लगता, परन्तु बुद्धि में यह बात बैठ जाए कि पढ़ाई करने पर मैं विद्या की प्राप्ति करुँगा, इंजीनियर आदि बनूँगा तो मेरा भविष्य सुरक्षित

रहेगा, पैसा व सम्मान आदि मिलेगा तो बुद्धि में इस बात की प्रतिष्ठा होने पर वह कार्य में मन लगाएगा।

व्यक्ति सुबह उठने में आलस्य का अनुभव करता है, मन नहीं करता है, परन्तु जब बुद्धि यह कहती है कि सुबह जल्दी उठकर टहलना है, स्वस्थ रहना है, अन्यथा यह रोग या बिमारी ठीक नहीं होगी, तो मन के न मानने पर भी वह सुबह जल्दी उठकर घूमने जाएगा।

इस प्रकार से हमने देखा कि मन के स्तर की समस्या का समाधान बुद्धि के स्तर पर जीने से किया जा सकता है अर्थात शरीर के स्तर पर रहने से मन के स्तर पर रहना ठीक है। मन के स्तर पर जीने से बुद्धि के स्तर पर जीना अधिक ठीक या उचित है।

परन्तु सारी समस्या का समाधान बुद्धि के स्तर पर भी नहीं होता है, क्योंकि बुद्धि भी माया के अन्तर्गत आती है, मोह के अन्तर्गत आती है। समस्या के पूरी तरह समाधान के लिए बुद्धि के स्तर से ऊपर उठकर साक्षी के स्तर पर आना, जीना अत्यन्त आवश्यक है। इस स्तर पर मोह का पूरी तरह से नाश हो जाता है तथा शरीर, मन व बुद्धि के स्तर की समस्या भी परेशान नहीं कर पाती है। अस्तु

बोध प्रश्न-

प्रश्न १ अध्यात्म विद्या क्या है।

प्रश्न २ अपनी कितनी ज्ञानेन्द्रियाँ होती हैं।

प्रश्न ३ विषय किसे कहते हैं।

प्रश्न ४ किसी शब्द का सुनाई देने के लिए शब्द, कान तथा ... का होना आवश्यक हैं।

उत्तर ४ मन

प्रश्न ५ शब्द या आवाज कौन सी है, किसकी है यह कौन बताता है।

उत्तर ५ बुद्धि

प्रश्न ६ जो मन को देखता है, परन्तु मन नहीं है वह कौन है।

उत्तर ६ साक्षी (दृष्टा)

प्रश्न ७ लगभग सभी समस्या की जड़ क्या है।

उत्तर ७ मन की न होना।

प्रश्न ८ मानव जीवन का चरम लक्ष्य क्या है।

उत्तर ८ परम सत्य को पाना। (साक्षी में, दृष्टा में स्थित होना।)

अभ्यास-

भगवत गीता के अध्याय दो के श्लोक ६२ से ७२ तथा अध्याय तीन के श्लोक ३७ से ४३ का अर्थ अपनी शब्दों में लिखें।

उपयोगी पुस्तकें- भगवत गीता, पातञ्जलि योगसूत्र, स्पन्दकारिका,

पाठ २२

सौर मंडल प्रभाव

सौर मंडल का पृथ्वी पर प्रभाव

पाठ परिचय- इस पाठ में हम सौर मंडल के प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

विषय वस्तु

- वास्तु शब्द की उत्पत्ति
- वास्तु का क्षेत्र
- ग्रह नक्षत्र का प्रभाव
- चन्द्रमा का पृथ्वी पर प्रभाव
- सूर्य का पृथ्वी पर प्रभाव

वास्तु शब्द की उत्पत्ति

वास्तु, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है वस्तु शब्द से बना है। वस्तु अर्थात पदार्थ, कोई भी पदार्थ, जो पंच तत्व (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) से बना है, जो स्थान घेरता है, वास्तु के अन्तर्गत आता है।

वास्तु का क्षेत्र

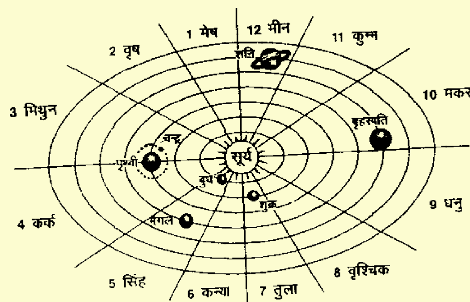
वास्तु का क्षेत्र या field **अणुरणियान महतो महियाण** अर्थात छोटे से छोटा (परमाणु (एटम)) से लेकर बड़े से बड़ा, पूरा ब्रह्माण्ड बताया गया है। यह, सारा का सारा, वास्तु का क्षेत्र है। पूरे ब्रह्माण्ड की वस्तुएँ, एक दूसरे को प्रभावित करती है, उन पर अपना प्रभाव डालती हैं।

ग्रह नक्षत्र का प्रभाव

ब्रह्माण्ड तो बहुत व्यापक है, बड़ा है, उसका एक भाग, एक अंश हमारा सौर मंडल है। हमारे सौर मंडल में एक सूर्य है, अन्य ग्रह आदि, सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इस सौर मंडल का केन्द्र सूर्य हैं।

सूर्य के कारण ही पृथ्वी पर जीवन संभव है। सूर्य से ही दिन व रात होते हैं, तापमान रहता है, वनस्पति आदि उगती हैं। पौधे संश्लेषण कर ऑक्सीजन देते हैं, आदि-आदि

सूर्य के तापमान में गिरावट हो, वह कम या अधिक हो तो, उससे पृथ्वी की सारी जलवायु या वातावरण प्रभावित होता है।



हम जानते है कि सूर्य ग्रहण के समय, कई बार जब पूरा सूर्य ढंक जाता है तो पक्षी अपने-अपने घोसलों में लौटने लगते हैं, उन्हें लगता है कि रात होने वाली है।

ग्रह-नक्षत्रों में होने वाली उथल-पुथल से, पृथ्वी पर रहने वाले जीव प्रभावित होते हैं। पूनम(पूर्णमासी) के दिन, मानसिक रोगियों को अधिक कष्ट होता है, आत्महत्या की घटनाओं में वृद्धि पाई जाती है।

सूर्य

अब आइए सूर्य को देखे, सूर्य के बिना तो वास्तु की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वास्तु का मुख्य आधार सूर्य ही है। सूर्य, हमारे पूरे सौर मण्डल का आधार है।

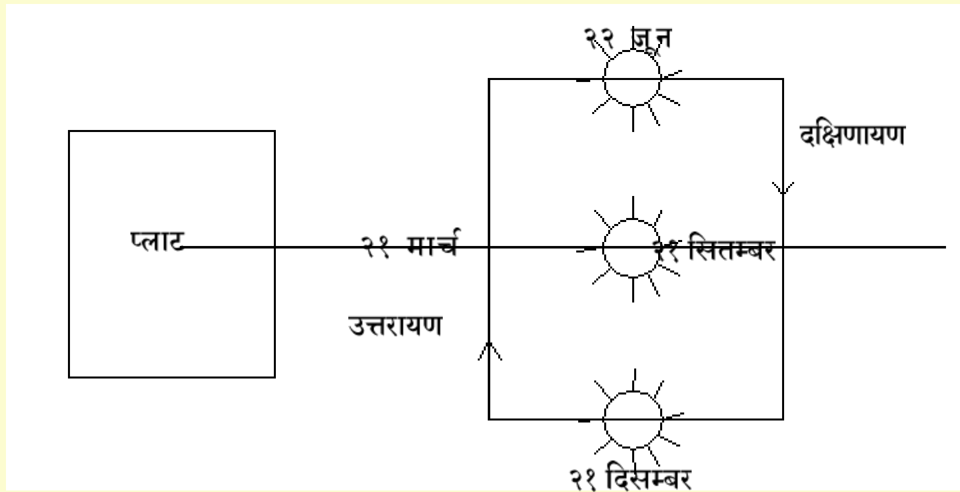
पृथ्वी पर जीवन, सूर्य के कारण ही संभव है। सूर्य न हो तो पृथ्वी पर, गर्मी (उष्मा) न हो, सब कुछ ठण्डा होकर, खत्म हो जाए।

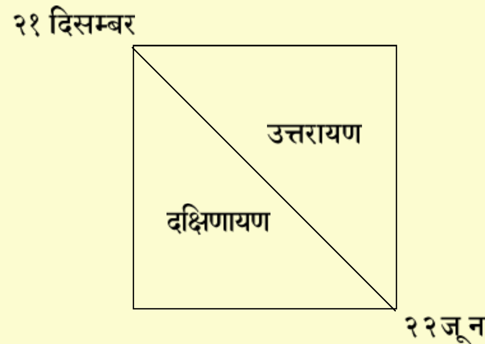
पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमने के कारण दिन व रात का होना-हम सब जानते हैं कि पृथ्वी नारंगी के समान है, वह अपनी धुरी (एक्सीस) पर घूमती है, उसका जो हिस्सा सूर्य के सामने आता है, वहाँ दिन तथा दूसरे भाग में रात होती है। पृथ्वी को अपनी धुरी पर घूमने में २४ घण्टे लगते हैं, इस प्रकार एक दिन व रात में कुल मिलाकर २४ घन्टे होते हैं।

पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर चक्कर (परिक्रमा) लगाने से ऋतुएँ-पृथ्वी, अपनी धुरी पर घूमने के साथ-साथ सूर्य के चारों ओर चक्कर भी लगाती है, इसके कारण अलग-अलग सीजन या ऋतुएं या मौसम होते हैं। अपने यहाँ भारतवर्ष

में ६ ऋतुओं का वर्णन मिलता है या होती है। बसन्त, ग्रीष्म, पावस (वर्षा), शरद, हेमन्त, शिशिर (ठण्ड)।

महीने-इसके अतिरिक्त १२ महीने होते हैं। इन बारह महीनों के अलग-अलग गुण हैं, प्रापर्टी है, लक्षण है। सूर्य को, इन बारह महीनों में अलग-अलग नाम से बुलाते हैं या जानते हैं। सूर्य के बारह नाम, उसके गुणों को बताते हैं, प्रदर्शित करते हैं। यदि ज्येष्ठ मास का सूर्य, बहुत अधिक गर्म होता है, लू चलती है, इस मास में सावधानी न लेकर, अधिक घूमने से मृत्यु हो सकती है तो उनको एक नाम दिया है। वही सूर्य श्रावण मास में





बरसात करता (कराता) है, फसलों को उपजाता है, तो उसका दूसरा नाम है। इसी प्रकार सूर्य के नाम सविता है, वरुण है, रुद्र है, अग्नि है, आदि।

सूर्य की ऊर्जा का प्रभाव व वास्तु

सूर्य के ये सभी नाम, वास्तुपुरुष के देवताओं के नाम है। निर्माण के लिए जब हम क्षेत्र को ६४ या ८१ भागों में विभाजित करते हैं, तो प्रत्येक भाग जिसे पद कहते हैं, एक प्रकार की ऊर्जा को व्यक्त करता है। वह ऊर्जा, पद के देवता के नाम से जानी जाती है। ये पद देवता सूर्य आदि शक्ति से उत्पन्न, ऊर्जा के क्षेत्र हैं। देवता के नाम, सूर्य आदि शक्ति के नाम पर ही आधारित हैं।

वास्तुशास्त्र में यह बताया गया है कि किस देवता के स्थान **(पद)** में, कौन सा कार्य करना चाहिए। किस देवता के स्थान पर, पूजा घर होना चाहिए, किस देवता के स्थान पर रसोई, तो किस देवता के स्थान पर, शयन कक्ष होना उचित होता है।

उत्तरायण-दक्षिणायण-ये तो अपन ने स्थिर प्रभाव के आधार पर देखा। आइए, अब देखें कि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के घूमने से क्या प्रभाव होता है। हम सब जानते है कि सूर्य उत्तरायण व दक्षिणायन होता है। आकाश में देखें तो, सूर्य दक्षिण दिशा (आग्नेय कोण) की ओर से, जब उत्तर दिशा की ओर जाना शुरू करता है तो हम कहते है कि सूर्य उत्तरायण हो गया। जब वह उत्तर दिशा (ईशान कोण) की ओर से, दक्षिण दिशा की ओर जाना शुरू करता है तो हम कहते है कि वह दक्षिणायण हो गया है। सूर्य, इस समय अलग-अलग राशियों में भ्रमण करता है।

सूर्य की स्थिति के अनुसार किस दिशा का घर कब शुरू करना-वास्तु शास्त्र के ग्रन्थों में इस बात को बहुत महत्व दिया गया है तथा भूमि पूजन कब शुरू करना, इसका मुख्य आधार ही यह है कि सूर्य किस दिशा में या कौन सी राशि में है। जिस दिशा में सूर्य हो, उसकी ठीक विपरीत दिशा वाले घर का मुख (प्लाट का मुख) हो, ऐसे समय घर बनवाना शुरू नहीं करना चाहिए। याने सूर्य भाद्रपद मास में दक्षिण दिशा में रहता है उस समय उत्तर मुखी प्लाट पर निर्माण नहीं करना चाहिए, यह कहा गया है, उस समय पूर्व मुखी प्लाट पर निर्माण करना श्रेष्ठ होता है। इसी बात को वास्तुशास्त्र में इस प्रकार कहा गया है कि उस समय उत्तर दिशा में राहू का मुख होता है।

सूर्य की स्थिति के अनुसार खुदाई किस दिशा से शुरू करना चाहिए-सूर्य की राशियों में स्थिति के आधार पर यह भी बताया गया है कि उस समय खुदाई, हमें आग्नेय कोण (पूर्व व दक्षिण के बीच की दिशा) में शुरू करना चाहिए, पहला डोबरा (गड्ढा), आग्नेय कोण में खोदना चाहिए।

इस प्रकार से सूर्य का राशियों में जाना, पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर घूमना, पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना तथा चन्द्रमा (नक्षत्र) आदि के कारण भूमि या भूखण्ड पर प्रभाव उत्पन्न होता है।

इसके आधार पर वास्तु में गृह आदि का निर्माण प्रारंभ करना, उसका समय आदि का निर्धारण होता है। इसी के आधार पर किस दिशा में कौन सा कक्ष बनाना इसका निर्णय होता है।

चन्द्रमा का पृथ्वी पर प्रभाव

इतना तो हम सब जानते है ही कि समुद्र में पानी का स्तर, चन्द्रमा की कलाओं (तिथियों) के अनुसार ही घटता व बढ़ता है। पूर्णमासी की रात्रि को वह, अपने अधिकतम स्तर या लेबल पर होता है। इसी कारण मानव शरीर, जिसमें की जलीय तत्व अधिक मात्रा में होते हैं, चन्द्रमा की कलाओं से अधिक प्रभावित होता है। स्त्रियों में मासिक धर्म पूर्णतः चन्द्रमा पर ही आधारित है।

ज्योतिष शास्त्र में व्यक्ति की राशि भी वही होती है, जिस राशि में चन्द्रमा होता है। चन्द्रमा का प्रभाव, रात्रि में खिलने वाली वनस्पति कुमुदनी पर भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

चन्द्रमा की तिथियों के अनुसार ही समुद्र में ज्वार- भाटे आते हैं, इस प्रकार चन्द्रमा, विशाल जल राशि को प्रभावित करता है। वेदों में, चन्द्रमा को निशापति कहा गया है। निशा याने रात्रि और निशापति याने रात्रि का मालिक, स्वामी।

इस प्रकार से हमने देखा कि यह सारा विज्ञान पर ही आधारित है। प्रकृति पर ही आधारित है। अस्तु

इकाई-२३

दिशा ज्ञान

२३.० उद्देश्य

इस इकाई में हम चार मुख्य दिशा का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त-

आप भूखण्ड पर चार दिशाओं के क्षेत्र का निर्धारण कर पाएँगे।

२३.१ इकाई की उपयोगिता व महत्व

वास्तु में दिशा का अत्यधिक महत्व है। वास्तु की सारी प्लानिंग (योजना) दिशाओं पर ही आधारित है। चाहे हमें नगर का न्यास (प्लानिंग) करना हो या घऱ का, यह दिशाओं के आधार पर ही किया जाता है। दिशाओं के आधार पर ही निर्धारित किया जाता है कि शयन कक्ष (बेड रुम) किस दिशा में हो, रसोई कक्ष किस दिशा में हो या स्नान गृह किस दिशा में होना चाहिए।

नगर नियोजन में देखें तो मन्दिर, कलेक्टर का निवास, कार्यालय, उद्योग आदि किस दिशा में हो इन स्थानों का निर्धारण दिशा के आधार पर किया जाता है। अतः वास्तु में निर्माण करने से पहले दिशाओं का निर्धारण किया जाता है।

२३.२ दिशा

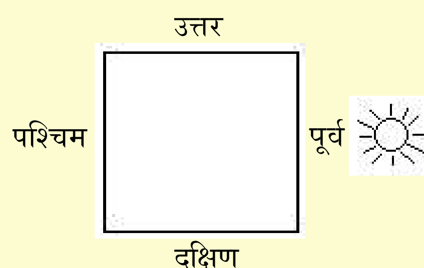
मुख्य रूप से चार दिशाएँ होती हैं-

१) पूर्व

२) दक्षिण

३) पश्चिम

४) उत्तर



सूर्योदय के समय सूर्य की ओर मुख करके खड़े होते है तो सामने की ओर जो दिशा होती है, वह **पूर्व** दिशा कहलाती है। (पूर्व का अर्थ है सामने)

दाहिने हाथ की ओर जो दिशा होती है, वह **दक्षिण** दिशा कहलाती है।

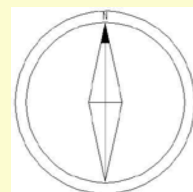
पीछे (पीठ) की ओर जो दिशा होती है, वह **पश्चिम** दिशा कहलाती है। तथा

बाएँ हाथ की ओर जो दिशा होती है, वह **उत्तर** दिशा कहलाती है।

प्रश्न-१ मुख्य दिशाएँ कितनी होती है। उनके नाम बताइए।

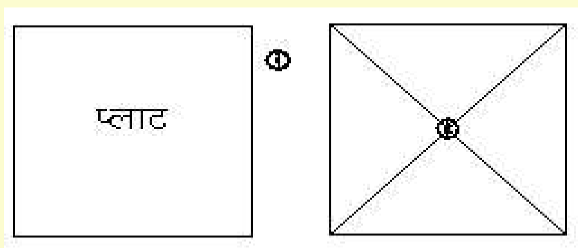
२३.३ वास्तुशास्त्र के अनुसार दिशा ज्ञात करने की विधि

उत्तर



चुम्बकीय सुई

वास्तुशास्त्र में लकड़ी के बने हुए शंकु के द्वारा दिशा ज्ञात करने की विधि बताई गई है। शंकु के ऊपर सूर्य की छाया की विधि के द्वारा दिशा ज्ञात करते हैं। इस विधि का उपयोग करने में अधिक समय लगता है तथा आकाश में सूर्य भी एकदम साफ होना चाहिए ताकि शंकु की छाया स्पष्ट दिखें। अतः यहाँ हम आधुनिक विधि के द्वारा दिशा ज्ञान बता रहें हैं। वास्तुशास्त्र के अनुसार दिशा ज्ञात करने के लिए मानसार (अध्याय ६ शंकुस्थापन), मयमत (अध्याय ६ शंकुस्थापन) या विश्वकर्मा प्रकाश (अध्याय २) ग्रन्थ देखें।

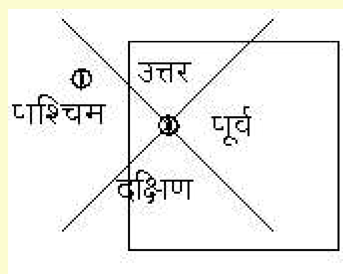


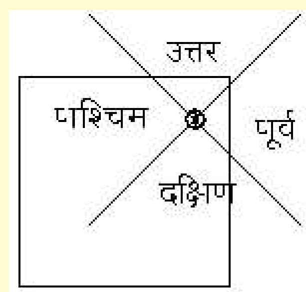
२३.४ चुम्बकीय सुई द्वारा दिशा ज्ञान

आधुनिक समय में हम चुम्बकीय सुई से परिचित हैं, यह सुई किसी भी स्टेशनरी की दुकान पर उपलब्ध होती है। इसके द्वारा ९ वीं, १० वीं कक्षा के विद्यार्थी विज्ञान के प्रयोग करते हैं।

जैसा की चित्र से स्पष्ट है चुम्बकीय सुई एक बिन्दु पर घूमती रहती है तथा उत्तर दिशा की ओर स्थिर हो जाती है।

जिस प्लाट या भूखण्ड की दिशा ज्ञात करना हो उस स्थान पर जाकर मध्य में खड़े हो जाए तथा सूई को आसानी से घूमने दें। जिस दिशा में सूई स्थिर हो जाए वह दिशा उत्तर दिशा है।



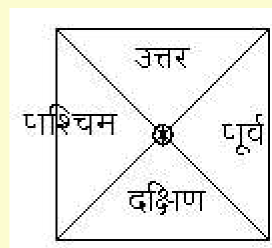


क्षेत्र विभाजन का गलत तरीका

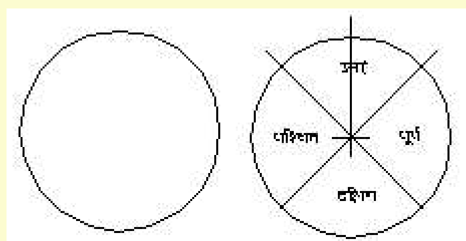
सावधानी-दिशा मध्य से ही ज्ञात करें अन्यथा अन्य दिशाएँ ज्ञात करने में त्रुटि (गलती) होगी।

प्रश्न- उत्तर दिशा कितने अंश पर होती है।

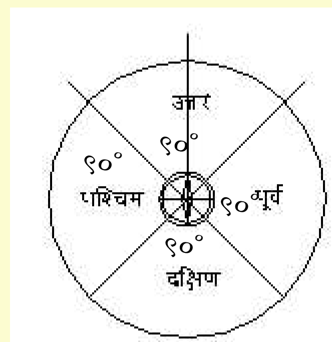
उत्तर- ० अंश या ३६० अंश



सही तरीका

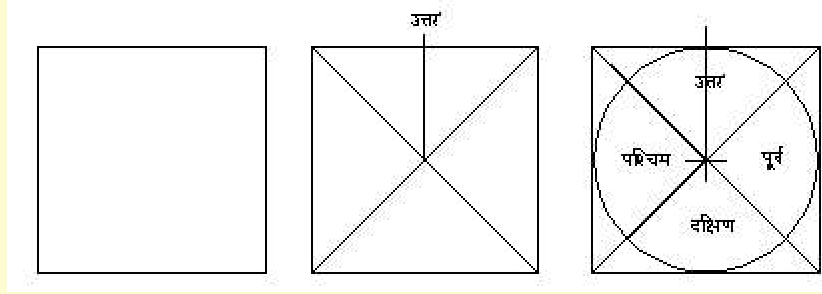


चित्र १



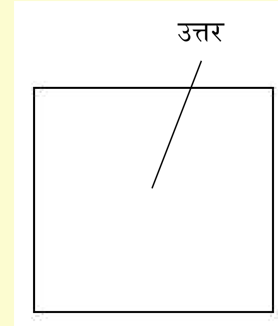
चित्र २

२३.५ वर्गाकार क्षेत्र मे दिशा का निर्धारण



अभी यहाँ हम ड्राईंग बनाना नहीं सीखा रहें हैं। उसे हम आगे संभवतः इकाई में बताएँगे।

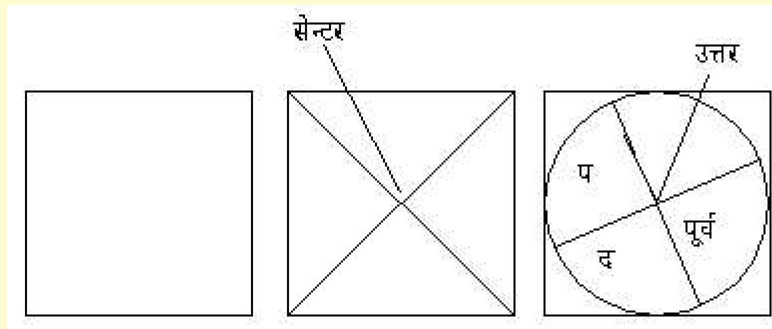
माना कि कोई एक वर्गाकार प्लाट है। वर्गाकार प्लाट वह प्लाट होता है, जिसकी लम्बाई व चौड़ाई बराबर हो।



उस प्लाट पर हमको चार दिशाएँ-उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम दिशा ज्ञात करना है।

आइए दिशा में पहले हम चार दिशाओं के क्षेत्र को समझें।

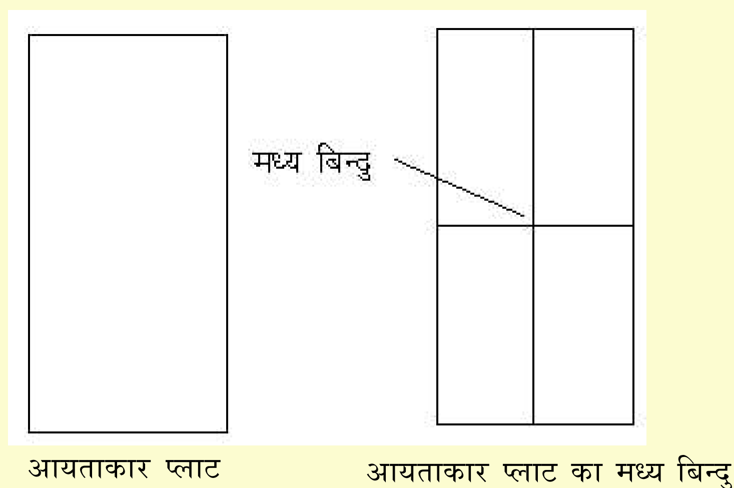
जैसा की हम जानते हैं कि चार दिशाओं को मिलाकर कुल ३६० डिग्री होती है। (चित्र १)।



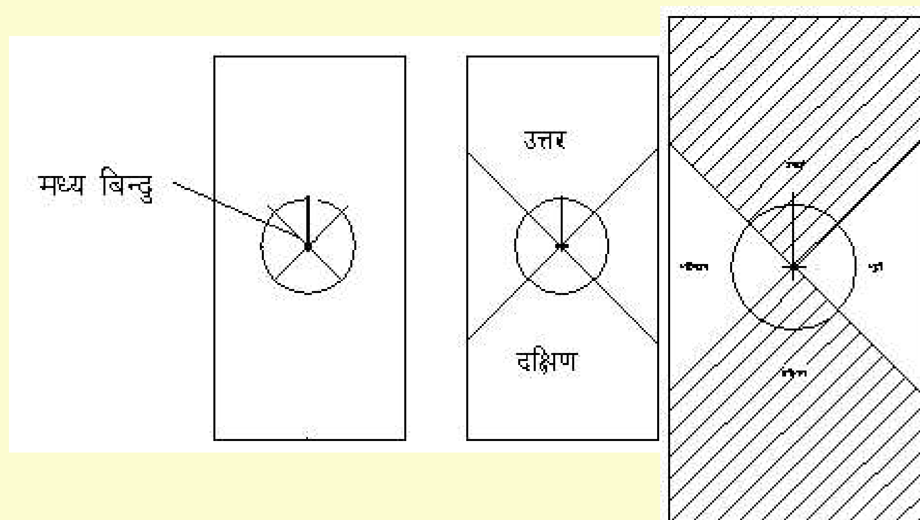
यदि हमें चार दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात करना है तो चारों दिशाओं को समान क्षेत्र देंगे। ३६० डिग्री को ४ दिशाओं में बाँटेंगे तो प्रत्येक दिशा को ९० डिग्री मिलेगी।

अतः उत्तर दिशा का क्षेत्र हुआ - ९० अंश (डिग्री)।

इसी प्रकार पूर्व, दक्षिण व पश्चिम दिशा का भी क्षेत्र ९०-९० अंश या डिग्री हुआ।

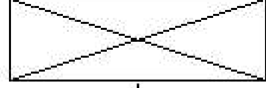


आयताकार प्लाट आयताकार प्लाट का मध्य बिन्दु

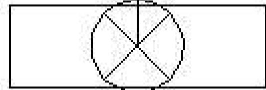




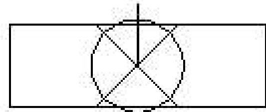
(१) आयताकार प्लाट बनाया।



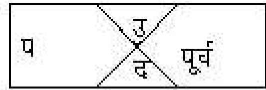
(२) प्लाट का मध्य ज्ञात किया।



(३) प्लाट के मध्य स्थान पर चार दिशा वाला वृत रखा।



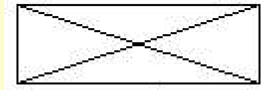
(४) इन रेखाओं को आगे बढ़ाया।



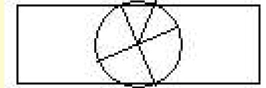
(५) चार दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात हुए।



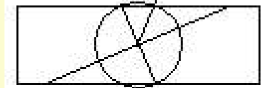
(१) आयताकार प्लाट बनाया।



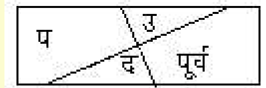
(२) प्लाट का मध्य ज्ञात किया।



(३) प्लाट के मध्य स्थान पर चार दिशा वाला वृत रखा।

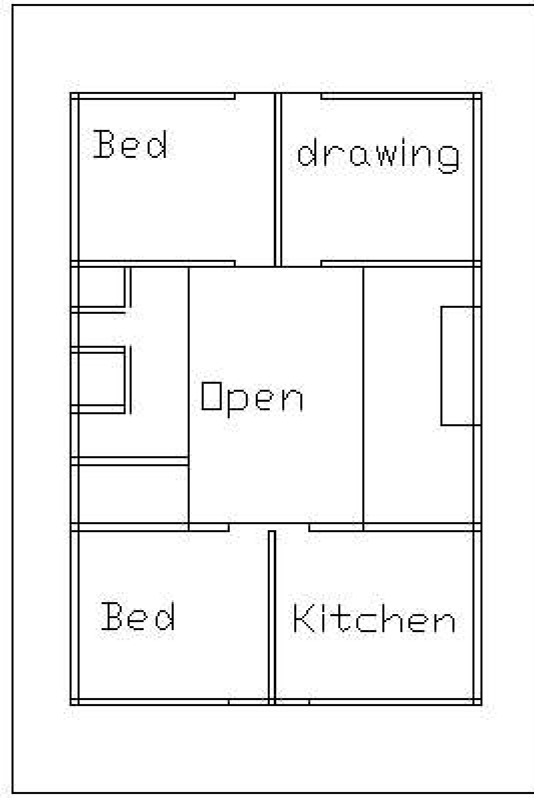


(४) इन रेखाओं को आगे बढ़ाया।



(५) चार दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात हुए।

उत्तर



चित्र २ देखें।

वर्गाकार प्लाट में दिशा ज्ञात करना-

स्टेपः-१- पहले प्लाट बनाया।

स्टेप-२ प्लाट का सेन्टर ज्ञात किया (बनाया, निकाला)।

स्टेप-३ उसके मध्य बिन्दु (सेन्टर) पर कम्पास लगाया, रख्रा, दिशा ज्ञात की। माना कि वह दिशा उत्तर आई, तो इस प्रकार चार दिशाओं के क्षेत्र होंगे।

२३.६ उदाहरण-जब प्लाट की दिशा तिरछी हो-

ऊपर हमने जिस उदाहरण को देख्रा उसमें प्लाट के सामने उत्तर दिशा थी। यह प्लाट ठीक उत्तर मुख्री था। अब माना कि प्लाट के ठीक सामने उत्तर दिशा न हो, वरन् उत्तर दिशा पूर्व दिशा की ओर २२ अंश घूमी हुई हो तो उत्तर आदि ४ दिशाओं के क्षेत्र का निर्धारण निम्न प्रकार से करेंगे।

प्लाट की उत्तर दिशा से हमारे वृत्त की उत्तर दिशा मिलाकर रख्रे दें-

दो-तीन बार इस अभ्यास को दोहराए।

२३.७ आयताकार के लिए चार दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात करना

पहले आयताकार प्लाट लिया।

उसका मध्य बिन्दु ज्ञात किया।

उसके मध्य बिन्दु पर अपना पहले वाला प्लास्टिक की शीट का कटा हुआ सर्कल रख्रा तथा चित्रानुसार दिशाओं का क्षेत्र ज्ञात किया।

२३.८ उदाहरण- आयताकार पूर्व-पश्चिम लम्बा

जब प्लाट पूर्व-पश्चिम लम्बा हो इस इस प्रकार चार दिशाओं के क्षेत्र का निर्धारण करते हैं।

जब आयताकार प्लाट किसी दिशा में घूमा हुआ हो।

अभ्यास

निम्न ड्राईंग को चार क्षेत्रों में, प्लास्टिक की शीट पर बने सर्कल की सहायता से बाँटें।

नक्शे को चार दिशाओं में विभाजित करना तथा यह बताओं कि किस दिशा में कौन-कौन से कमरे हैं।

२३. ९ सारांश

इस प्रकार से हमने किसी भी प्लाट या भूखण्ड को चार दिशाओं में विभाजित कर, दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात करने की विधि का अध्ययन किया।

अगली इकाई

अगली इकाई में हम किसी भी प्लाट या क्षेत्र को आठ भागों में विभाजित करना सीखेंगे।

इकाई-२४

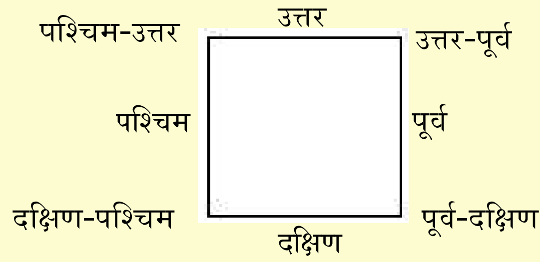
विदिशा

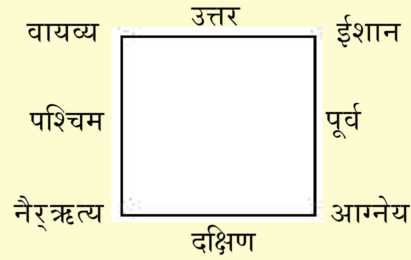
२४.० उद्देश्य

पिछली इकाई में हमने किसी भी क्षेत्र को चार दिशाओं में विभाजित करना सीखा। इस इकाई में हम किसी भी भूखण्ड या क्षेत्र को आठ दिशाओं में विभाजित करना सीखेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

किसी भी प्लाट को आठ दिशाओं में बाँट पाएँगे।





२४.१ परिभाषा

चार मुख्य दिशाओं (पूर्व, दक्षिण, पश्चिम व उत्तर) के बीच में चार विदिशाएँ होती है। ये क्रमशः आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य तथा ईशान कहलाती हैं।

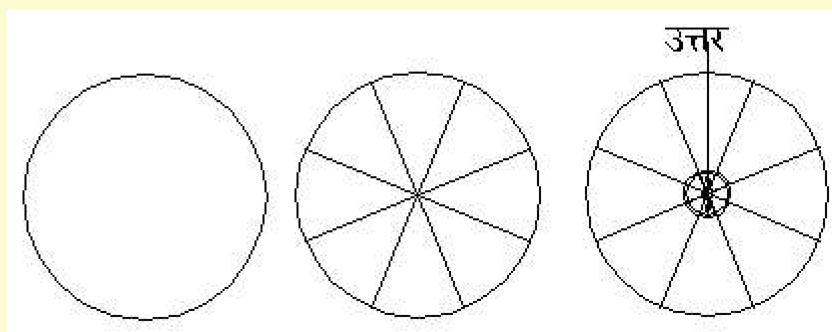
इन चार मुख्य दिशाओं के बीच में (कोने में) जो दिशा होती हैं वे विदिशा कहलाती हैं। वे इस प्रकार हैं-

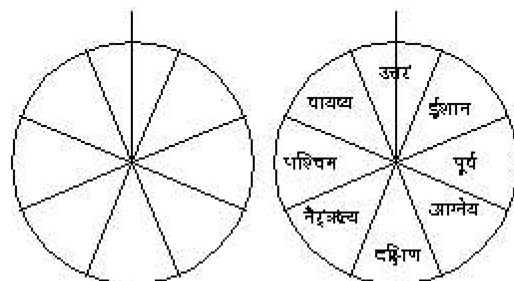
१) **आग्नेय** (पूर्व व दक्षिण के बीच की दिशा)

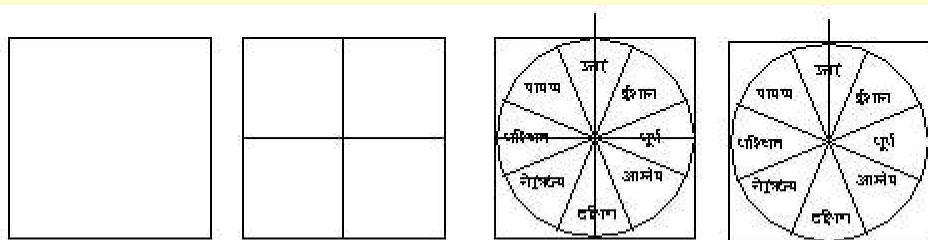
२) **नैर्ऋत्य** (दक्षिण व पश्चिम के बीच की दिशा)

३) **वायव्य** (पश्चिम व उत्तर के बीच की दिशा)

४) **ईशान** (उत्तर व पूर्व के बीच की दिशा)







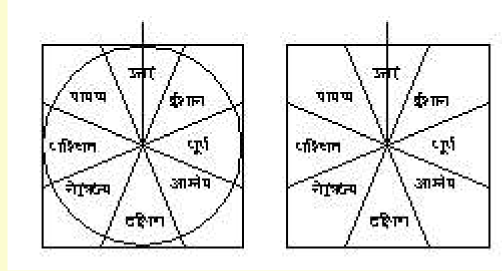
२४.२ व्याख्या

पिछली इकाई में हमने यह देखा कि किस प्रकार किसी भूखण्ड में चार दिशाओं का क्षेत्र ज्ञात करते हैं।

इस इकाई में हम आठ दिशाओं का क्षेत्र ज्ञात करेंगे।

वृत्ताकार में कुल डिग्री ३६० होती है।

जब हम उसे आठ बराबर भागों में विभाजित करेंगे तो ३६०/८ बराबर ४५ डिग्री।



इस प्रकार प्रत्येक दिशा की डिग्री हुई ४५। चित्र देखें।

ईशान आदि सभी आठ दिशा का क्षेत्र ४५-४५ अंश (डिग्री) का होता है।

माना कि हमें किसी वर्गाकार (जिसकी लम्बाई व चौड़ाई बराबर हो) प्लाट पर आठ दिशाओं को ज्ञात करना है उसका क्षेत्र बनाना है। तो पहले-

- प्लाट का मध्य बिन्दु ज्ञात करें।
- उसके बाद उसके मध्य बिन्दु से एक रेखा उत्तर दिशा की ओर खींचे तथा
- चित्र के अनुसार आठ दिशा का क्षेत्र ज्ञात कर लें।

२४.३ किसी भी भूखण्ड के लिए आठ दिशाओं के क्षेत्र का निर्धारण

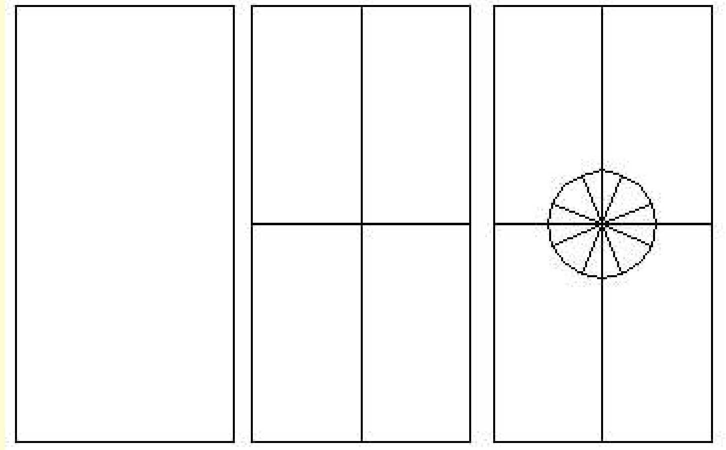
अभ्यास-१

एक प्लास्टिक की शीट लें।

उस पर एक वृत्त (सर्कल) बनाए।

वृत्त को आठ भागों में बाँटें (विभाजित करें)।

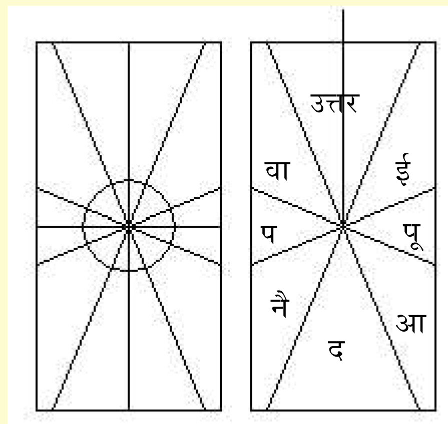
ये आठ भाग, आठ दिशाओं का क्षेत्र हैं।



क्षेत्र का मध्य, दिशा बताता है। जैसे चित्र में दिखाया है कि उत्तर दिशा के मध्य का बिन्दु उत्तर दिशा दिखाता है जो की हम चुम्बकीय सूई से ज्ञात करते हैं।

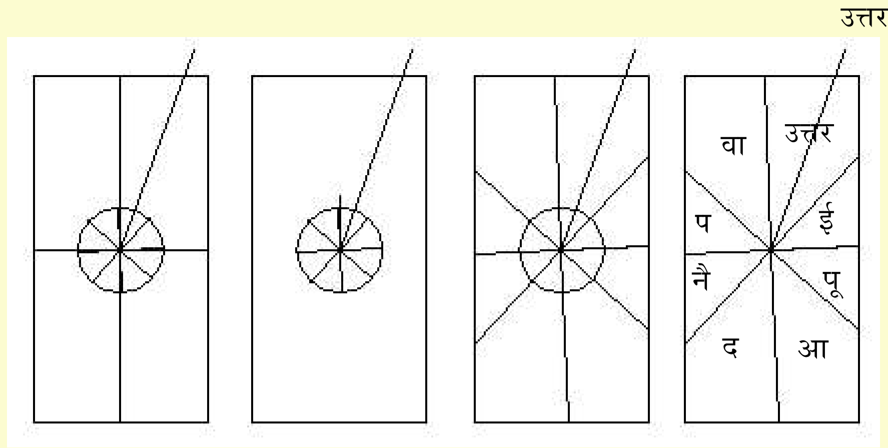
इसे चित्र के अनुसार कैंची से काट लें।

अब जिस भूखण्ड या प्लाट पर दिशाओं के क्षेत्र बनाना है, वह प्लाट का नक्शा लें।



उदाहरण के लिए हमें एक वर्गाकार प्लाट पर आठ दिशाओं के क्षेत्र बनाना हैं, तो हमने एक वर्गाकार प्लाट लिया। उस प्लाट का मध्य बिन्दु ज्ञात किया, तथा उसके मध्य बिन्दु पर यह वृत्त (जो आठ दिशा के क्षेत्र में विभाजित है, उत्तर दिशा से मिलाकर रख्र दिया। हमें आठ दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात हो गए या मालूम हो गए।

इसी प्रकार हम आयताकार तथा अन्य आकार में आठ दिशाओं के क्षेत्र ज्ञात कर सकते हैं।



जब दिशाएँ प्लाट के समानान्तर न होकर घूमी हुई हो-

इस प्रकार से हमने इस इकाई में प्लाट या भूखण्ड या किसी भी क्षेत्र को आठ दिशाओं में विभाजित करने की विधि का अध्ययन किया। अगली इकाई में हम दिशाओं के प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

इकाई २५

दिशाओं के प्रभाव

२५.० उद्देश्य

इस इकाई में हम दिशाओं के प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- किसी घर या स्थान में दिशा में उत्पन्न वास्तुदोष का पता लगा पाएँगें।
- किसी स्थान पर दिशा में उत्पन्न वास्तुदोष होने पर उसके सुधार की विधि जान पाएँगें, सुधार कर पाएँगें।
- दिशा व उसके दिक्पाल का संबंध स्थापित कर पाएँगें।
- दिशा व उस दिशा के ग्रह का संबंध स्थापित कर पाएँगें।

२५.१ पाठ परिचय

हमने पिछली इकाइयों में किसी भूखण्ड को चार या आठ दिशाओं में विभाजित करना सीखा। अब हम किसी भी प्लाट या मकान या घर को आठ दिशाओं में विभाजित कर सकते हैं।

आठ दिशाएँ क्रमशः इस प्रकार हैं-पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर व ईशान।

इन दिशाओं के गुण अलग-अलग होते हैं। हर दिशा का प्रभाव अलग-अलग होता है, जैसे पूर्व दिशा से स्वास्थ्य प्रभावित होता है तो उत्तर दिशा से धन आदि। इन दिशाओं के गुण उस दिशा के दिक्पाल (दिशा के स्वामी) के माध्यम से बताए गए हैं। दिक्पाल के अलावा उस दिशा का ग्रह भी अपनी दिशा के गुण को बताता है, इसे हम क्रमशः देखेंगे।

२५.२ पूर्व दिशा

यह सूर्योदय की दिशा है। सूर्य की सबसे अनुकूल ऊर्जा, सूर्योदय के समय की ऊर्जा, ब्रह्ममुहूर्त की ऊर्जा, इसी दिशा से अर्थात पूर्व दिशा से ही घर में प्रवेश करती है। पूर्व दिशा में खिड़कियाँ, दरवाजे होने से ही पूर्व दिशा की ऊर्जा घर में प्रवेश करती है।

घर या प्लाट की, पूर्वी दिशा एकदम साफ-सुथरी हो अर्थात क्लीन हो, तभी उस घर में निवास करने वाले व्यक्ति स्वस्थ रहेंगे, निरोगी रहेंगे। इसके ठीक विपरीत यदि कहें तो, यदि किसी घर के व्यक्ति, सामान्य से अधिक बीमार रहते हो तो भी हमारा ध्यान, सबसे पहले पूर्व दिशा की ओर जाना चाहिए।

पूर्व दिशा का प्रतिनिधित्व सूर्य का है जो कि उत्तम स्वास्थ, स्वस्थ मन एवं धन-धान्य को प्राप्त कराता है, अतः पूर्व दिशा ठीक होने पर शुभ प्रभाव तथा उचित न होने पर, अशुभ प्रभाव उत्पन्न करती है।

पूर्व दिशा में दोष होने पर राज-दण्ड अर्थात गवर्नमेन्ट की ओर से पेनेल्टी लगने की आशंका रहती है।

दिशा में दोष होने का तात्पर्य यह है कि उस दिशा में गन्दगी हो, उस दिशा का प्रभाव या ऊर्जा घर में प्रवेश न करें, उस दिशा की दीवार टूटी, फूटी या फटी हों, पूर्व दिशा अन्य दिशाओं से ऊँची हो। पूर्व दिशा में खिड़की, दरवाजे, रोशनदान आदि न होने से भी दोष उत्पन्न होता है, क्योंकि सुबह सूर्य की ऊर्जा घर में प्रवेश नहीं कर पाती है।

२५.३ सावधानी

कई बार ऐसा पाया गया है कि पूर्व दिशा में खिड़की या रोशनदान आदि होते तो हैं, परन्तु वे सदा (हमेशा) बन्द रहते हैं, यह भी दोषकारक है। यदि धूल, मच्छर आदि से बचने के लिए बन्द रखते हों तो उसमें मच्छर से बचने के लिए जाली आदि लगवाना चाहिए तथा सुबह खिड़की आदि खुली रखना चाहिए।

पूर्व दिशा में बालकनी, छज्जा आदि खराब, टूटा-फूटा, बोझ से झुका हुआ न हो।

उस दिशा की दीवार का रंग ठीक हो, वह खराब न हो। प्लास्टर उखड़ा हुआ न हो।

खिड़कियों के काँच टूटे न हो। खिड़की की लकड़ी ठीक हो, वह टूटी न हो।

फर्श ऊँचा-नीचा, टूटा-फूटा, क्रेक वाला न हो।

२५.४ दोष-परिणाम

परिवार के सदस्यों का बीमार रहना।

सरकारी विभाग से पेनल्टी लगना।

२५.५ बोध प्रश्न

प्रश्न- पूर्व दिशा से क्या प्रभावित होता है?

प्रश्न- पूर्व दिशा से संबंधित ग्रह का नाम बताए।

प्रश्न- पूर्व दिशा में दोष होने पर क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- क्या पूर्व दिशा में खिड़की होना अशुभ है?

प्रश्न- क्या पूर्व दिशा में रोशनदान होना अशुभ है?

प्रश्न- पूर्व दिशा में द्वार होना चाहिए या नहीं?

प्रश्न- पूर्व दिशा में दीवार कटी-फटी हो तो क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- पूर्व दिशा अन्य दिशाओं से ऊँची हो तो क्या परिणाम होता है?

प्रश्न- पूर्व दिशा में गन्दगी हो तो क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- पूर्व दिशा की खिड़की का शीशा टूटा होने पर क्या दुष्परिणाम होने की आशंका होती है?

२५.६ दोष दूर करने का उपाय

□ दोष दूर करने के लिए सबसे पहले सुधार लायक जो दोष हैं, उन्हें ठीक करें। उदाहरण के लिए कोई दीवार फटी हुई है तो सबसे पहले हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि उस दीवार का दोष दूर करें (अर्थात उसे रिपेयर करवाए।) उसके पश्चात कार्य समाप्त होने पर (पूरे घर की रिपेयरींग, सफाई (पुताई आदि) करने के बाद) वास्तुपूजा या शान्ति करवाए।

वास्तु दोष दूर करने के लिए वर्ष में कम से कम एक बार वास्तु पूजा अवश्य करवाना चाहिए। इसमें देवता की पूजा तथा हवन किया जाता है।

□ जैसा की हम जानते है कि पूर्व दिशा सूर्य ग्रह की दिशा है। सूर्य का प्रभाव पूर्व दिशा पर अधिक होता है। सूर्य का **रत्न माणिक्य** है, माणिक्य को जमीन (भूमि) के अन्दर स्थापित करें (रखें)। यह कार्य शुभ मुहूर्त तथा विधि विधान के साथ पूजन सहित करना चाहिए।

शुभ मुहूर्त- रविवार, शुक्ल पक्ष, दिन में,

विधि विधान-सामान्य पूजा- रत्न को गाय के दूध, उससे बने दही, घी, गोबर, गोमूत्र से स्नान कराए, उसके बाद शुद्ध जल से स्नान कराए। उसके बाद धूप, दीप से पूजा करने के बाद लाल रंग के कपड़े में लपेट कर भूमि के अन्दर (लगभग ६ इंच नीचे) पूर्व दिशा में पहले से तैयार गड्ढे में स्थापित करें। इस पूरे कार्य में स्वस्ति वाचन करें तो अधिक शुभ होता है।

सावधानी-रत्न नया, खरीदा हुआ तथा दोषपूर्ण न हो।

□ पूर्व दिशा में लाल रंग का कोई चित्र या कपड़ा (लगभग ९ इंच का गोल) दीवार पर लगाए।

□ संभव हो तो रविवार का उपवास करें। उस दिन नमक न खाएँ।

□ प्रतिदिन सूर्योदय से पहले उठें, सूर्य नमस्कार करें।

□ सूर्य के मन्त्र का जप करें।

यदि दिशा में दोष न भी हो और समस्या हो तो दिशा में रत्न (माणिक्य) लगा दें।

प्रायोगिक अभ्यासः - नक्शा देखकर दोष का पता लगाना, दो उदाहरण के द्वारा तथा दो अभ्यास के लिए। परिणाम व दोष दूर करने का उपाय भी लिखिए-

कोण, दीवार का फटना, टूटना, गिरना, गन्दगी, सुन्दर न दिखना आदि या पूर्व आदि दिशा होने पर, उस दिशा से प्रकाश आदि घर में न आना।

सावधानी-दीवार का टूटना-फटना आदि साईट पर ही देखा जा सकता है।

□ दिशाओं के गुण दिक्पाल के माध्यम से अतः सुधार के लिए दिग्पाल के चिह्न बनवाकर, सोने, चाँदी, ताम्बें में भूमि के अन्दर लगाना या रखना।

२५.७ आग्नेय कोण

दक्षिण-पूर्वी कोना अर्थात आग्नेय कोण, जो कि शुक्र ग्रह से सम्बन्धित है। शुक्र ग्रह भौतिक सुख (सासांरिक सुख) का कारक ग्रह है।

गृह में या प्लाट के आग्नेय कोण में कोई दोष न हो, वह सुन्दर व रमणीक हो तो समस्त भौतिक सुख (कार, भवन, नौकर-चाकर इत्यादि) सुख, यश एवं कीर्ति की प्राप्ति होती है।

इस दिशा में दोष होने पर, इन सुखों की हानि तथा अग्निभय एवं पुत्र को कष्ट होने की आशंका अधिक होती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न- आग्नेय कोण में दीवार टूटी हो तो क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- आग्नेय कोण में दोष होने पर घर का कौन सा सदस्य सर्वाधिक प्रभावित होता है?

प्रश्न- युवा पुत्र के जीवन में कठिनाई होने पर कौन सी दिशा में दोष हो सकता है?

प्रश्न- भौतिक समृद्धि प्राप्त करने के लिए कौन सी दिशा रमणीक व सुन्दर होना चाहिए?

प्रश्न- आग्नेय कोण में शौचालय होने पर क्या दुष्परिणाम होने की आशंका होती है?

प्रश्न- आग्नेय कोण में दोष होने पर उस दोष को दूर करने का उपाय सुझाए?

२५.८ दक्षिण दिशा

दक्षिण दिशा का स्वामी (दिक्पाल) यम तथा ग्रह मंगल है। मंगल स्वयं सेनापति है तथा यम का भी तात्पर्य नियन्त्रक या संयम से है। अतः यह दिशा गृहस्वामी से संबंधित है।

दक्षिण दिशा सुन्दर, मनोरम व रमणीक होने पर गृह स्वामी सुखी होता है तथा बहुत धन-धान्य को प्राप्त करता है। इसके विपरीत होने पर बीमारी या रोग तथा मृत्यु तक की आशंका रहती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न- किस ग्रह की दिशा दक्षिण है?

प्रश्न- दक्षिण दिशा का स्वामी कौन है?

प्रश्न- दक्षिण दिशा घर के किस सदस्य को सर्वाधिक प्रभावित करती है?

प्रश्न- दक्षिण दिशा की खिड़की आदि टूटी या फटी हो, फ्लोरिंग खराब हो गई हो तो क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- गृहस्वामी को शारीरिक, मानसिक समस्या होने पर कौन सी दिशा का दोष होने की सर्वाधिक आशंका होती है?

प्रश्न- दक्षिण दिशा में भूमि के अन्दर शल्य हो तो कौन सा व्यक्ति सर्वाधिक प्रभावित होता है?

प्रश्न- दक्षिण दिशा में दोष होने पर उस दोष को दूर करने का उपाय सुझाए।

२५.९ नैर्ऋत्य

नैऋत्य दिशा का स्वामी निर्ऋति एवं ग्रह राहु है। इस दिशा के विपरीत होने पर वाद-विवाद, कलह आदि अधिक होते हैं तथा पत्नि को कष्ट होता है।

इसी दिशा के अनुकूल होने पर धन-सम्पत्ति एवं संतान की वृद्धि होती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न- घर की महिलाओं को कष्ट होने पर किस दिशा का दोष होने की आशंका है?

प्रश्न- घर के सदस्यों में आपसी कलह या आसपास के लोगों के वाद-विवाद, कोर्ट-कचहरी आदि को झगड़े होने पर किस दिशा में दोष होने की आशंका अधिक होती है?

प्रश्न- नैर्ऋत्य कोण की दीवार समकोण न हो, फटी हो, जमीन ऊँची-नीची हो या अन्य दोष हो तो क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- नैर्ऋत्य कोण में दोष होने पर उस दोष को दूर करने का उपाय सुझाए।

२५.१० पश्चिम

पश्चिम दिशा का स्वामी वरुण तथा ग्रह शनि है। इस दिशा में दोष होने पर, धन की हानि तथा चोरों से भय रहता है अर्थात किसी न किसी प्रकार से धन का नाश होता है। यह दिशा जब विपरीत हो तो फिजूल खर्च को बढ़ावा देती है। यही दिशा जब सुन्दर होती है तो पुत्र, बन्धु व धन-धान्य से गृह स्वामी संपन्न होता है एवं उत्कृष्ट उन्नति को प्राप्त करता है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न- कौन सा ग्रह पश्चिम दिशा में रहता है?

प्रश्न- पश्चिम दिशा का स्वामी कौन है?

प्रश्न- पश्चिम दिशा में दोष होने पर क्या दुष्परिणाम होता है?

प्रश्न- आमदनी या आय से अधिक व्यय होने पर किस दिशा का दोष हो सकता है?

प्रश्न- पश्चिम दिशा की बाहरी दीवार बाहर की ओर झुकी हो तथा फट गई हो तो क्या दोष होता है?

प्रश्न- पश्चिम दिशा के दोष को दूर करने का उपाय लिखें।

दिशा	दिक्पाल	अस्त्र
१) पूर्व	इन्द्र	वज्र
२) आग्नेय	अग्नि	शक्ति
३) दक्षिण	यम	दण्ड
४) नैर्ऋत्य	निर्ऋति	तलवार
५) पश्चिम	वरुण	पाश
६) वायव्य	वायु	ध्वज
७) उत्तर	कुबेर	गदा
८) ईशान	ईश	त्रिशूल

२५.११ वायव्य दिशा

वायव्य दिशा का स्वामी वायु है तथा ग्रह चन्द्र है। इस दिशा में दोष होने पर पुत्र, पशु एवं वाहन से कष्ट होता है तथा रमणीक होने पर, इन सभी में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

एक बात और देखी गई है कि इस दिशा में दोष होने पर यात्राएँ अधिक होती है।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि वायु तथा चन्द्र दोनों ही चंचलता का गुण रखते हैं। चन्द्रमा मन का कारक ग्रह हैं, अतः यहां मन की चंचलता, विचारों की अस्थिरता से भी ले सकते हैं।

बोध प्रश्न-

प्रश्न- वायु दिशा का ग्रह कौन है?

प्रश्न वायव्य दिशा का स्वामी कौन है?

प्रश्न वायव्य दिशा में दोष होने पर क्या परिणाम होता है?

प्रश्न वायव्य दिशा में दोष होने पर सुधार की विधि का वर्णन कीजिए।

प्रश्न वाहन आदि के द्वारा नुकसान जैसे एक्सीटेन्ड आदि होने पर किस दिशा में दोष होने की आशंका है?

२५.१२ उत्तर दिशा

उत्तर दिशा का स्वामी कुबेर तथा ग्रह बुध है। यह दिशा रमणीक होने पर, व्यक्ति शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है तथा धन-धान्य की प्राप्ति होती है। इसके प्रतिकूल होने पर, धन की कमी एवं गृहस्वामी को व्यसन (लत) प्राप्त होता है।

कुबेर धन का स्वामी है। स्थाई सम्पत्ति धन आदि की प्राप्ति के लिए उत्तर दिशा में कोई दोष नहीं होना चाहिए।

बोध प्रश्न-

प्रश्न उत्तर से प्रकाश व हवा घर में प्रवेश न करें तो किस प्रकार का दोष घर में होता है?

प्रश्न उत्तर दिशा की दीवार बाहर या भीतर की ओर झुक जाए, टूट जाए या फट जाए तो क्या दोष एवं उसका क्या परिणाम होगा?

प्रश्न उत्तर दिशा की खिड़की, दरवाजा आदि में दोष हो तो क्या परिणाम होता है?

प्रश्न उत्तर दिशा का दोष होने पर रत्न द्वारा सुधार विधि का वर्णन कीजिए।

प्रश्न उत्तर दिशा का दोष होने पर पूजा विधि द्वारा दोषसुधार की विधि का वर्णन कीजिए।

प्रश्न सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए विशेष रूप से कौन सी दिशा निर्दोष होना चाहिए?

२५.१३ ईशान

ईशान कोण का स्वामी ईशान या ईश तथा ग्रह गुरु है। इस दिशा के अनुकूल होने पर मानसिक सुख तथा विपरीत होने पर मानसिक कष्ट होता है।

२५.१४ दिशा का प्रभाव

इस प्रकार से हम देखते हैं कि प्रत्येक दिशा का गुण एवं धर्म होते हैं। यह गुणधर्म, उस दिशा के दिक्पाल की प्रतिमा-विज्ञान तथा ग्रह के माध्यम से स्पष्ट होते हैं।

२५.१५ वास्तुदोष का पता लगाना

दिशा एवं प्रभाव का, यह सम्बन्ध, हमें वास्तु दोष का ठीक-ठीक पता लगाने में भी सहायक सिद्ध होता है।

जैसे मान लो, धन की आवक की कमी हो तो, हमारा सबसे पहला ध्यान, उत्तर दिशा की ओर या आग्नेय कोण की ओर जाना चाहिए। आया हुआ धन टिकता नहीं है तो हमारा सबसे पहला ध्यान, पश्चिम दिशा की ओर जाना चाहिए। ठीक इसी प्रकार वाद-विवाद एवं कलह होने पर, हमारे दिमाग में सबसे पहले, नैऋत्य कोण का ध्यान आना चाहिए, कि क्या इस दिशा में कोई दोष है।

वास्तु के ये सारे दोष, उस दिशा के सुन्दर न होने पर, दूषित होने पर, दीवार में दोष होने पर, दीवार के कटने, फटने, गिरने पर, कोण बराबर न होने आदि पर होते हैं।

शोधन करते समय, एक महत्वपूर्ण बात, हमेंशा ध्यान में रखें कि यह शोधन, जो ऊपर बताया गया है, वह दिशा के सामान्य दोष दूर करने के लिए तथा दिशा का शुभ गुण प्राप्त करने के लिए है।

यदि दिशा में कोई ऐसा दोष हो जैसे दुर्गन्ध आती हो तो, वह दोष दुर्गन्ध के नष्ट करने से ही दूर होगा।

इसी प्रकार परिवेश (परिवेश- प्लाट के आसपास का स्थान, घर के पास क्लब, रेस्ट्राँ आदि का होना।) आदि का दोष होने पर उसके उपाय भी अलग प्रकार के होगें तथा कई परिस्थिति में, ऐसे स्थान को, त्यागने का विधान है।

२५.१६ वास्तुदोष का सुधार

जिस दिशा में दोष उत्पन्न हो, उस दिशा के स्वामी की व ग्रह की विधिवत शान्ति करें। मन्त्र, जप व हवन इत्यादि करें।

२५.१७ दिशाओं के स्वामी

यह दिक्पाल, अपने रंग, वाहन, अस्त्र, भोजन, शक्ति आदि के माध्यम से, अपने गुणों को व्यक्त करते हैं।

इन्द्र का अस्त्र है वज्र। अग्नि का शक्ति, यम का दण्ड, नैऋति का तलवार, वरूण का पाश, वायु का अंकुश, कुबेर का गदा एवं ईश का त्रिशूल।

जब हम ग्रन्थ में आगे बढ़ते है (शास्त्र को पढ़ते है) तो पाते है कि शिलान्यास में, आधार शिला पर, यही चिह्न तो इन-इन दिशाओं में अंकित रहते हैं या बनाए जाते हैं। यही शिलाएं, अपनी दिशाओं के गुणों को प्रकट करती है। इस प्रकार से, वास्तु शोधन के, एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में ये उपयोग में लाई जा सकती है।

इस प्रकार दिक्पाल के माध्यम से दिशाओं की ऊर्जा को ग्रहण किया जाता है।

समरांगण सूत्रधार में इसी बात को इस प्रकार बताया गया है कि है कि पूर्व दिशा का दरवाजा जब नष्ट हो जाए, तब उस दिशा के दिक्पाल की अर्थात इन्द्र की पूजा कर, वास्तु शोधन या शान्ति की जाती है।

दक्षिण दिशा का द्वार नष्ट होने पर, उस दिशा के दिक्पाल, यम की पूजा की जाती है। इसी प्रकार पश्चिम एवं उत्तर का द्वार बिगड़ने पर, वरुण एवं कुबेर की पूजा की जाती है। इससे यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि, ये दिक्पाल उस दिशा से आने वाली विकिरण (रेडिएशन) को बताते है या प्रदर्शित करते हैं तथा वास्तु सुधार का एक महत्वपूर्ण अंग हैं।

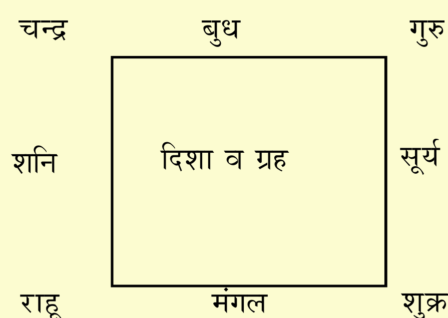
अस्त्र-शस्त्र के अतिरिक्त उन देवताओं के मन्त्र, भोज्य पदार्थ (भोजन) एवं प्रतिमा विज्ञान भी इस कार्य में काफी उपयोगी सिद्ध होते हैं।

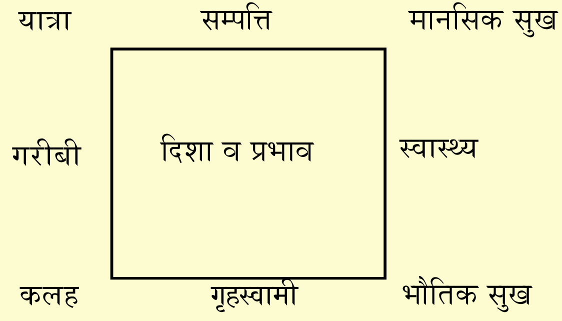
२५.१८ ग्रह के आधार पर वास्तु सुधार

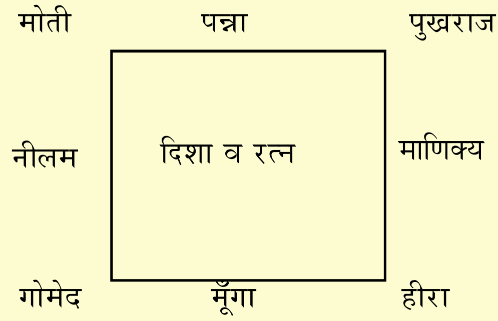
नव ग्रह दृष्टि से देखते है कि ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, सूर्य मध्य में है। यहाँ वास्तु तथा ज्योतिष के ग्रन्थ के अनुसार, हमने कुछ इस प्रकार जमाया है-

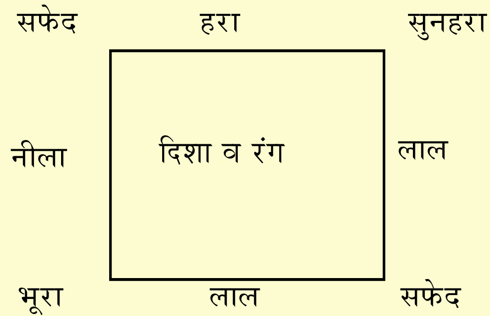
बहुत अधिक विस्तार से न कहते हुए केवल संक्षेप में कहेंगे कि पूर्व दिशा के दोष को दूर करने के लिए या पूर्व दिशा की ऊर्जा बढ़ाने के लिए, उस दिशा में भूमि के अन्दर माणिक्य रखना चाहिए। इसी प्रकार आग्नेय कोण में हीरा, दक्षिण में मूँगा, नैऋत्य में गोमेद, पश्चिम में नीलम, वायव्य कोण में मोती, उत्तर में पन्ना तथा ईशान कोण में पुखराज भूमि के अन्दर रखना चाहिए।

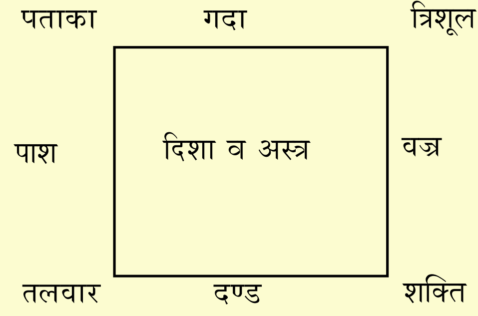
ये जो ग्रह एवं उनके रंग इत्यादि जो बताए गए हैं, उनका उपयोग, प्रयोग, वास्तु शोधन के सशक्त माध्यम के रूप में किया जा सकता है।




यात्रा
सम्पत्ति
मानसिक सुख
गरीबी
दिशा व प्रभाव
स्वास्थ्य
कलह
गृहस्वामी
भौतिक सुख


मोती
पन्ना
पुखराज
नीलम
दिशा व रत्न
माणिक्य
गोमेद
मूँगा
हीरा


सफेद
हरा
सुनहरा
नीला
दिशा व रंग
लाल
भूरा
लाल
सफेद



दिशा	ग्रह	रंग	रत्न	आकार	प्रभाव
पूर्व	सूर्य	लाल	माणिक्य	गोल	स्वास्थ्य
आग्नेय	शुक्र	सफेद	हीरा	चतुष्कोण	भौतिक सुख
दक्षिण	मंगल	लाल	मूँगा	त्रिकोण	गृहस्वामी
नैऋत्य	राहू	भूरा	गोमेद	कमलाकार	कलह
पश्चिम	शनि	काला	नीलम	काला मनुष्य	गरीबी
वायव्य	चन्द्र	सफेद	मोती	अर्धचन्द्र	गमन, यात्रा, शस्त्रभय
उत्तर		बुध	हरा	पन्ना धनुष	सम्पत्ति
ईशान	गुरु	सुनहरा	पुखराज	अष्टदल	मानसिक सुख

इकाई २६

वास्तु के प्रकार

२६.० उद्देश्य

इस इकाई में हम तीन प्रकार के वास्तु का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने से उपरान्त आप चर, स्थिर व दैनिक वास्तु के बारे में बता पाएँगे।

२६.१ वास्तु सिद्धान्त

हम यह देख चुके हैं कि सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि की रश्मियों के फलस्वरुप पृथ्वी पर ऊर्जा के विभिन्न क्षेत्र निर्मित होते हैं (इसमें पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना, पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र आदि का प्रभाव शामिल है।)

जब हम, किसी भूखण्ड या प्लाट पर ऊर्जा के इन क्षेत्रों का अध्ययन करते हैं, उसके अनुसार शास्त्र बनाते हैं, नियम बनाते हैं तो वह वास्तुशास्त्र कहलाता है। इन नियमों के अनुसार निर्माण करते हैं तो वह वास्तु के अनुरूप निर्माण कहलाता है।

भूखण्ड पर पड़ने वाले ऊर्जा के प्रभाव का अध्ययन निम्न तीन आधार या प्रकार से किया जाता है-

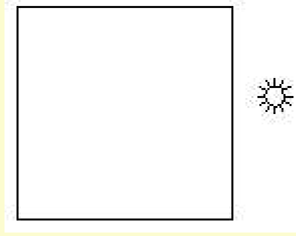
(१) दैनिक वास्तु

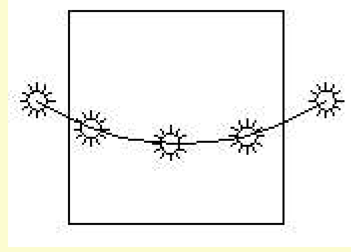
(२) चर (चलने वाला) वास्तु

(३) स्थिर वास्तु

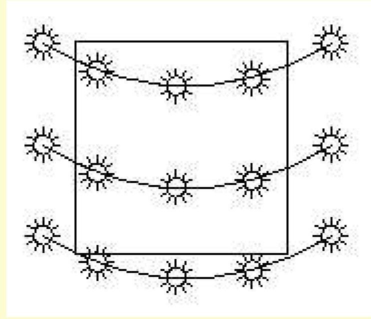
२६.२ दैनिक वास्तु

दैनिक वास्तु के अन्तर्गत सूर्य के उदय होने से लेकर अस्त होने तक के ऊर्जा के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। जैसे सुबह सूर्य पूर्व दिशा में उदय, तब भवन का पूर्वी भाग गर्म होना शुरू हुआ, उसके बाद जैसे-जैसे सूर्य ऊपर आया, दक्षिणी भाग गर्म





हुआ, फिर दोपहर बाद पश्चिमी भाग गर्म हुआ और पूर्वी भाग तुलनात्मक रूप से ठण्डा होने लगा, अर्थात् ऊर्जा का इस प्रकार का परिवर्तन या बदलाव **दैनिक वास्तु** कहलाता है। यहाँ यह बताना बहुत आवश्यक है कि ऊर्जा के उपरोक्त परिवर्तन से भूखण्ड पर रहने वाले सभी प्राणियों के जीवन पर गहरा असर होता है।



जैसा कि हम जानते है कि आठ दिशाएँ होती है, आइए इन आठ दिशाओं में सूर्य के घूमने के प्रभाव का अध्ययन करें।

ये दिशाएं, चौबीस घण्टों में, किस प्रकार से शान्त, धूम, ज्वाला, दग्ध तथा भस्म होती है, यह बताया गया है।

प्राग्दग्घा शिवदिक् सुरेश्वरदिशि ज्वालाग्निदिग् धूमिता
सौम्या भस्मयुता च भास्करवशात् शान्ताश्चतस्रोऽपराः।
प्रत्येकं प्रहराष्टकेन सविता संसेवतेऽष्टौ दिशः
शान्ता सर्वसमीहितं च शकुना दीप्तौभयादौ शुभाः।।२।।

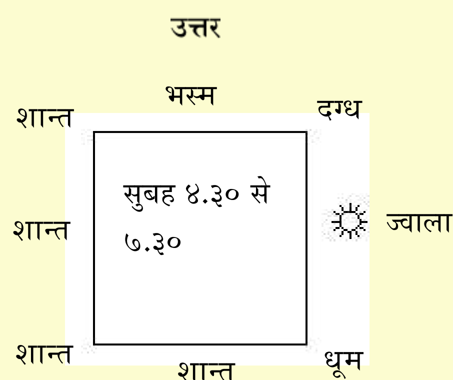
रात्रि के पिछले (आखरी) आधे प्रहर से एक प्रहर (एक प्रहर = तीन घण्टे) तक सूर्य

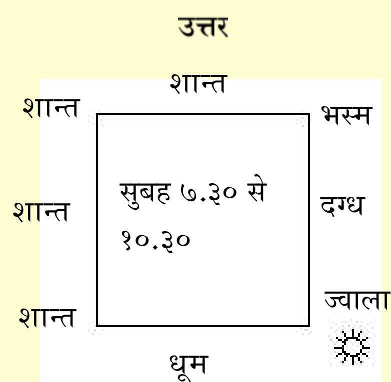
पूर्व में रहे, उस समय ईशान कोण दग्ध समझना। उस समय पूर्व में ज्वाला, अग्निकोण धूमवाला, उत्तर दिशा भस्म वाली तथा बाकी चार दिशा शान्त जानना।।२।।१४ राजवल्लभ

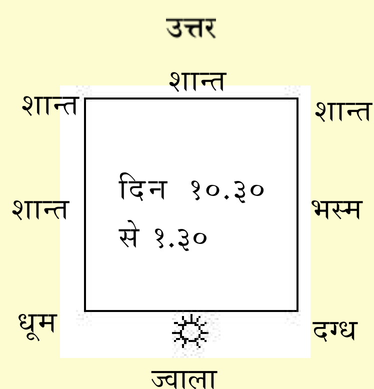
सूर्योदय के डेढ़ घण्टा पहले से सूर्योदय के डेढ़ घण्टे बाद तक (कुल तीन घण्टे), जब सूर्य पूर्व दिशा में रहे, उस समय ईशान कोण को **दग्ध**, पूर्व दिशा **ज्वाला**, अग्नि कोण को **धूम** तथा उत्तर दिशा **भस्म** एवं शेष दिशाएं (दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम एवं वायव्य) **शान्त** कही गयी हैं।

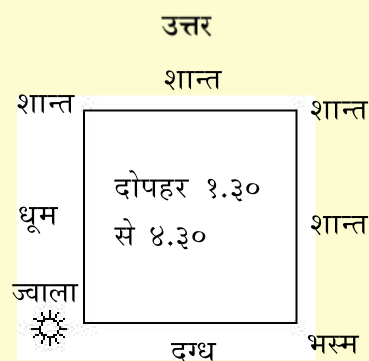
चित्र में सूर्योदय का समय ६.०० बजे लिया गया है।

जैसे लकड़ी आदि कोई वस्तु जलने के पहले लकड़ी में से धुआँ उठता है, तो उसे **धूम** कहते हैं। जब उसमें भली प्रकार से अग्नि जलने लगती है, अर्थात ज्वाला उठने लगती है तो उसे **ज्वाला** कहते हैं। जलने के पश्चात जब वह राख बनती है तथा उसमें गर्मी या ऊष्मा भी होती है, तब उसे **भस्म** कहते हैं। जब वह राख एकदम ठंडी हो जाती है तब उसे **शान्त** कहते हैं।





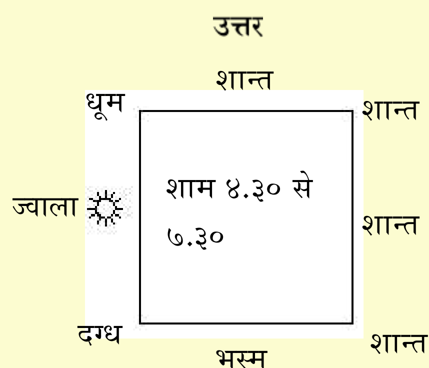


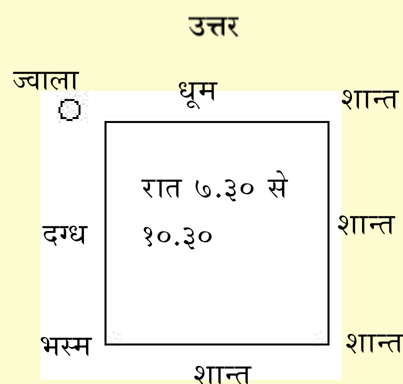


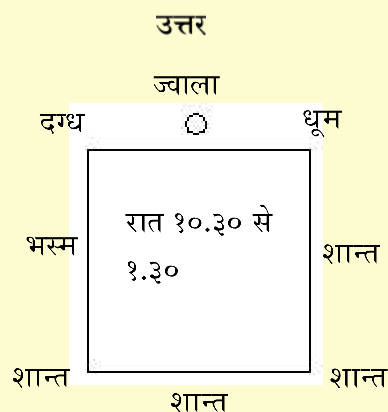
इसी प्रकार सूर्य जिस दिशा की ओर बढ़ना शुरू करता है, तो पहले वह दिशा धूम होती है। जब उस दिशा में पहुँच जाता है तो वह दिशा ज्वाला होती है। उसके बाद जब उस दिशा को छोड़कर अगली दिशा में जाता है, तो जिस दिशा को छोड़ता है वह दग्ध हो जाती है। उसके तीन घण्टे पश्चात वही दिशा भस्म तथा फिर शान्त हो जाती है।

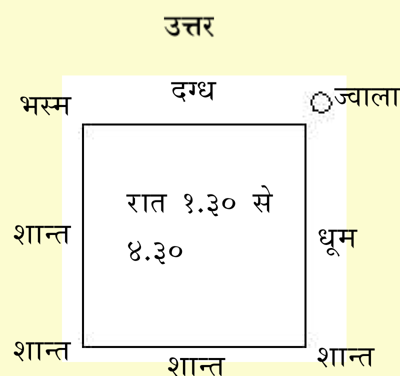
अर्थात दिशाएं क्रम से धूम, फिर ज्वाला, फिर दग्ध तथा उसके बाद भस्म होती है, उसके पश्चात शान्त हो जाती है। यह क्रम, हर तीन-तीन घण्टे में, प्रदक्षिण क्रम से (क्लाकवाईज) घूमता रहता है तथा चौबीस घण्टे में पूरा होता है।

हम यह देख चुके है कि सूर्य जिस दिशा की ओर बढ़ना शुरू करता है वह दिशा धूम होती है, उस दिशा में गर्मी बढ़ना प्रारम्भ होती है, जिससे उस दिशा में क्रियाशीलता बढ़ना प्रारम्भ हो जाती है।









जब सूर्य उस दिशा में पहुँच जाता है तो वह दिशा अत्यधिक गर्म होती है, अतः उसमें क्रियाशीलता भी चरम सीमा पर होती है।

इसी प्रकार जब सूर्य उस दिशा को छोड़कर आगे बढ़ता है तो वह दिशा दग्ध हो जाती है, इसमें उस दिशा की क्रियाशीलता में कमी आने लगती है।

उसके पश्चात भस्म दिशा में क्रियाशीलता में और कमी आ जाती है।

शान्त जिस में पूर्ण शान्ति रहती है।

वास्तुशास्त्र में इन सब बातों का अत्यधिक महत्व बताया गया है। पूरी की पूरी प्लानिंग (योजना, कक्षों का नियोजन) हम इसी आधार पर कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए सामान्य रूप से व्यक्ति के सोने (शयन) का समय रात्रि १०.३० से सुबह ६ बजे के बीच का रहता है। सोने के स्थान ऐसा हो जो शान्त हो, जिसमें क्रियाशीलता अपने न्यूनतम स्तर पर हो जिससे गहरी नींद आ सकें। इस समय हमें सबसे पहले यह देखना चाहिए कि कौन सी दिशा रात्रि में १०.३० से सुबह ६ बजे तक लगातार शान्त रहती है।

२६.३ उपयोग

विभिन्न चित्र को देखकर हम यह कह सकते हैं कि रात्रि १०.३० से सुबह ७.३० तक नैर्ऋत्य कोण तथा दक्षिण दिशा शान्त रहती है। तो हम कहेंगे कि नैर्ऋत्य कोण या दक्षिण दिशा में शयन कक्ष होना चाहिए। वास्तुशास्त्र में इसी आधार पर कहा है कि शयन कक्ष दक्षिण दिशा या नैर्ऋत्य कोण में बनवाना चाहिए। या कमरे की इस दिशा में पलंग होना चाहिए।

आइए एक उदाहरण और देखें- सामान्य रूप मुख्य भोजन का समय दोपहर का कहा गया है। अपने यहाँ रात्रि में अल्पाहार लेने का विधान है। रसोई घर में सजगता की आवश्यकता रहती है। भोजन बनाते समय सावधानी अत्यन्त आवश्यक है। इससे जहाँ सुरक्षा भी रहती है वहीं असावधानी वश भोजन बिगड़ न जाए इसका भी ध्यान रहता है। अतः रसोई कक्ष ज्वाला दिशा में होना चाहिए। सुबह के भोजन बनाने का समय सामान्य रूप से ८ से ११ बजे के मध्य रहता है। चित्रानुसार देखने पर हम पाते है कि आग्नेय कोण ७.३० से १०.३० बजे तक ज्वाला रहता है। अतः आग्नेय कोण में रसोई घर बनवाना चाहिए।

हमें दिन में या रात में, जिस समय, जो कार्य करना हो, उसके लिए कौन सी दिशा सबसे उपयुक्त होगी, उस दिशा के बारे में जानकर हम उस कार्य को उस दिशा में कर सकते है।

इसे एक उदाहरण से देख सकते है। यदि दोपहर के चार बजे, यदि कोई व्यक्ति विश्राम करना चाहता है, सोना चाहता है, तो हम देखेंगे कि उस समय कौन सी दिशा शान्त है, तो पता चलता है, कि उस समय पूर्व दिशा शान्त है, तो हम कहेंगे कि उस व्यक्ति को पूर्व दिशा के किसी कक्ष में विश्राम करना चाहिए।

इस प्रकार, केवल इसी को आधार बनाकर, हम देख सकते हैं, अर्थात प्लानिंग कर सकते हैं कि शयन कक्ष किस दिशा में होना चाहिए, डाईनिंग हॉल कहाँ होना चाहिए, बैठक कहाँ हो, आदि-आदि। पूरे घर की प्लानिंग इस आधार पर की जा सकती है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न-१ दिन भर में एक दिशा में कितने प्रकार का प्रभाव उत्पन्न होता है। उनके नाम बताएँ?

प्रश्न- ईशान कोण किस समय से किस समय तक शान्त रहता है?

प्रश्न- आग्नेय कोण किस समय से किस समय तक ज्वाला के गुण से युक्त रहता है?

प्रश्न- पश्चिम दिशा किस समय से किस समय तक शान्त रहती है।

प्रश्न- शयन कक्ष किस दिशा में होना चाहिए तथा क्यों होना चाहिए।

प्रश्न- रसोई कक्ष किस दिशा में होना चाहिए तथा क्यों उसी दिशा में होना चाहिए।

उपयोगी पुस्तकें-

राजवल्लभ, वास्तु सौख्यम्

इकाई २७

वास्तु पद विन्यास

सबसे पहले पूरे भूखण्ड को ९ गुणित ९ अर्थात ८१ भागों में विभाजित करते हैं। इसमें कुल ४५ अलग-अलग प्रकार की ऊर्जा होती है जो की देवता के माध्यम से अभिव्यक्त की गई है। किसी भी भूखण्ड पर इन ४५ देवताओं की स्थापना को वास्तु पद विन्यास कहते हैं।

इसमें मध्य के ९ भाग ब्रह्मा भाग कहलाते हैं। इसे ब्रह्मा देवता का स्थान कहा है। सबसे बाहरी हिस्से में ३२ देवता होते हैं, यह पैशाच वीथि कहलाती है। ब्रह्मा भाग व पैशाच वीथि के बीच में देव तथा मनुष्य वीथि होती है।

उत्तर

<table>
<tr><td>मारुत</td><td>नाग</td><td>मुख्य</td><td>भल्लाट</td><td>सोम</td><td>सर्प</td><td>अदिति</td><td>दिति</td><td>शिखी</td></tr>
<tr><td>रोग</td><td rowspan="2">रुद्र</td><td rowspan="2">रुद्रजय</td><td colspan="3" rowspan="2">भूधर</td><td rowspan="2">अपवत्स</td><td rowspan="2">आपवत्स</td><td>पर्जन्य</td></tr>
<tr><td>शोष</td><td>जयन्त</td></tr>
<tr><td>असुर</td><td colspan="2" rowspan="3">मित्र</td><td colspan="3" rowspan="3">ब्रह्मा</td><td colspan="2" rowspan="3">आर्यमा</td><td>महेन्द्र</td></tr>
<tr><td>वरुण</td><td>सूर्य</td></tr>
<tr><td>पुष्पदन्त</td><td>सत्य</td></tr>
<tr><td>सुग्रीव</td><td rowspan="2">इन्द्रराज</td><td rowspan="2">इन्द्र</td><td colspan="3" rowspan="2">विवस्वान</td><td rowspan="2">सावित्र</td><td rowspan="2">सवित्र</td><td>भृश</td></tr>
<tr><td>दौवारिक</td><td>अन्तरिक्ष</td></tr>
<tr><td>पितृ</td><td>मृग</td><td>भृंगराज</td><td>गन्धर्व</td><td>यम</td><td>गृहक्षत</td><td>वितथ</td><td>पूषा</td><td>अग्नि</td></tr>
</table>

ब्रह्मा देवता-१

पैशाच भाग के देवता- ३२

शेष देवता मनुष्य व देव भाग के - १२

कुल देवता संख्या- ४५

चित्र देखें- बाहर के भाग के ३२ देवता इस प्रकार हैं- ईश, पर्जन्य, जयन्त, महेन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश, अन्तरिक्ष, अग्नि, पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व, भृंगराज, मृग, पितृ, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शोष, रोग, मारुत, नाग, मुख्य, भल्लाट, सोम, सर्प, अदिति, दिति। ये सभी देवता १-१ पद के हैं।

मध्य में ब्रह्मा ९ पद के हैं। ब्रह्मा व बाहरी देवता के बीच में आर्यमा, विवस्वान, मित्र व भूधर ६-६ पद के हैं। आप-अपवत्स, सवित्र-सावित्र, इन्द्र-इन्द्रजय व रुद्र-रुद्रजय ये सभी देवता २-२ पद के हैं।

इस प्रकार से हमने देखा कि बाहर के देवता ३२

अन्दर के देवता १

मध्य के देवता १२ कुल देवता ४५

पाठ-२७

पद विन्यास

२७.० उद्देश्य

इस इकाई में हम वास्तु पद विन्यास का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप किसी भी-

प्लाट का वास्तु पद विन्यास कर पाएँगें।

भूखण्ड (नगर, कॉलोनी, स्कूल हेतु, आदि) का वास्तु पद विन्यास कर पाएँगें।

२७.१ विषय प्रवेश

अभी तक हमने छोटे आकार के भूखण्ड के लिए नियोजन का विचार किया। अब जब भूखण्ड मध्यम आकार का हो जैसे ४० फीट गुणित ६० फीट या इससे भी बड़े आकार का हो या हमें किसी नगर का नियोजन करना हो या कॉलोनी बनाना हो तब हम और अधिक सूक्ष्मता से वास्तु का विचार करते हैं। पूरे भूखण्ड को और अधिक भागों में विभाजित कर एक-एक भाग के गुण या प्रापर्टी का अध्ययन कर, उस गुण के अनुरूप निर्माण करते हैं। इससे आधार पर हम यह निर्धारित कर पाते हैं कि द्वार कहाँ होना चाहिए, पानी की टंकी या होद कहाँ हो, रसोई कक्ष में प्लेटफार्म कहाँ हो, तिजोरी कहाँ रखना चाहिए, आदि-आदि।

नगर नियोजन करना हो तो नगर की किस दिशा में किस प्रकार का निर्माण करवाए, तालाब किस दिशा में हों, स्कूल, आफिस, चिकित्सालय, रंगमंच, रेलवे स्टेशन, बस स्टेण्ड, विभिन्न बाजार आदि कहाँ हो इसका निर्धारण कर सकते हैं।

२७.२ पदविन्यास का महत्व

इस श्लोक में वास्तुपदविन्यास की चर्चा की गई है। घर या मंदिर या किसी भी निर्माण कार्य शुरु करते समय उसकी प्लानिंग किस प्रकार करना चाहिए, किस दिशा में, कहाँ क्या बनवाना चाहिए, इसका विचार वास्तुपद विन्यास से

करते हैं।

किसी भी भूमि के हिस्से या भूखण्ड या प्लाट पर, सूर्य, चन्द्रमा, अन्य ग्रह व नक्षत्र के कारण, ऊर्जा के विभिन्न क्षेत्र पैदा होते हैं। उसकी कल्पना एक वास्तुपुरुष के रूप में की गई है तथा उस प्लाट पर पैदा हुई, विभिन्न ऊर्जा को वास्तुपुरुष के अलग-अलग देवता के नाम से कहा गया है।

जब किसी प्लाट को दस आड़ी तथा दस खड़ी रेखा अर्थात् ८१ भागों में बांटते हैं तो उसे परमशायिक या ८१ पद का वास्तु विन्यास कहते हैं। इसमें जो ८१ खाने बनते हैं उसका प्रत्येक खाना, पद कहलाता है। इस प्रकार कुल ८१ पद होते हैं। इन पदों में अलग-अलग देवता का निवास (स्थान) बताया गया है। यहाँ एक वास्तुपुरुष की कल्पना की गई है तथा यह बताया गया है कि उस वास्तुपुरुष के किस अंग (शरीर के हिस्से या भाग) पर कौन सा देवता होता है या किस प्रकार की ऊर्जा होती है। अब यदि किसी कारण वश उस देवता की ऊर्जा वहाँ याने उस स्थान पर उत्पन्न नहीं हो या वह स्थान या जगह दूषित (खराब) हो वास्तुपुरुष का वह अंग (शरीर का भाग) पीड़ित या दुखी होगा तो घर के मालिक के उसी अंग में पीड़ा या दुख होगा, रोग होगा, उस अंग में खराबी आएगी।

घर में वास्तु दोष की उत्पत्ति होने का मतलब ही यही है कि घर के उस भाग की ऊर्जा बराबर नहीं मिल पा रही, चूँकि घर के उस भाग में ऊर्जा खराब है तो घर के मालिक या उसमें रहने वाले व्यक्तियों को वह ऊर्जा प्राप्त नहीं हो रही है अतः घर के व्यक्तियों शरीर के उस अंग में रोग है।

इसे, ऐसे भी देख सकते हैं कि माना कि जो खाना हम खाते है उसमें विटामिन ए की कमी हो तो शरीर में विटामिन ए की कमी जो रोग होते हैं वो उस व्यक्ति के शरीर में होंगे। विटामिन सी की कमी है भोजन में, तो विटामिन सी की कमी से होने वाले रोग होगे। अब यहाँ हम इस वास्तुपुरुष के द्वारा यह पता लगा सकते है कि आपवत्स या अपवत्स भाग, यदि वास्तुपुरुष का दोष कारक है कि मुख से सम्बन्धित रोग या बीमारी होने की पूर्ण आशंका होती है या होगी। हृदय या दिल की बीमारी होने पर घर का

ब्रह्मा देवता वाला भाग दोष कारक होने पर ऐसा होगा। इसी प्रकार अन्य देवता के दूषित होने पर शरीर के रोग के हिस्से का पता लगाया जा सकता है। ये प्रत्येक देवता जिस पद में रहते हैं, उस पद की ऊर्जा को प्रदर्शित करते हैं, जैसे ईशान कोण में स्थित १ पद का देवता ईश, उस पद की ऊर्जा को प्रदर्शित करता है। अब हमें कैसे यह पता लगे कि वह देवता किस प्रकार की ऊर्जा को अभिव्यक्त कर रहा है। इसका हम निम्न आधारों पर विवेचन कर सकते है:-

१ देवता का नाम
२ देवता का प्रतिमा विज्ञान
३ धर्म-धर्मी भाव
४ वह देवता के नाम की उत्पत्ति किस धातु से हुई
५ निघण्टु
६ पद में दोष होने पर उसका परिणाम
७ दिशा में दोष होने पर परिणाम
८ वेद में देवता की स्तुती में क्या कहा
९ समरांगण सूत्रधार का निघण्टु

१ **देवता का नामः-** जब भी किसी देवता का नामकरण किया जाता है तो वह नामकरण उस देवता के धर्म, जिसको वह धारण करता है, के आधार पर किया जाता है, जैसे ईश देवता ईशत्व नामक धर्म को धारण करता है। ईश शब्द का अर्थ है स्वामी, मालिक, पति इत्यादि अर्थात् वह ईश देवता स्वामित्व के गुणों से युक्त है।

इसी बात को यदि दूसरी तरीके से देखना चाहे तो जब हम कहते हैं कि मुरलीधर अर्थात् वह देवता जो मुरली को धारण किए है। या जब हम कहते हैं कि सुदर्शनचक्र धारी अर्थात् ऐसा देवता जो सुदर्शन नामक चक्र को धारण करता है, अर्थात् भगवान विष्णु।

इसी बात का विश्लेषण जब आप और अधिक करना चाहे तब हम कहेंगे कि सूर्य के बारह नाम द्वादश आदित्य होते हैं। अब आप कह सकते हैं कि सूर्य तो एक ही हैं, फिर उसके १२ नाम क्या बताएँगे? सूर्य के यह १२

नाम अलग-अलग महीने के आधार पर होते हैअर्थात् चैत्र महीने के सूर्य का नाम एक होता है तो वैशाख महीने के सूर्य का दूसरा। सूर्य के अलग-अलग नाम उस-उस महीने वाले सूर्य से निकलने वाले विकिरण तथा उससे उत्पन्न होने वाले प्रभाव को बताते हैं। ज्येष्ठ महीने का सूर्य मृत्यु तक दे सकता है तो वही सूर्य आषाढ़ महीने में मित्रवत् कार्य करने के कारण मित्र कहलाता है। इस प्रकार से सूर्य के ये अलग-अलग १२ नाम, उसकी १२ प्रकार की ऊर्जाओं को प्रदर्शित या व्यक्त कर रहे हैं।

इसी को आधार बना कर हम यह पता लगा सकते हैं कि वास्तुपद विन्यास के ४५ देवता किस- किस प्रकार की ऊर्जा का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

२ **देवता का प्रतिमा विज्ञानः**- वैदिक काल में देवताओं की शक्तियों की उपासना सीधे-सीधे मन्त्र यज्ञ इत्यादि के द्वारा की जाती थी। कालान्तर में उन्हीं देवताओं की पूजा मूर्ति, चित्र इत्यादि के माध्यम से भी की जाने लगी। देवता की यह प्रतिमा उस देवता के गुणों को सांकेतिक रूप से अभिव्यक्त करने लगी।

प्रत्येक देवता का एक रंग या वर्ण होता है, उनकी एक आकृति होती है, जिसमें एक या एक से अधिक मुख, आँख, हाथ इत्यादि होते हैं। उनके वस्त्र का रंग, उनके हाथों में धारण किए जाने वाले अस्त्र, शस्त्र व मुद्रा, उनका वाहन, उनकी शक्ति (पत्नि), उनका भोजन, उनके आभूषण, उनके मन्त्र इत्यादि के द्वारा वह देवता अपने गुणों को प्रकट करता है या यूँ कहें की अपनी प्रापर्टीज को रिप्रजेन्ट (प्रदर्शित) करता है। इस विधि से जब हम चलते हैं तो हमें उस देवता के हाथ में धारण किए जाने वाले अस्त्र-शस्त्र किन गुणों को प्रकट करते हैं इसका ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। जब हमें उस देवता की ऊर्जा का पता चल जाएगा तब उसके पद में हमें क्या बनवाना चाहिए या वह पद में किस प्रकार की ऊर्जा है तो हम उसका किस प्रकार उपयोग करें यह स्पष्ट हो पाएगा। इतना ही नहीं वरन् उस पद में यदि कोई दोष है तो उस दोष का निवारण किस प्रकार किया जाए यह भी हम जान पाएंगे। इसका सरलतम उपाय यह हो सकता है कि जो पद दूषित हो वहाँ उस देवता के भोज्य पदार्थ (भोजन) का वहाँ मन्त्रों के

साथ हवन किया जाए।

३ निघण्टु

ये देवता किन गुणों को प्रकट कर रहे हैं यह बताने के लिए जो शास्त्र है वह निघण्टु या निरुक्त के नाम से जाना जाता है। यह अत्यन्त ही दुर्भाग्य का विषय है कि इस प्रकार के अधिकांश शास्त्र लुप्त (गुम) हो गए हैं जो उपलब्ध ग्रन्थ है उनके आधार पर यह निम्न चीजें इन गुणों को या बातों को रिप्रजेन्ट करती है या इनके प्रतीक है।

चन्द्रमा	ज्ञान
शुक (तोता)	कला व विद्या
काला	शोक व अपकीर्ति
लाल	वशीकरण, आकर्षण, श्री, सौभाग्य, विजय व क्रोध
सफेद	ज्ञान, शान्ति, श्री, सौभाग्य, कीर्ति व मोक्ष
पीला	स्तम्भन
नीला	मारण, उच्चाटण
धूम्र	उच्चाटन

६ **उस देवता के पद को किस प्रयोजन में लाया जाता है**:- कौन सा देवता किस प्रकार की ऊर्जा को प्रदर्शित कर रहा है इसका एक अत्यन्त सशक्त आधार इस पद का उपयोग भी हो सकता है। जैसे उदाहरण के लिए यदि भृंगराज का पद में सेनापति को रहना चाहिए ऐसा वर्णन हमें ग्रन्थों में मिले तो हम कह सकते हैं कि भृंगराज का पद सेनापति के लिए उपयुक्त गुणों को रखता है एवं प्रदर्शित करता है। अदिति के पद में द्वार बनाने पर महिलाओं को नुकसान होता है। मयमत ग्रन्थ में यह वर्णन मिलता है कि अदिति पद का स्थान बांझ, कुबड़ी, ठिगनी महिलाओं के लिए कहा गया है। इससे हम यह कह सकते हैंकि इस पद की ऊर्जा सामान्य महिलाओं के अनुकूल नहीं है।

७ **किसी देवता के पद मेंकोई दोष उत्पन्न होने पर** उसका जो दुष्परिणाम होता है उसके द्वारा भी हम उस देवता की ऊर्जा का पता लगा सकते हैं।

८ इसके अतिरिक्त समरांगण सूत्रधार, मयमत, मानसार आदि ग्रन्थों में हमें गृहदोष निरुपण का वर्णन मिलता है। जिससे हमें पता चलता है कि घर का कौन सा भाग घर के किस व्यक्ति को प्रभावित करता है। जैसे वारना टूटने पर बड़ा पुत्र बाधित होता है या उसे कष्ट होता है।

२७.२ सैद्धान्तिक आधार

जैसा कि हम जानते हैं कि सूर्य, चन्द्र आदि ९ ग्रह एवं अश्विन आदि २७ नक्षत्र तथा पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर परिक्रमा लगाने सहित अपनी धूरी पर घूमने के कारण भूखण्ड पर ऊर्जा का अलग-अलग प्रभाव पड़ता है, ऊर्जा के क्षेत्र उत्पन्न होते हैं। अर्थात सामान्य शब्दों में कहें तो किसी भी प्लाट के अलग-अलग भाग की ऊर्जा अलग-अलग होती है। हम देखे चुकें हैं कि ईशान कोण की ऊर्जा अलग प्रकार की है तो आग्नेय कोण की ऊर्जा अलग प्रकार की है।

पदविन्यास में यह बताया गया है कि किसी भी भूखण्ड पर ४५ प्रकार की ऊर्जा होती है, यह अलग-अलग प्रकार की ऊर्जा अलग-अलग देवता के नाम से व्यक्त या प्रदर्शित की गई है। भूखण्ड के जिस क्षेत्र या भाग में जिस प्रकार की ऊर्जा हो उसके अनुरुप ही निर्माण करना चाहिए। इस प्रकार का निर्माण करने से प्रकृति की पोषणकारी शक्ति प्राप्त होती है। यदि ऊर्जा के प्रतिकूल (विपरीत) निर्माण किया तो वह ऊर्जा प्रतिकूल परिणाम देती है। उदाहरण के लिए भूखण्ड के जिस भाग में क्रियाशीलता बहुत अधिक है वहाँ विश्राम करना चाहेंगे तो नींद पूरी नहीं होगी। इसके विपरीत जिस भाग में क्रियाशीलता बहुत कम हो वहाँ कार्य करेंगे तो नींद आएगी, आलस्य आएगा आदि, आदि।

२७.३ पद विन्यास

सबसे पहले पूरे भूखण्ड को ९ गुणित ९ अर्थात ८१ भागों में विभाजित करते हैं। इसमें कुल ४५ अलग-अलग प्रकार की ऊर्जा होती है जो की देवता के माध्यम से अभिव्यक्त की गई है। किसी भी भूखण्ड पर इन ४५ देवताओं की स्थापना को वास्तु पद विन्यास कहते हैं।

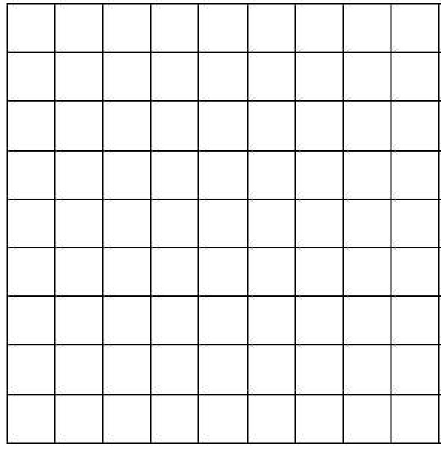
आइए किसी भी क्षेत्र पर वास्तु पदविन्यास करने की विधि का अध्ययन करें-

चित्र क्रमांक १ में दिखाया गया है कि भूखण्ड को १० आड़ी तथा १० खड़ी रेखा के माध्यम से ८१ भागों में विभाजित करते हैं।

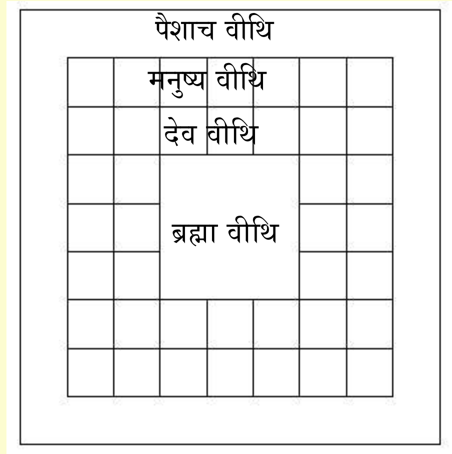
चित्र क्रमांक २ के अनुसार मध्य के ९ भाग ब्रह्मा भाग कहलाते हैं तथा सबसे बाहरी

वीथी (भाग, घेरा) पैशाच वीथी कहलाती है। इन दोनों के बीच के हिस्से देव व मनुष्य भाग (वीथी) कहलाते हैं।

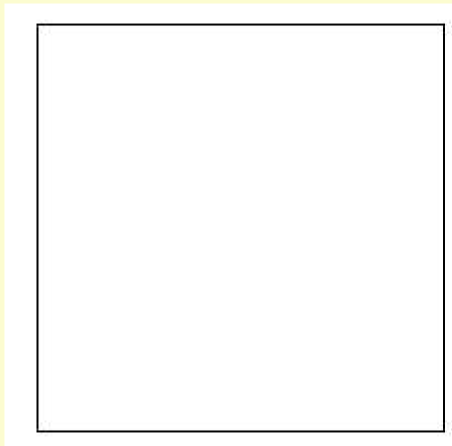
देव व मनुष्य भाग में ही निर्माण करते हैं। ब्रह्मा भाग (मध्य का स्थान) हवा, प्रकाश आदि के लिए खुला छोड़ देते हैं। पैशाच भाग भी खुला रहता है, इसमें निर्माण आदि नहीं करते हैं, यहाँ वाहन आदि रखने की व्यवस्था रहती है तथा इसी भाग से हवा व प्रकाश घर या कमरों में आता है।



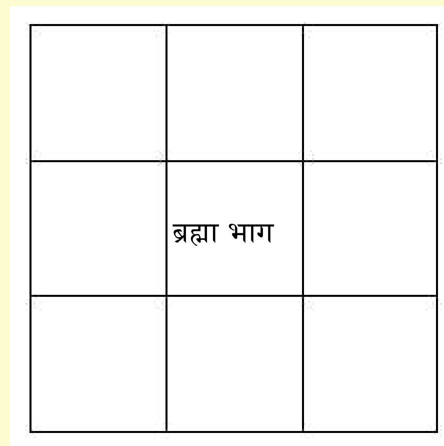
(चित्र क्रमांक १)



(चित्र क्रमांक २)



(चित्र क्रमांक ३)



(चित्र क्रमांक ४)

आइए सबसे पहले किसी भी प्लाट का ब्रह्मा भाग तथा पैशाच भाग ज्ञात करने (निकालने) की विधि का अध्ययन करें-

हमने चित्र क्रमांक १ व २ में देखा कि लम्बाई व चौड़ाई के ९-९ भाग करने पर ब्रह्मा के ३-३ (कुल ९ भाग) भाग होते है।

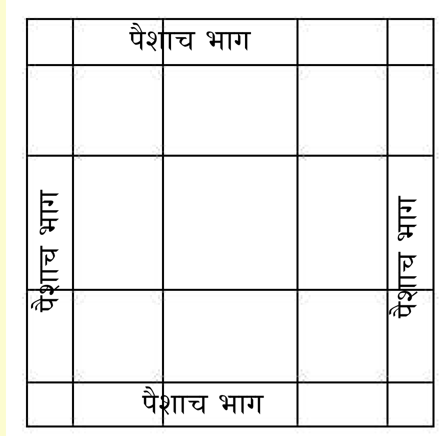
अतः ब्रह्मा भाग लम्बाई का एक तिहाई तथा चौड़ाई का भी एक तिहाई होता है।

चित्र क्रमांक ३ में प्लाट बनाया।

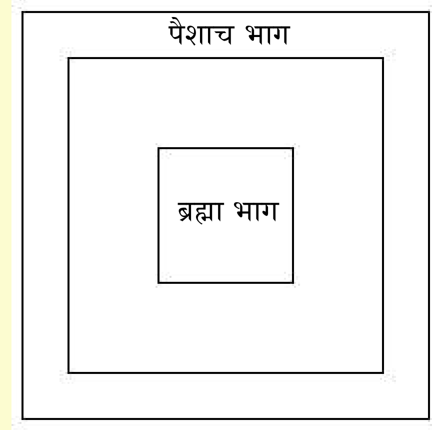
चित्र क्रमांक ४ में प्लाट की लम्बाई को तीन भागों में विभाजित किया, इसी प्रकार प्लाट की चौड़ाई के भी तीन भाग किए।

हमें मध्य में ब्रह्मा भाग प्राप्त हुआ।

उदाहरण- माना कि किसी वर्गाकार प्लाट की लम्बाई व चौड़ाई ६०-६० फीट है। तो लम्बाई व चौड़ाई का एक तिहाई करने पर मध्य में २० गुणित २० फीट का क्षेत्र ब्रह्मा भाग के रुप में प्राप्त होगा।



(चित्र क्रमांक ५)



(चित्र क्रमांक ६)

पैशाच भाग ज्ञात करना (निकालना)-

जैसा कि चित्र क्रमांक १ व २ को सूक्ष्मता से देखने पर हम पाते हैं कि पैशाच भाग कुल लम्बाई के ९ भाग में से एक भाग, इसी प्रकार कुल चौड़ाई के ९ में से १ भाग होता है।

अतः लम्बाई का नवाँ भाग तथा चौड़ाई का नवाँ भाग करने पर पैशाच भाग प्राप्त होता है। (चित्र क्रमांक ५ देखें)

चित्र क्रमांक ६ में ब्रह्मा भाग तथा पैशाच भाग एक साथ देख सकते हैं। इन भागों में निर्माण नहीं करते हैं।

४५ देवताओं का पद स्थान

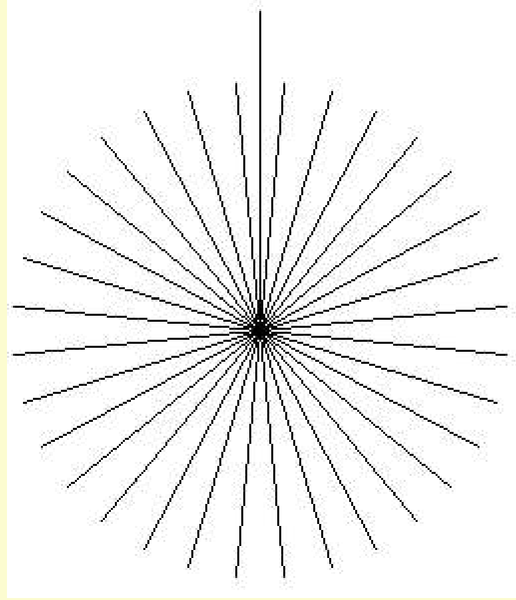
सबसे पहले पूरे भूखण्ड को ९ गुणित ९ अर्थात ८१ भागों में विभाजित करते हैं। इसमें कुल ४५ अलग-अलग प्रकार की ऊर्जा होती है जो की देवता के माध्यम से अभिव्यक्त की गई है। किसी भी भूखण्ड पर इन ४५ देवताओं की स्थापना को वास्तु पद विन्यास कहते हैं।

इसमें मध्य के ९ भाग ब्रह्मा भाग कहलाते हैं। इसे ब्रह्मा देवता का स्थान कहा है। सबसे बाहरी हिस्से में ३२ देवता होते हैं, यह पैशाच वीथि कहलाती है। ब्रह्मा भाग व पैशाच वीथि

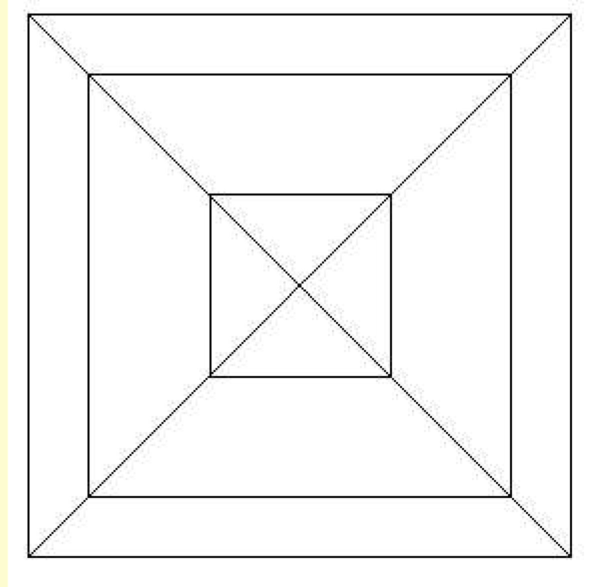
उत्तर

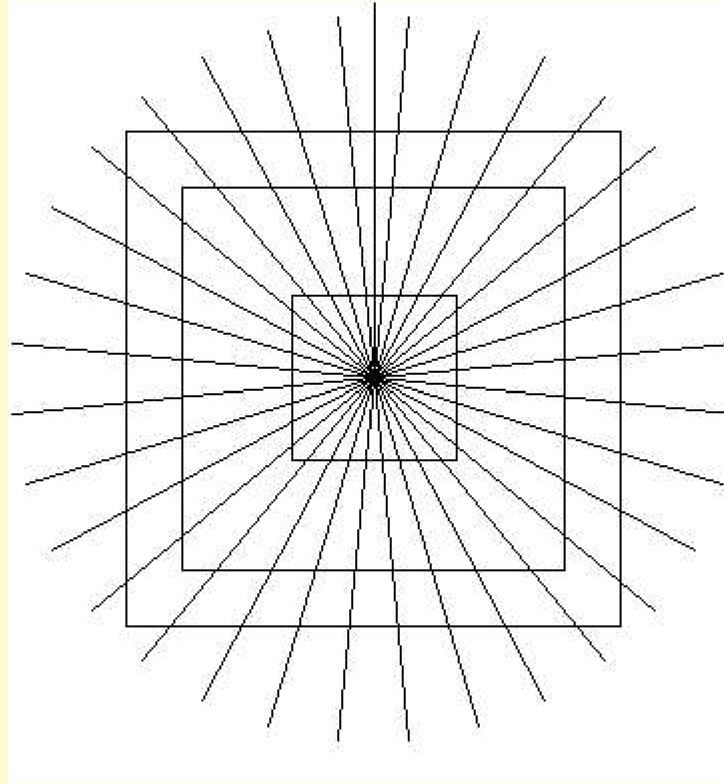
मारुत	नाग	मुख्य	भल्लाट	सोम	सर्प	अदिति	दिति	शिखी
रोग	रुद्र	रुद्रजय	भूधर			अपवत्स	आपवत्स	पर्जन्य
शोष								जयन्त
असुर	मित्र		ब्रह्मा			आर्यमा		महेन्द्र
वरुण								सूर्य
पुष्पदन्त								सत्य
सुग्रीव	इन्द्रराज	इन्द्र	विवस्वान			सावित्र	सवित्र	भृश
दौवारिक								अन्तरिक्ष
पितृ	मृग	भृंगराज	गन्धर्व	यम	गृहक्षत	वितथ	पूषा	अग्नि

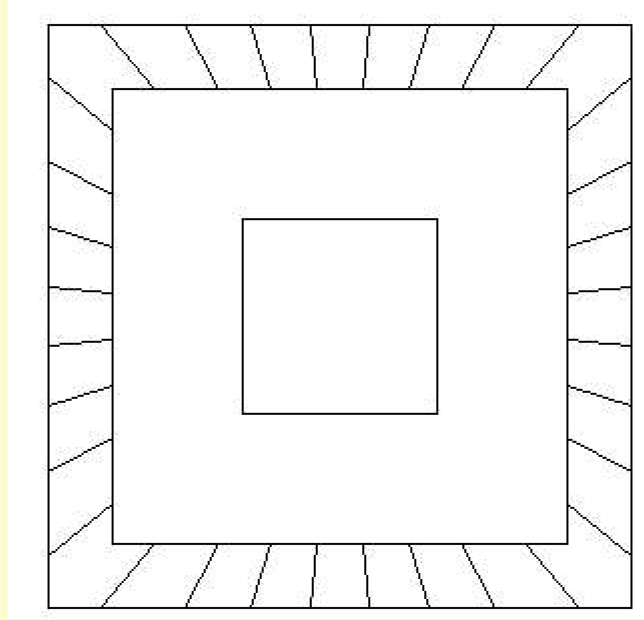
के बीच में देव तथा मनुष्य वीथि होती है।



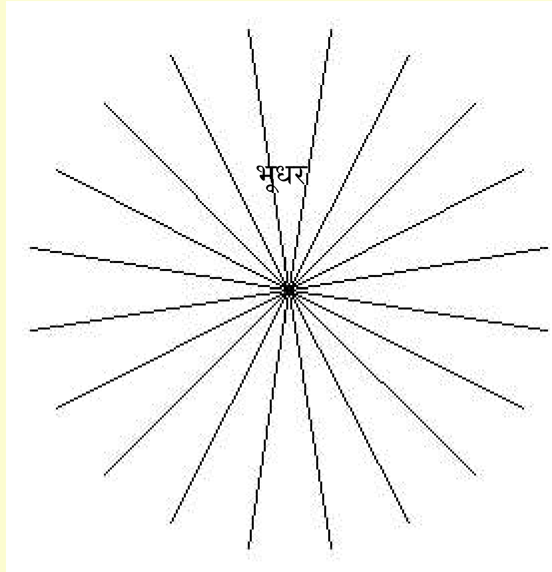
ब्रह्मा देवता-१

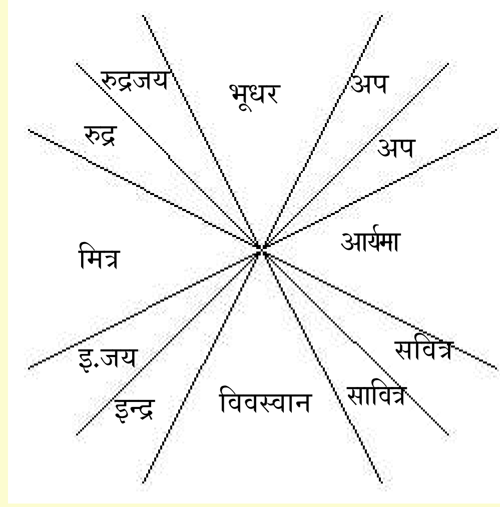


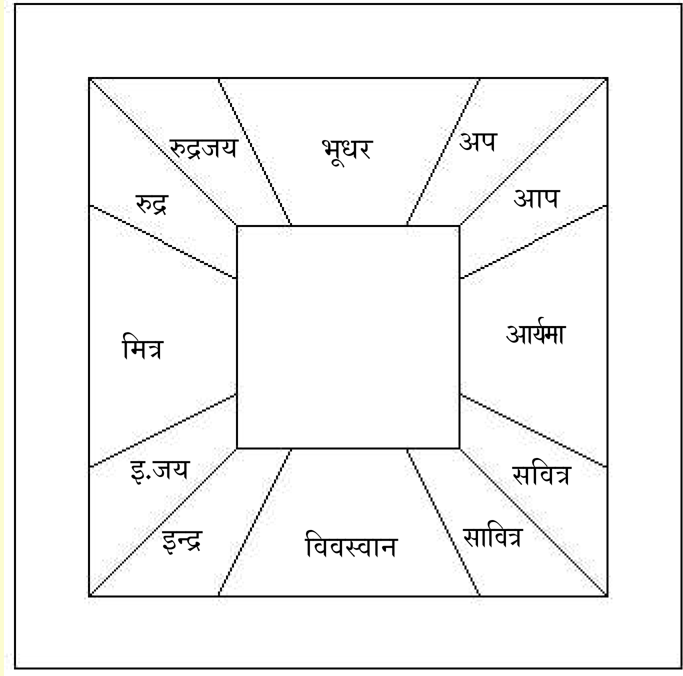


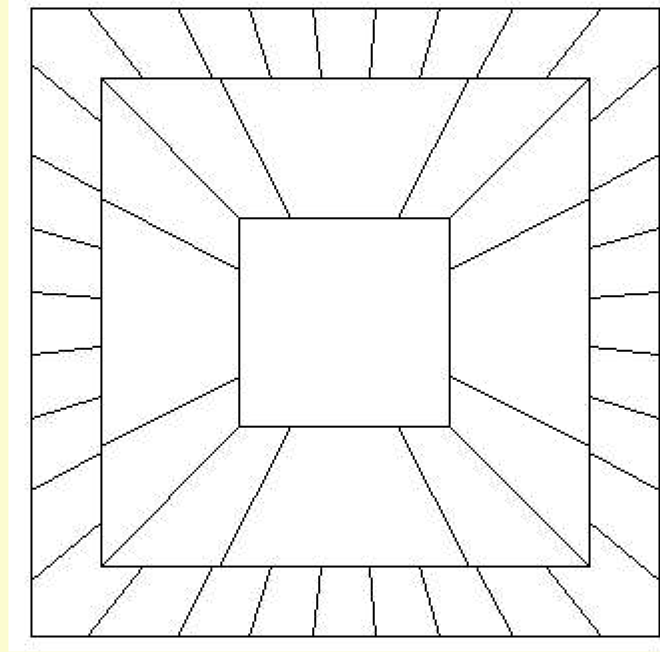


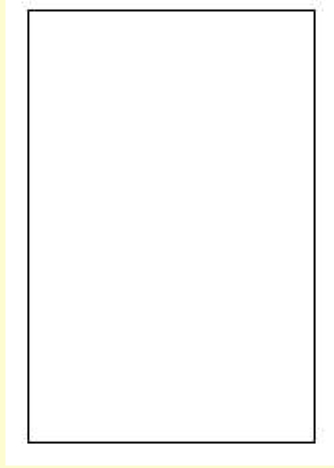
पैशाच भाग के देवता- ३२



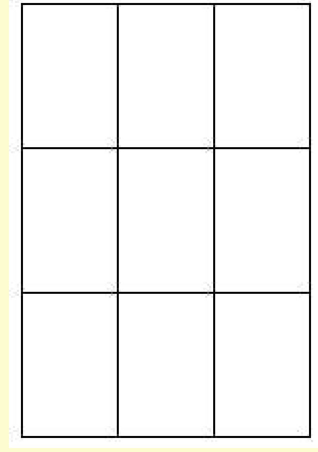

रुद्रजय
भूधर
अप
रुद्र
अप
मित्र
आर्यमा
इ.जय
सवित्र
इन्द्र
विवस्वान
सावित्र


रुद्रजय
भूधर
अप
रुद्र
आप
मित्र
आर्यमा
इ.जय
सवित्र
इन्द्र
विवस्वान
सावित्र

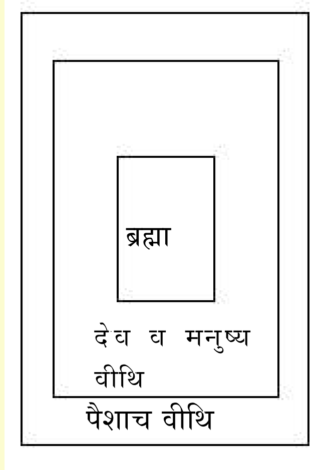


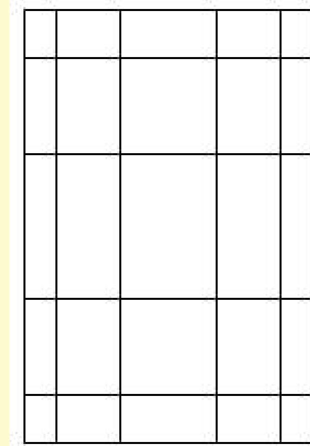


प्लाट



ल. व चौ. को
१/३ करना





विभिन्न वीथी

शेष देवता मनुष्य व देव भाग के - १२

कुल देवता संख्या- ४५

चित्र देखें- बाहर के भाग के ३२ देवता इस प्रकार हैं- ईश, पर्जन्य, जयन्त, महेन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश, अन्तरिक्ष, अग्नि, पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व, भृंगराज, मृग, पितृ, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, शोष, रोग, मारुत, नाग, मुख्य, भल्लाट, सोम, सर्प (चरक), अदिति, उदिति। ये सभी देवता १-१ पद के हैं।

मध्य में ब्रह्मा ९ पद के हैं। ब्रह्मा व बाहरी देवता के बीच में आर्यमा, विवस्वान, मित्र व भूधर ६-६ पद के हैं। आप-अपवत्स, सवित्र-सावित्र, इन्द्र-इन्द्रजय व रुद्र-रुद्रजय ये सभी देवता २-२ पद के हैं।

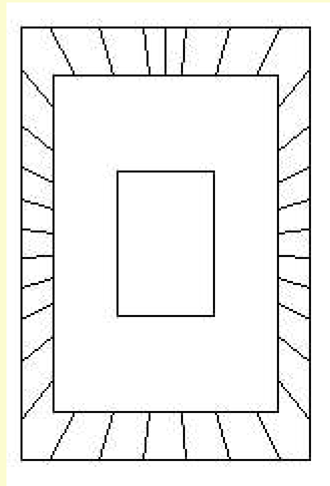
इस प्रकार से हमने देखा कि बाहर के देवता ३२

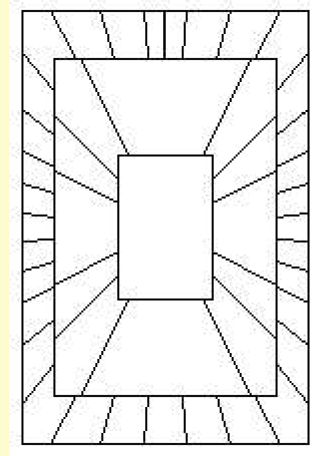
अन्दर के देवता १

मध्य के देवता १२ कुल देवता ४५

परमशायिक पद विन्यास में बाहरी ओर ३२ पद होते है। ये बाहर के ३२ पद में बाहरी ओर जो ३२ देवता स्थित हैं।

अब इसको यदि हम सर्क्यूलर पद विन्यास की दृष्टि से देखें तो ये पूरे ३२ देवता ३६० डिग्री में स्थित है अर्थात ईश से प्रारम्भ होकर ईश, पर्जन्य, जयन्त,..........,सोम, सर्प, अदिति,





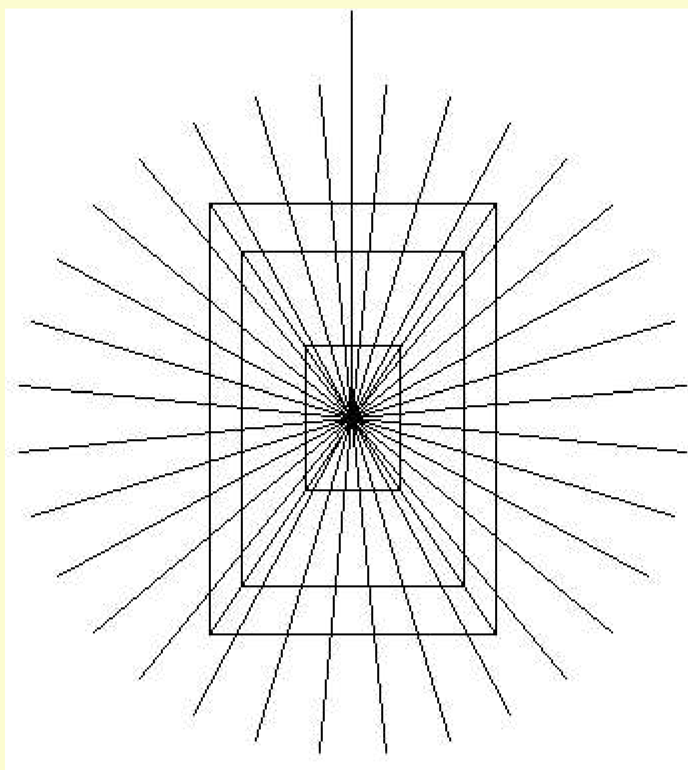
उदिति ये मिलाकर ३६० डिग्री का कोण बनाते हैं, तो ये एक देवता या एक पद कितने कोण या डिग्री का हुआ? ३६० डिग्री को ३२ से विभाजित करेंगे क्योंकि देवता ३२ है, तो ११.२५ डिग्री अर्थात एक देवता या एक पद ११.२५ डिग्री का हुआ।

एक ऐसा चक्र बनाया जो कि ३२ बराबर भागों में विभाजित है। इस चक्र का मध्य बिन्दु को प्लाट के मध्य बिन्दु पर मिलाकर रखा।

इससे हमें बाहरी (पैशाच) वीथि में बाहरी ३२ देवताओं के पद का ज्ञान चित्रानुसार हुआ।

बाहरी ३२ पद तथा ब्रह्म स्थान का निर्धारण तो हमने कर लिया। अब इनके बीच के जो पद है उनका निर्धारण करते है। इनमें जो बारह देवता हैं वे सब मिलकर ४० पदों में विराजमान हैं, अर्थात स्थित है।

इनमें से आर्यमा, विवस्वान, मित्र तथा भूधर ये ४ देवता ६-६ पद के एवं अन्य देवता सवित्र-सावित्र, इन्द्र-इन्द्रजय, रुद्र-रुद्रजय तथा अपवत्स-आपवत्स ये ८ देवता २-२ पद के है। इस प्रकार ये १२ देवता ४० पदों में विराजमान हैं।



बाहरी वीथि के देवता

ये सारे देवता कुल ३६० डिग्री का कोण बनाते हैं, चित्र में देखने पर आपको यह स्पष्ट हो जाएगा कि कौन सा देवता कितनी डिग्री की जगह लिए हुए है, ३६० डिग्री

को विभाजित करेगें २० डिग्री से तो १८ डिग्री आएगा। अर्थात सवित्र-सावित्र, इन्द्र-इन्द्रजय, रुद्र-रुद्रजय तथा अपवत्स-आपवत्स ये आठ देवता १८-१८ डिग्री की जगह लिए हुए हैं, जबकि आर्यमा, विवस्वान, मित्र तथा भूधर ये ४ देवता ५४-५४ डिग्री की जगह लिए हुए हैं।

इसमें भी यह बात ध्यान देने योग्य है, कि जो भूधर है उसके मध्य से उत्तर रेखा जाती हैं, अर्थात आधा भूधर उत्तर रेखा के बाई ओर तथा आधा भूधर उत्तर रेखा के दाहिनी ओर स्थित है।

अब हमने एक ऐसा चक्र बनाया जो कि २० बराबर भागों में विभाजित है। अर्थात एक भाग ३२० भागित २० बराबर १८ अंश का है।

इस चक्र के मध्य बिन्दु को प्लाट के मध्य स्थान पर रखा। चित्रानुसार देवता का स्थान ज्ञात हुआ।

इस प्रकार पूरे ४५ देवताओं का विन्यास चित्रानुसार हुआ।

अब आयताकार प्लाट के पदविन्यास को देखें यह चित्रानुसार है-

इस प्रकार से हमने देखा कि प्लाट आयताकार होने पर अन्तर आ जाता है। आयताकार में कुछ देवताओं का स्थान अधिक तथा कुछ देवता का स्थान का क्षेत्र कम होता है। जो देवता कोण में स्थित होते हैं व अधिक क्षेत्र के स्वामी होते है। लेकिन सबको अंश समान रुप से मिलते हैं।

अभ्यास-

४० फीट चौड़े तथा ६० फीट लम्बे उत्तर मुख वाले प्लाट (जिसमें रोड़ उत्तर दिशा में है) का वास्तुपद विन्यास करें।

प्रश्न इसका ब्रह्म स्थान का नाप (मान) बताएँ?

इकाई-२८

मर्म स्थान

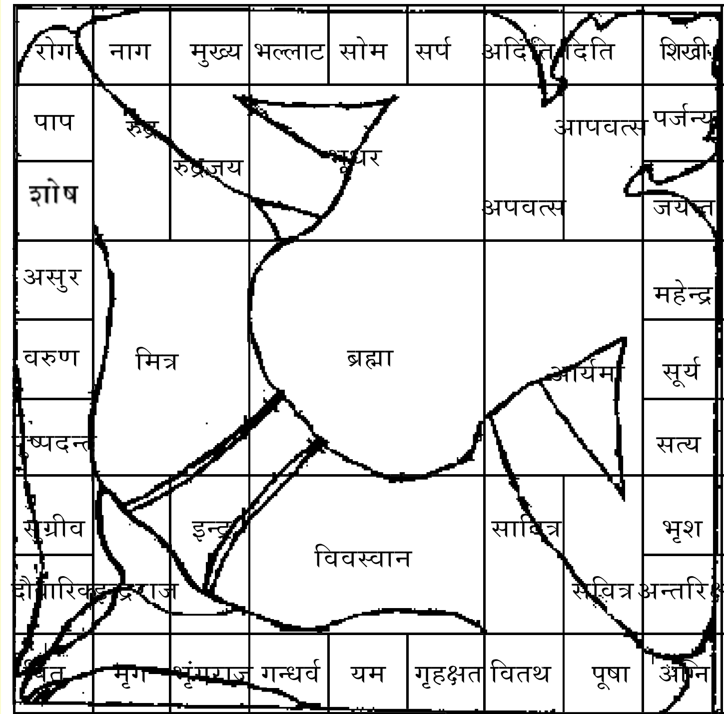
उद्देश्य- इस इकाई में हम वास्तु के संवेदनशील बिन्दु (मर्म स्थान) ज्ञात करने की विधि , उस स्थान पर निर्माण या नकारात्मक ऊर्जा होने के दुष्प्रभाव के परिणाम का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

वास्तु में मर्म स्थान का पता लगा पाएँगे।

वास्तु में मर्म के दोष को ज्ञात कर पाएँगे।

जैसा कि हम जानते हैं कि वास्तुशास्त्र में एक वास्तुपुरुष की कल्पना की गई है। पूरे प्लाट या बने हुए क्षेत्र पर वास्तुपदविन्यास किया जाता है। इस पर (प्लाट या बने हुए हिस्से पर) ऐसा माना जाता है कि एक वास्तुपुरुष है। उसका सिर ईशान कोण में है तथा उसके पैर नैर्ऋत्य कोण में हैं तथा वह औंधे मुख लेटा हुआ है। उसके शरीर पर

उत्तर



विभिन्न देवता रहते हैं। इस वास्तुपुरुष के शरीर पर जो नाजुक स्थान है, बहुत ही संवेदनशील स्थान हैं, उन्हें मर्म स्थान कहते हैं। इन स्थानों पर कोई भी नकारात्मक ऊर्जा देने वाला पदार्थ नहीं रखना चाहिए, न ही इन स्थानों पर कोई कॉलम या दीवार बनवाना चाहिए। ये स्थान वास्तव में ऊर्जा के केन्द्र हैं। इन स्थानों पर नकारात्मक ऊर्जा होने पर पूरे क्षेत्र में नकारात्मक ऊर्जा फैलती है। इन्हीं स्थानों पर सकारात्मक ऊर्जा वाले पदार्थ होने पर पूरा भवन सकारात्मक ऊर्जा से चार्ज हो जाता है।

उत्तर

<table>
<tr><td>रोग</td><td>नाग</td><td>मुख्य</td><td>भल्लाट</td><td>सोम</td><td>सर्प</td><td>अदिति</td><td>दिति</td><td>शिखी</td></tr>
<tr><td>पाप</td><td rowspan="2">रुद्र</td><td rowspan="2">रुद्रजय</td><td colspan="3" rowspan="2">भूधर</td><td rowspan="2">अपवत्स</td><td rowspan="2">आपवत्स</td><td>पर्जन्य</td></tr>
<tr><td>शोष</td><td>जयन्त</td></tr>
<tr><td>असुर</td><td colspan="2" rowspan="3">मित्र</td><td colspan="3" rowspan="3">ब्रह्मा</td><td colspan="2" rowspan="3">आर्यमा</td><td>महेन्द्र</td></tr>
<tr><td>वरुण</td><td>सूर्य</td></tr>
<tr><td>पुष्पदन्त</td><td>सत्य</td></tr>
<tr><td>सुग्रीव</td><td rowspan="2">इन्द्रराज</td><td rowspan="2">इन्द्र</td><td colspan="3" rowspan="2">विवस्वान</td><td rowspan="2">सावित्र</td><td rowspan="2">सवित्र</td><td>भृश</td></tr>
<tr><td>दौवारिक</td><td>अन्तरिक्ष</td></tr>
<tr><td>पितृ</td><td>मृग</td><td>भृंगराज</td><td>गन्धर्व</td><td>यम</td><td>गृहक्षत</td><td>वितथ</td><td>पूषा</td><td>अग्नि</td></tr>
</table>

मर्म स्थान ज्ञात करने की विधि

वास्तु पद विन्यास का अध्ययन हम कर चुके हैं। अब मर्म स्थान की विधि का वर्णन करते हैं। मर्म स्थान ज्ञात करने के लिए ईश पद के मध्य स्थान से एक रेखा पितृ पद के मध्य स्थान तक खींचे। दूसरी रेखा जयन्त पद के मध्य से भृंगराज पद के मध्य तक खींचे, तथा इसी प्रकार अदिति पद के मध्य से सुग्रीव पद के मध्य तक, वायु पद के मध्य से अग्नि पद के मध्य तक, मुख्य पद के मध्य से भृश पद के मध्य तक तथा शोष पद के मध्य से वितथ पद के मध्य तक एक-एक रेखा खींचे।

उत्तर

रोग	नाग	मुख्य	भल्लाट	सोम	सर्प	अदिति	दिति	शिखी
पाप	रुद्र	रुद्रजय	भूधर			अपवत्स	आपवत्स	पर्जन्य
शोष								जयन्त
असुर	मित्र		ब्रह्मा			आर्यमा		महेन्द्र
वरुण								सूर्य
पुष्पदन्त								सत्य
सुग्रीव	इन्द्रराज	इन्द्र	विवस्वान			सावित्र	सवित्र	भृश
दौवारिक								अन्तरिक्ष
पितृ	मृग	भृंगराज	गन्धर्व	यम	गृहक्षत	वितथ	पूषा	अग्नि

जिन स्थानों पर ये रेखाएँ एक-दूसरे को काटती हैं, वे मर्म स्थान कहलाते हैं। इन स्थानों पर दीवार, स्तम्भ आदि निर्माण कार्य नहीं करना चाहिए।

इन मर्म स्थान पर भूमि के अन्दर निम्न दोष होने से निम्न परिणाम उत्पन्न होते हैं-

मर्म स्थान पर दोष	परिणाम
लकड़ी	धन हानि
हड्डी	पशुपीड़ा, रोग
लोहा	शस्त्र भय
खोपड़ी	मृत्यु
बाल	मृत्यु
कोयला	चौरभय
राख	अग्नि भय
भूसी	धन आगमन को रोकता है।

दोष की पहचान

निर्माण कार्य प्रारम्भ करने से पहले शल्य दोष का पता लगाकर उसे निकाल देना चाहिए। यदि किसी भवन को बनाते समय उसमें भूमि के अन्दर शल्य रह जाए तो उसका प्रभाव निम्न प्रकार के लक्षण के द्वारा होता हैः-

- पहले बुरे स्वप्न आते हैं।
- उसके पश्चात धन की हानि होती है।
- उसके पश्चात रोग होते हैं।
- उसके पश्चात मृत्यु की आशंका रहती है।

अतः इन स्थानों से दोष को मालूम करके निकालना अत्यन्त आवश्यक है।

फ्लेट में मर्म स्थान के अतिरिक्त, अलग-अलग कमरे के सेन्टर भी चार्ज किया जा सकता है।

पाठ २९

वर्णाश्रम व्यवस्था

इकाई का उद्देश्य

इस इकाई में हम यह देखेंगे कि मनुष्यों को उनकी प्रकृति के अनुसार चार श्रेणियों में बाँटा गया है। प्रत्येक श्रेणी के लिए वास्तुशास्त्र के नियम बताए गए हैं। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

मनुष्य (जातक, व्यक्ति जिसके लिए आपको वास्तु करना है) की श्रेणी (वर्ण) बता पाएँगें।

किस व्यक्ति के लिए वास्तुशास्त्र के कौन से नियम लागू होगें यह बता पाएँगे।

विषय प्रवेश

जैसा कि हम जानते है कि प्रत्येक मनुष्य की प्रकृति अलग होती है। हर एक व्यक्ति के स्वभाव में दूसरे से भिन्नता पाई जाती है। उसकी रुचि दूसरे से भिन्न होती है। एक व्यक्ति को एक वस्तु पसंद है, तो वही वस्तु दूसरे का पसंद नहीं है। किसी को क्रीम कलर अच्छा लगता है तो दूसरे को लाल रंग अच्छा लगता है। किसी को अचार पसंद है तो दूसरे को मिठाई। वास्तुशास्त्र में व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार नियम बनाए गए है कि किस प्रकार की प्रकृति वाले व्यक्ति के लिए वास्तुशास्त्र के कौन से नियम लागू होगें।

वास्तुशास्त्र में व्यक्तियों को चार श्रेणी या वर्गो या वर्णो में विभाजित किया गया है। यही व्यवस्था वर्णाश्रम व्यवस्था कहलाती है। ये चार श्रेणियाँ इस प्रकार हैं-

(१) जिन व्यक्ति की प्रकृति अध्ययन, अध्यापन, मनन, चिन्तन प्रधान है, जो परोपकारी हैं, सेवाभाव से कार्य करते हैं। इन्हें शास्त्र में ब्राह्मण कहा गया है।

(२) जो प्रशासनिक कार्यों में रत हैं, लगे हैं। ये क्षत्रिय कहलाते हैं।

(३) जो व्यापार-व्यवसाय करते हैं। इन्हें वैश्य कहते हैं।

(४) जो चतुर्थ श्रेणी में आते हैं, अन्य तीन श्रेणी में लगे हुए लोगों की सेवा करते हैं। ये शूद्र कहलाते हैं।

आज भी हम देखते हैं कि कर्मचारी की भी चार श्रेणियाँ होती है, प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, तृतीय श्रेणी तथा चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी।

आयुर्वेद की दृष्टि से भी देखें तो हम पाते हैं कि जब कोई रोगी वैद्य के पास जाता है, तब वैद्य, रोग के साथ-साथ उस व्यक्ति की मुख्य प्रकृति क्या है, उसमें अग्नि (पित्त) तत्व प्रधान है, या जल (कफ़) या वायु (वात) तत्व प्रधान है, उसके आधार पर वह उस व्यक्ति को औषधि देता है। साथ ही कहता है, कि भई इस औषधि को आप जल के साथ लेना। दूसरे व्यक्ति (जिसे यही रोग हो) की प्रकृति भिन्न हो तो उसे कहेगा कि इस औषधि को शहद के साथ लेना, किसी अन्य को कह सकता है कि तुम घी के साथ लेना, किसी को दूध के साथ औषधि लेने को कह सकता है। यह निर्धारण, रोगी की प्रकृति के अनुसार होता है।

विषय- ठीक इसी प्रकार वास्तुशास्त्र में भी व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार, नियम बताए गए हैं। उसके अनुसार निर्धारित करते हैं कि इस व्यक्ति के लिए उत्तरी मुखी घर लेना ठीक है, तो दूसरे की प्रकृति के अनुसार दक्षिण या अन्य के लिए पश्चिम मुखी प्लॉट लेना उचित है।

एक व्यक्ति के लिए सफेद रंग शुभ है, दूसरे के लिए लाल तो अन्य के लिए सुनहरा रंग शुभ है।

किस व्यक्ति का कौन सा कक्ष किस दिशा में हो, इसका निर्धारण भी व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार किया जाता है। पूजा कक्ष, शयन कक्ष, आदि सभी कक्षों की दिशा का निर्धारण भी व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार ही होता हैं।

वर्णाश्रम का निर्धारण-

ब्राह्मण- जैसा कि हमने देखा कि जिनका कार्य अध्ययन, अध्यापन, मनन व चिन्तन का है, जो परोपकारी प्रकृति के हैं, उनको ब्राह्मण कहा गया है। आज के समय में जो सेवा कार्य में रत है, परोपकार की भावना से कार्य करते हैं, जिनका उद्देश्य लोगों का भलाई करना है वे सभी ब्राह्मण के अन्तर्गत आते हैं।

क्षत्रिय- जो प्रशासनिक कार्यों में लगे है। प्रशासनिक कार्य चाहे वो शासकीय हो या अशासकीय सभी क्षत्रिय के अन्तर्गत आते है। उदाहरण के लिए शासकीय कार्यरत कलेक्टर, कमीशनर, पुलिस अधीक्षक आदि। प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति आदि। मन्त्री, सचिव, कुलपति, आदि। हास्पिटल का अधीक्षक, डीन, डायरेक्टर आदि। जिस भी ऑफिस का वास्तु करना हो उसका प्रमुख व्यक्ति जो प्रशासन का कार्य कर रहा है, उसका वास्तु हम क्षत्रिय के लिए दिए गए नियमों के आधार पर करेंगे।

अशासकीय क्षेत्र में लें तो किसी कम्पनी या फैक्ट्री का डायरेक्टर, मेनेजर, आदि। दुकान, वर्कशॉप, आदि का प्रमुख व्यक्ति। जो भी कार्यक्षेत्र हो उसके प्रमुख व्यक्ति के लिए वास्तु करना हो, उसके ऑफिस का वास्तु करना हो तो उसे वास्तुशास्त्र में बताए गए क्षत्रिय वर्ण के अनुसार वास्तुशास्त्र के नियम लागू किए जाएँगें।

वैश्य- वैश्य वर्ण के व्यक्ति की प्रकृति मुख्य रूप से व्यापार-व्यवसाय की है। इनका मुख्य कार्य शास्त्रोक्त विधि से धन का अर्जन करना है। फिर चाहे वह व्यापार, व्यवसाय, विपणन, मार्केटिंग का कार्य करता हो, या शिक्षण का कार्य करता हो या डॉक्टर हो। यदि मुख्य ध्येय धन का अर्जन है तो वह व्यक्ति वैश्य की ही केटगरी (श्रेणी) में आएगा।

शूद्र-यह चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी है। आज के समय में हम नौकर आदि को इस श्रेणी रख सकते हैं। यह चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी है। वह चाहे ऑफिस में कार्य करने वाला लड़का हो या घर में कार्य करने वाले नौकर (सेवक) हो। सभी इसी श्रेणी में आएँगें।

यह चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी का वास्तु का उपयोग तब ही करना है तब हमारा क्लायन्ट उसका आफिसर है, उसका मालिक है। जब हम मालिक के घर या ऑफिस का वास्तु सुधार करेंगे तब उसके नौकर के लिए शूद्र के लिए बताए गए नियम लागू किए जाऐंगे।

जब हमारा क्लायन्ट चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी होगा तब उसका वास्तु करने का आधार भिन्न होगा। यह पाठ्यक्रम में आप धीरे-धीरे इस वास्तु को जान पाएँगें।

प्रश्न

डॉक्टर का कौन सा वर्ण है।

शिक्षक किस वर्ण के अन्तर्गत आता है।

व्यापारी को किस वर्ण में रखेंगे।

कलेक्टर (प्रशासक) का कौन सा वर्ण है।

बैंक अधिकारी किस वर्ण में आएंगें।

अब सवाल उठ सकता है कि इस वर्णाश्रम व्यवस्था को आधुनिक संदर्भ में किस प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है। तब जैसा कि समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ में बताया है कि वर्णाश्रम व्यवस्था कार्य के क्षेत्र पर आधारित है। उसके विस्तार में जब हम जाते है, तो पाते है कि जो व्यक्ति है, जातक है उसके कार्य का क्या क्षेत्र है उससे उसका वर्ण निर्धारित करते है।

एक उदाहरण लेकर देखने का प्रयास करेंगे।- एक व्यक्ति चिकित्सक है, डॉक्टर है, वह एक संस्थान में कार्यरत है, अधीक्षक भी है, अपनी डिस्पेन्सरी भी चलाता है। अब उसके चेम्बर का वास्तु या आन्तरिक सज्जा करना है। तो जो उसके अस्पताल का चेम्बर है, जहाँ वो अधीक्षक भी है, उसमें वह प्रशासन का कार्य करता है तो उसके लिए चिकित्सक तथा क्षत्रियोचित गुण से मिला हुआ वास्तु करना होगा।

जब वह किसी मरीज को उसी अस्पताल में देख रहा है, तो उसे ब्राह्मणोचित गुण का वास्तु करना होगा, सेवाकार्य का। उसी डॉक्टर के क्लिनिक का वास्तु में ब्राह्मणोचित गुण के साथ-साथ वैश्योचित गुण का वास्तु करना होगा, जिससे सेवा के साथ-साथ उसका व्यवसाय भी चले आर्थिक रुप से भी वो सम्पन्न हो।

जैसा जिसका स्वभाव, प्रकृति एंव आचरण हो उसी के अनुरुप उसका वर्ण जानना।

इस प्रकार से व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण किया जाता है।

वास्तु व वर्ण व्यवस्था-

रंग

अब हम इस बात का अध्ययन करेंगे कि ब्राह्मण आदि चार वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र) व्यक्ति के लिए कौन-कौन से रंग शुभ हैं?

ब्राह्मण के लिए सफेद रंग शुभ बताया है। क्षत्रिय के लिए लाल, वैश्य के लिए सुनहरा तथा शूद्र के लिए काला रंग शुभ कहा है।

ब्राह्मण वर्ण के अन्तर्गत कौन-कौन से व्यक्ति आते हैं यह हम पिछली इकाई में देख चुके हैं।

सफेद रंग ज्ञान, कीर्ति, मोक्ष, शान्ति, श्री, सौभाग्य व पवित्रता को प्रदर्शित करता है। इस रंग का प्रयोग करने से इस प्रकार के गुण विकसित होते है।

इस रंग का प्रयोग पर्दे, जमीन (फ्लोरिंग), वस्त्र, आदि के रूप में किया जा सकता है। इस रंग का प्रयोग कमरे की दीवार, आन्तरिक सज्जा व घर के बाहर (रंग) कर सकते हैं।

इस रंग के वाहन का प्रयोग करना भी इन्हीं गुणों को विकसित करता है।

जैसा कि हम जानते हैं कि सात रंग की चकरी बनाकर घुमाने से सफेद रंग दिखता है या प्रिज्म से सफेद रंग की किरण का अपवर्तन कराने पर वह सात रंग में दिखती है। इसका तात्पर्य यह है कि सफेद रंग सातों रंग से मिलकर बनता है। इससे हम यह पाते हैं कि सफेद रंग में सातों रंग के गुणों का समावेश है। हम जो भी गुण विकसित करना चाहे सफेद रंग से विकसित किया जा सकता है। इसीलिए वास्तुशास्त्र में यह भी कहा गया है कि सफेद रंग सभी के लिए शुभ है।

इस बात को इस प्रकार भी कह सकते हैं कि सफेद रंग में कोई अन्य रंग मिलाने पर वही रंग रहता है, अन्य तीसरा रंग नहीं बनता है। दूसरे रंग के गुण ही प्रकट होते हैं। सफेद रंग के साथ जो गुण विकसित करना चाहे कर सकते हैं।

वास्तु परामर्श में सफेद रंग का प्रयोग-

किसी घर या स्थान का वास्तु परामर्श (सलाह) करने जाए, वहाँ समस्या यह हो कि वहॉ अशान्ति रहती है। जो आप दीवार आदि पर सफेद करने का सुझाव दे सकते हैं।

ध्यान आदि का स्थल बनवाना हो, अध्ययन कक्ष बनवाना हो तो सफेद रंग का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए।

लाल रंग

वास्तुशास्त्र में चार वर्ण बताए हैं, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र। हम यह देख चुके हैं कि सफेद रंग ब्राह्मण वर्ण के लिए शुभ है।

वास्तुशास्त्र में क्षत्रिय के लिए लाल (ताम्बे के समान) रंग शुभ बताया है।

लाल रंग वश्य, आकर्षण, श्री, सौभाग्य, विजय, क्रियाशीलता, क्रोध प्रदर्शित करता है।

देवी के उपासक, शक्ति के उपासक लाल रंग का प्रयोग करते हैं।

लाल रंग जैसा हमने जाना कि क्रियाशीलता को अभिव्यक्त करता है, प्रदर्शित करता है, ऊर्जा प्रदान करता है, ऊर्जा देता है। अब लाल रंग का प्रयोग करने पर ऊर्जा तो प्राप्त हो गई परन्तु वही ऊर्जा का उपयोग न हो, व्यक्ति उस ऊर्जा को कार्य रुप में परिणित न करें तो वही ऊर्जा क्रोध के रूप में अभिव्यक्त होने लगती है।

आइए एक उदाहरण से देखे कि जब ऊर्जा अधिक हो और कार्य रूप में परिणित न हो तो कैसे वह क्रोध के रूप में बाहर आती है- सामान्य रूप से भी हम देखें तो एक युवा है, उसमें बहुत ऊर्जा है, अब उस युवा को कार्य न दिया जाए, कार्य करने से बार-बार रोका जाए तो क्रोध के रूप में वही ऊर्जा अभिव्यक्त होने लगती है।

तो लाल रंग ऊर्जा प्रदान करता है, क्रियाशीलता को बढ़ाता है।

क्षत्रिय व्यक्ति जो की प्रशासनिक कार्य करता है, इस कार्य में क्रियाशीलता की अधिक आवश्यकता बनी रहती है। अतः वास्तुशास्त्र में कहा गया है कि उसके लिए लाल रंग शुभ है।

लाल रंग का प्रयोग-

लाल रंग का प्रयोग से यह तात्पर्य कदापि नहीं लेना चाहिए कि पूरा कमरे का रंग लाल कर दिया जाए, सारे पर्दे आदि लाल रंग के कर दिए जाए। इस रंग का प्रयोग अत्यन्त सावधानी पूर्वक करना चाहिए।

जब हम किसी आफिस (प्रशासनिक अधिकार प्राप्त व्यक्ति) का वास्तु करें और वहाँ क्षत्रिय या प्रशासनिक गुण बढ़ाना हों, विकसित करना हो, तो लाल रंग का प्रयोग

उस कमरे की बनी हुई किनार, बार्डर, पेलमेट आदि की लीपिंग, फर्नीचर आदि की बार्डर, फोटो फ्रेम आदि में कर सकते हैं। उस कमरे में छोटी आइटम (सामान) लाल रंग का रख सकते हैं।

वास्तु परामर्श करते समय ध्यान देने योग्य बात-

वास्तु परामर्श करते समय यदि क्लायन्ट यह कहे कि हमारे यहाँ वाद-विवाद या आपस में झगड़े अधिक होते है, छोटी-छोटी सी बात पर ही वाद-विवाद हो जाता है, तो हमें यह देखना चाहिए कि क्या उनके घर में दीवारों पर लाल रंग का प्रयोग किया गया है यदि हाँ तो ऐसा सुझाव देना चाहिए कि आप दीवारों का रंग बदल दें (सफेद या क्रीम कलर करने का सुझाव दिया जा सकता है।) (आपस में झगड़े आदि होने के कई कारण हैं, उनमें से एक कारण लाल रंग भी है। पाठ्यक्रम में यथास्थान अन्य कारण भी बताए जाएँगें।)

पीला (सुनहरा) रंग

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में वैश्य प्रकृति के व्यक्ति के लिए पीला (सुनहरा) रंग शुभ बताया है।

यह रंग का प्रयोग करने से वैश्योचित गुण विकसित होते हैं। हमारे वास्तु परामर्श में इसी रंग का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता है।

आज हमारे पास जो क्लायन्ट का वर्ग है, उनसे से अधिकांश व्यक्ति धन चाहता है। धन प्राप्त करना चाहता है या धन की अभिवृद्धि करना चाहता है।

इस रंग का प्रयोग उनके ऑफिस की दीवार, सफेद रंग के प्रयोग के साथ सुनहरे रंग बार्डर, लीपिंग आदि पर सफलता पूर्वक किया जा सकता है। दरवाजे में लगाए जाने वाले कब्जे, हेन्डल आदि भी इसी रंग के लगाए जा सकते हैं।

सोफे, पर्दे आदि का रंग सुनहरा हो सकता है। कुछ बहुत ही सुन्दर वस्तुएँ जो सुनहरे रंग की हो तथा क्लायन्ट को दिखाई दें (कुर्सी पर बैठने के बाद, क्लायन्ट के सामने की ओर, उसकी टेबल पर) इस प्रकार रखी जा सकती हैं।

इस रंग का प्रयोग व्यक्ति अपने पहनने के वस्त्र आदि में किनार पर कर सकता है। इस प्रकार का प्रिन्ट भी शुभ है।

काला रंग

काला रंग शोक, अपकीर्ति, दुःख आदि को प्रकट करता है। अतः सामान्य रूप

में वास्तु में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

एक-एक रंग का अपना महत्व है, रंगों के बारे में अधिक जानकारी के लिए निघण्टु ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए।

स्वाद

जैसा कि हम जानते हैं कि हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ होती है। आँख, नाक, कान, जीभ व त्वचा।

आँख से हम आकार व रंग देखते हैं। वास्तुशास्त्र के अनुसार या वास्तुशास्त्र में बताए अनुसार हमने आकार व रंग का अध्ययन तो कर लिया, आइए अब स्वाद (जीभ ज्ञानेन्द्रिय के विषय) का अध्ययन करें तथा यह देखें कि स्वाद का मानव के मस्तिष्क पर क्या प्रभाव पड़ता है। स्वाद किस प्रकार उसकी मनोवृत्ति को प्रभावित करते हैं।

स्वाद के प्रभाव के अध्ययन के लिए आधुनिक फिजियोलॉजी का ज्ञान हो तो बहुत अच्छा है, परन्तु हम यहाँ सामान्य तरीके से, रुप से विषय का प्रतिपादन करेंगे।

वास्तुशास्त्र में बताया गया है कि ब्राह्मण प्रकृति के व्यक्ति के लिए मीठा स्वाद उचित है या उसका भोजन मीठा होना चाहिए। इससे ब्राह्मणोचित गुण विकसित होते हैं। मीठा स्वाद जलीय तत्व को बढ़ाता है, सात्विकता को बढ़ाता है। प्रायोगिक रुप से भी हम देखते है कि पण्डित जी मीठा पंसद करते हैं, मथुरा के पेठे जगत में प्रसिद्ध हैं। इसके अलावा इस प्रकार भी देख सकते हैं कि ब्राह्मण प्रकृति के व्यक्ति सामान्य रुप से अधिक मिर्च या तीखे या कड़वे पदार्थ को पसंद नहीं करते हैं।

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि मीठा पदार्थ सात्विक गुणों को विकसित करने में सहायक होता है।

आगे हम देखेंगे कि मिर्च या तिक्त पदार्थ का भोजन करने से व्यक्ति में क्रियाशीलता बढ़ती है, स्थिरता में कमी आती है। अम्ल युक्त पदार्थ जैसे लवण, अचार, खटाई आदि का प्रयोग करने से वैश्योचित गुण विकसित होते हैं। आइए देखें कि वास्तु परामर्श में इसका उपयोग किस प्रकार किया जाता है।

वास्तु परामर्श में मीठे स्वाद का उपयोग

किसी ऐसे व्यक्ति को वास्तु परामर्श देना हो जिसका कार्य गम्भीर मनन, चिन्तन का हो, जिसके कार्य में धैर्य की अत्यन्त आवश्यकता हो, उसके कार्य में एकाग्रता आवश्यक हो तथा उसकी यह परेशानी हो कि उसका चित्त या मन एकाग्र नहीं हो जाता

है, उसके कार्य करने की शीघ्रता रहती है। तब हम उसके व्यक्ति के भोजन का अध्ययन करेंगे साथ ही यह भी देखेंगे कि वह व्यक्ति को किस प्रकार के पदार्थ पसंद हैं।

उसके भोजन में मिर्च की अधिकता होने पर, लहसुन, प्याज आदि का प्रयोग करने पर चित्त की एकाग्रता प्रभावित होती है। इन पदार्थों के भोजन से क्रियाशीलता बढ़ती है। यदि इस प्रकार के पदार्थ को भोजन वह व्यक्ति करता हो तो उसे सुझाव देंगे कि आप इन पदार्थों का भोजन क्रमशः कम करें या बन्द ही कर दें तथा आपके भोजन मीठा स्वाद लिए हुए हो।

जब वास्तु परामर्श की गहराई में जाएगें तब व्यक्ति की रुचि के भोजन के अनुसार आप उस व्यक्ति की प्रकृति बता पाएँगे। जिस प्रकार का भोजन व्यक्ति करता है उसकी प्रकृति उसी प्रकार की बनने लगती है। यदि वह प्रकृति उसके व्यवसाय से मेच न करती है, सामञ्जय न रखती हो तो व्यक्ति या तो व्यवसाय बदले या अपनी प्रकृति बदले। या तो व्यवसाय के अनुसार अपनी प्रकृति बना ले या अपनी प्रकृति के अनुसार व्यवसाय करें।

व्यक्ति अपनी प्रकृति अपने भोजन से बदल सकता है। (प्रकृति-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र)

क्षत्रिय के लिए भोजन-

जैसा कि हम देख चुके है कि क्षत्रिय को क्रियाशीलता की अधिक आवश्यकता होती है। क्रियाशील रहने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। खाने-पीने के जितने भी भोज्य पदार्थ हैं, वे सामान्य रुप से तीन प्रकृति या मिश्रित प्रकृति की होती है- वात, पित्त व कफ।

पित्त प्रकृति के भोजन में अग्नि तत्व प्रधान रुप से रहता है। कफ प्रकृति के भोजन में प्रधान रूप से जल तत्व रहता है।

जो पदार्थ पित्त प्रकृति कारक हैं, वे अग्नि को बढ़ाते हैं, क्रियाशीलता बढ़ाते है जो कि क्षत्रिय व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

उदाहरण के लिए अग्नि का कार्य करने वाले, धोबी, होटल व्यवसायी, ट्रक-ड्रायवर या ड्रायवर, बॉयलर के सामने कार्य करने वाले श्रमिक या इंजीनियर, सुनार, आदि ये सभी अग्नि का कार्य करते हैं तो इन्हें पित्त कारक भोजन दिया जाना चाहिए।

वास्तु परामर्श व पित्त युक्त भोजन

अब मान लो किसी ऐसे व्यक्ति का वास्तु परामर्श हमें करना है जिसे शारीरिक श्रम अधिक करना रहता है, जिसे शारीरिक व मानसिक रूप से क्रियाशीलता की अधिक आवश्यकता रहती है तथा उसका भोजन कफ युक्त है, मीठा भोजन पसंद करता है तो वह व्यक्ति में हम शारीरिक से बहुत अधिक क्रियाशील नहीं रह पाता है, कार्य करते समय सुस्ती या आलस्य का अनुभव करता है।

एक उदाहरण के माध्यम से इस विषय को देखें-

एक परिस्थिति-एक व्यक्ति है, कोई दुकान चलता है, उदाहरण के लिए जनरल स्टोर्स है, कोई महिला उसके पास दुकान पर आकर लिपिस्टिक माँगती है, दिखाने के लिए कहती है, तो वो या तो नौकर से कहता है कि भई इन्हें लिपिस्टिक दिखाओं या यह कह सकता है कि आपको कौन से रंग की लिपिस्टक चाहिए. किस ब्राण्ड का लिपिस्टिक चाहिए। आदि-आदि।

दूसरी परिस्थिति-उपरोक्त परिस्थिति में ही कोई दूसरा दुकानदार है, महिला उसके लिपिस्टिक माँगती है, दिखाने के लिए कहती है तो वह स्वयं उठकर, अलग-अलग रंग व ब्राण्ड के लिपिस्टिक दिखाता है, परिस्थिति अनुसार सुझाव भी दे देता है कि यह विशेष ब्राण्ड बहुत अच्छा है, देखा परखा है, गारण्डेट है, अन्य रंग व ब्राण्ड दिखाने में भी आलस्य नहीं करता, झुंझलता नहीं है तथा अन्य सामान भी बताता है कि आप नेल-पॉलिश या अन्य सामान भी लें।

उपरोक्त परिस्थिति का जब हम गहराई से अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि दूसरा व्यक्ति अधिक क्रियाशील है, शारीरिक रूप से एक्टिव है, आलस्य से रहित है। इस प्रकार रहने में अन्य बातों के अलावा उसके भोजन का बहुत बड़ा योगदान है। पहली परिस्थिति में इस बात की बहुत अधिक संभावना है कि वह दुकानदार कफ युक्त भोजन करता हो।

इस प्रकार से हमने देखा कि स्वाद के व्यक्ति के नेचर पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

वैश्य व्यक्ति के लिए स्वाद

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ में वैश्य या व्यापारी व्यक्ति के लिए अम्ल युक्त भोजन करने का विधान बताया है।

अम्ल युक्त भोजन का तात्पर्य है उसमें भोजन में खटाई हो, नीम्बू का प्रयोग हो,

वह अचार आदि का प्रयोग करें, अमचूर, कैरी आदि का प्रयोग करें।

वैश्य प्रकृति के व्यक्ति में बहुत हद (सीमा) तक धैर्य, वाकपटुता, क्रियाशीलता, निर्णय में कुशलता की आवश्यकता होती है।

वास्तु में प्रयोग

एक व्यापारी को क्रोधी, आलसी व अकर्मण्य नहीं होना चाहिए। अब यदि उसका भोजन ऐसा हो जो पित्त प्रकृति वाला हो तो यह संभव है कि वह ग्राहक को सामान दिखाते समय झुंझला जाए, उससे कहे कि यही है लेना हो तो लो या यह कहे कि आपको कैसा चाहिए स्पष्ट रूप से बताएँ या इतना सब तो दिखा दिया आदि-आदि। कभी-कभी देखते हैं कि ग्राहक से वाद-विवाद भी हो जाता है। ऐसा होने की आशंका मिर्च युक्त भोजन करने पर अधिक होती है।

ऐसे व्यक्ति को सुझाव दिया जाना चाहिए कि आपका भोजन अम्ल युक्त हो।

शूद्र प्रकृति के लिए भोजन-

यहाँ हम इस विषय को इस प्रकार देखेंगे कि किसी व्यक्ति को कड़वे स्वाद वाला भोजन पसंद हो तो उसकी इस प्रकार की प्रकृति होती है। इसमें सुधार कर जिस प्रकृति को विकसित करना हो (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) वैसा भोजन करने का सुझाव देना चाहिए।

प्रश्न-

व्यक्ति के स्वाद के अनुसार उसकी प्रकृति बताए।

व्यक्ति की पसंद के रंग के अनुसार उसकी प्रकृति बताए।

प्रशासक व्यक्ति के ऑफिस में कौन सा रंग बार्डर (लीपिंग) आदि पर करना चाहिए।

एक वैश्य के दुकान किस रंग का अधिक प्रयोग करना चाहिए।

जो परोपकारी (समाजसेवी) के कार्य हैं उनमें कौन सा रंग शुभ है।

व्यापारी के भोजन में कौन सा स्वाद होना आवश्यक है-

खट्टा, मीठा, कड़वा।

वास्तु सुधार भोजन के माध्यम से किस प्रकार किया जा सकता है।

वास्तुशोधन में रंग का महत्व बताएँ।

सफेद रंग किस वर्ण के लिए शुभ है।

किन-किन कार्यो में लाल रंग का प्रयोग करते हैं तथा आवश्यकता से अधिक लाल रंग होने का क्या अशुभ प्रभाव (दुष्परिणाम) होता है।

अभ्यास-

देखें कि व्यापारी वर्ग सामान्य रुप से कौन सा स्वाद पसंद करता है आदि, आदि।

वास्तु परामर्श के लिए इसे हमने ही अपना एक प्रमुख आधार बनाया है। अर्थात वास्तु परामर्श देते समय हम इस बात को अधिक महत्व देते है कि उस व्यक्ति का फिलहाल व्यवसाय कौन सा है। हम उसके यहाँ किस प्रकार का वास्तु करें कि वह उस व्यवसाय में उत्तरोत्तर वृद्धि व विकास को प्राप्त करें।

इस प्रकार से हमने देखा कि किसी भी व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण कई प्रकार से किया जा सकता है। हमारा सारा परामर्श उसके वर्ण निर्धारण करने के बाद ही शुरु होता है। अतः वर्ण का निर्धारण बड़ी सतर्कता व सावधानी से करना चाहिए।

इससे स्पष्ट होता है कि वर्ण-व्यवस्था जाति पर आधारित न होकर, व्यक्ति के स्वभाव पर आधारित है।

इसके बाद वर्ण के अनुसार भूमि चयन विधि का वर्णन करते हैं।

प्रश्न-

१) व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण किस-किस आधार पर किया जाता है, स्पष्ट करें।

श्री

इकाई-३०

भूमि चयन

३०.० उद्देश्य

इस इकाई में हम निवास हेतु भूमि का चयन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप बता पाएँगें कि-

किस प्रकार की भूमि निवास के लिए उपयुक्त हैं।

किस प्रकार की भूमि पर निवास नहीं करना चाहिए।

३०.१ भूमि चयन का महत्व

पातंजली योगसूत्र में कहा गया है कि **हेयं दुखं अनागतम्** आने वाला (प्रत्येक) दुख त्यागने योग्य है। इस बात से स्पष्ट होता है कि जीवन में जो भी दुख, तकलीफ, बाधा इत्यादि आने वाली है, उन्हें यदि हम पहले से ही जान ले तो उनका त्याग किया जा सकता है।

यह बात वास्तु शास्त्र में बड़ी सटीक बैठती है। जब भी हम किसी प्लाट या भूमि का चयन करते है तो कुछ बातें या सावधानी लेने से हम भविष्य में आने वाली अनेकानेक कठिनाइयों से बच सकते हैं। जैसे प्लाट शहर के भीड़भाड़ वाले क्षेत्र में स्थित है या एकान्त में, क्या प्लाट के आसपास कोई सार्वजनिक स्थल जैसे मन्दिर, होटल, क्लब इत्यादि है- यदि ऐसे प्लाट का हम त्याग कर दे, छोड़ दे, तो भविष्य में आने वाली अनेकानेक परेशानियों से बच सकते हैं।

आसपास की लोकेलिटी कैसी है। प्लाट का आकार क्या है। आसपास से कोई दुर्गन्ध आदि तो नहीं आती है, इत्यादि बातों को ध्यान में रखने से आने वाले दुख का परिहार (निराकरण) पहले से ही हो जाता है। अतः

भूमि चयन करते समय अत्यन्त सावधानी रखना चाहिए।

३०.२ स्थान, अशुभ परिवेश

आइए हम सबसे पहले यह देखें कि किसी निवास के आसपास किस प्रकार का परिवेश या लोकेलिटी नहीं होना चाहिएः-

अर्थात, जब रहने के लिए, निवास के लिए किसी स्थान का, प्लाट का चयन करते हैं तो किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए, आसपास में किस प्रकार का परिवेश या लोकेलिटी नहीं होना चाहिए।

शहर से दूर एवं एकान्त में न हो

शहर से दूर या एकान्त स्थान पर प्लाट होने से, जब उस प्लाट पर व्यक्ति घर बनवाए तो उस पर घर बनाते समय खर्च भी अधिक आएगा, क्योंकि सारा सामान शहर से ले जाना होगा।

ऐसे घर में निवास करने से गृहस्वामी के कार्य पर जाने पर (घर के बाहर जाने पर) घर की महिलाएं, परिवार के अन्य सदस्य सुरक्षा का अभाव महसूस कर सकते हैं।

उस स्थान पर यदि सार्वजनिक वाहन आदि की सुविधा न हो तो परिवार के सदस्यों को अकस्मात आवश्यकता होने पर (अस्पताल, स्कूल आदि) जाने में असुविधा हो सकती है।

किसी बाहर के शहर से यात्रा कर वापस आते समय यदि रेल का समय रात्री का हो तो घर पहुँचने में असुविधा या असुरक्षा का अनुभव हो सकता है।

इसके अतिरिक्त परिवार के सभी सदस्य एक साथ जब किसी कार्यक्रम में घर के बाहर जाते हो, शहर से बाहर जाते हो तो चोरी आदि का भय बना रहता है। आदि-आदि

अर्थात प्लाट या परिवेश स्थान ऐसी जगह बनवाए, जहाँ-

. आसपास लगभग उसी वर्ग के व्यक्ति रहते हो।

. आवागमन के साधन उपलब्ध हो।

. व्यापार आदि (या सर्विस के स्थान) से अधिक दूर न हो।

. रात्रि में सुरक्षित आना-जाना हो सके।

. व्यक्ति के शहर से बाहर जाने पर घर सुरक्षित हो।

अतः प्लाट शहर से बहुत अधिक दूर नहीं होना चाहिए।

३०.४ परिवेश

निम्न स्थान पास में न हों-

होटल

घर के पास होटल इत्यादि होने पर उसमें अलग-अलग प्रकार के लोगों का आना-जाना बना रहता है, अतः घर के पास होटल का होना उचित नहीं है। होटल में अधिकतर प्रोग्राम, पार्टी इत्यादि होती रहती हैं, जिसके कारण भी असुविधा होती है।

सार्वजनिक स्थान

किसी भी सार्वजनिक स्थान पर कई अवसरों पर अत्यधिक भीड़ होती है, जिससे उस स्थान के पास रहने पर कई प्रकार की असुविधाओं का सामना करना पड़ सकता है।

बड़ा मन्दिर

घर के पास बड़ा मन्दिर होने के कारण, विभिन्न अवसरों पर होने वाले कार्यक्रम के कारण आने-जाने में असुविधा, कई बार, कई कार्यक्रम के समय (शोरगुल आदि के कारण) बच्चों को पढ़ाई-लिखाई में असुविधा, वृद्ध या रोगी व्यक्ति के आराम इत्यादि में कठिनाईयाँ आती है।

मैरिज गार्डन

इसी प्रकार से घर के आस-पास मैरिज गार्डन होने से आवागमन में असुविधा, रात्रि में अत्यधिक शोरगुल का होना, बच्चों की पढ़ाई-लिखाई ठीक से न होना, परिवार के सदस्यों की नींद पूरी न होना, जिससे अगले दिन कार्य का ठीक से न हो पाना, इस प्रकार की कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।

मुख्य मार्ग

मुख्य मार्ग पर घर होने से विभिन्न अवसर पर होने वाले कार्यक्रम (जुलूस, यात्रा, प्रदर्शन, किसी वी.आई.पी. का आगमन, धार्मिक कार्यक्रम, रैली आदि) के कारण असुविधा होती है। इसके अतिरिक्त वाहनों का अत्यधिक आवागमन होता है, वाहन द्वारा घर से आते-जाते समय, रोड़ क्रास करते समय दुर्घटना की आशंका बनी रहती है।

चौराहा

विश्वकर्म प्रकाश ग्रन्थ में लिखा है कि चौराहे पर घर स्थित होने पर कीर्ति का नाश होता है। चौराहे पर घर स्थित होने पर यदि वहाँ टेक्सी स्टेण्ड है, पान की दुकान है, चाय आदि की दुकान है या कोई भी दुकान है तो उस स्थान पर लोगों का आना-जाना लगा रहता है, घर की गतिविधि के बारे में चर्चा कर सकते हैं, जिससे परिवार की कीर्ति का नाश होने की आशंका बनी रहती है। इस प्रकार से हम एक-एक बात का विश्लेषण करते जाएगें तो निम्न सारी बातें स्पष्ट हो जाएंगी।

निम्न स्थानों के पास भी घर बनवाना शुभ नहीं है-

शराबखाना

यहाँ अच्छे लोगों का आना-जाना नहीं होता है। शराब पीने के बाद नशे में व्यक्ति अशिष्ट व्यवहार कर सकता है, या करता है इत्यादि कारणों से शराबखानें के पास घर बनवाना उचित नहीं है। इसके अलावा वहाँ लोगों का जमघट लगा रहता है। आसपास दुर्गन्ध रहती है अतः शराबखानें के पास घर नहीं बनवाना चाहिए।

सिनेमा हॉल

यह एक सार्वजनिक स्थान है। इसके आसपास घर होने से अनेक कठिनाइयाँ जैसे शो छूटने के बाद, शो प्रारंभ होते समय, नई पिक्चर लगते समय, होने वाली भीड़भाड़ आदि के कारण इसके आसपास घर नहीं होना चाहिए।

एकदम सटी (लगी) हुई पान की दुकान आदि

यहाँ भी कई प्रकार के लोगों का आना-जाना लगा रहता है। उनके वाहन आदि पार्क रहते हैं, खड़े रहते हैं, जिससे पास में रहने वालों को असुविधा होती है, इसके अलावा कई बार पान की दुकान पर रेडियो, टेप या गाने इत्यादि चलते रहते है जिससे भी शोरगुल होता है। अतः पान, चाय आदि की दुकान के एकदम पास में घर नहीं होना चाहिए।

स्टेण्ड

घर के पास में (एकदम लगा हुआ) ऑटोरिक्शा स्टेण्ड, बस स्टेण्ड, टेम्पो स्टेण्ड आदि नहीं होना चाहिए। इससे घर में प्रदूषण, आसपास भीड़ व अन्य कठिनाईयाँ होती है।

वर्कशॉप

सामान्यतः वर्कशॉप के आसपास ध्वनि व वायु प्रदूषण रहता है। अतः वर्कशॉप के एकदम पास भी घर नहीं होना चाहिए।

क्लब

क्लब में लोगों का आना-जाना लगा रहता है, यह एक सार्वजनिक स्थान है। पार्टी इत्यादि के समय शोरगुल, भीड़भाड़ होती रहती है। अतः क्लब से लगा हुआ घर नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के वातावरण से घर के युवा सदस्य अधिक प्रभावित हो सकते है, जिससे वे अपने निर्धारित लक्ष्य से भटक सकते हैं। (भ्रमित हो सकते हैं।)

नाले के पास या किनारे

नाले के पास या किनारे घर होने से हमेशा दुर्गन्ध रहती है तथा बिमारियाँ होने की आशंका भी अधिक रहती है।

पोल्ट्री फार्म

पोल्ट्री फार्म (मुर्गी पालन केन्द्र) के आसपास सामान्य रुप से बदबू (दुर्गन्ध) आदि होने के कारण शुभ नहीं माना गया है।

श्मशान

यह नकारात्मक व अन्य प्रकार की ऊर्जा का क्षेत्र होने के कारण इसके आसपास रहवास होना शुभ नहीं है।

धूर्त

घर के आसपास (जालसाज आदि) का निवास होने से, इस प्रकार के लोग, व्यक्तियों को प्रलोभन में ले लेते हैं। अतः इनसे नुकसान होने की आशंका बनी रहती है अतः ऐसे लोगों के पास घर बनवाना उचित नहीं है। धूर्त के पास घर होने से पुत्र के अनिष्ट की आशंका रहती है।

चैत्य (बड़ा आराधना स्थल)

घर के आसपास में आराधना स्थल, प्रवचन स्थल जहाँ साधु आकर रहते हों उसके एकदम पास में घर बनवाना शुभ नहीं कहा गया है। क्योंकि इन स्थानों पर भीड़ इत्यादि रहती है, जिससे घर में आने-जाने में असुविधा होती है। इसके अतिरिक्त भी अन्य कारण हैं, इसलिए इनके एकदम पास, सटा हुआ, निवास या घर नहीं बनवाना चाहिए। इसके पास घर होने से गृहस्वामी को भय रहता है।

अन्त्यज- निम्न प्रवृति का प्रकोप

निवास स्थान बनवाते समय या घर लेते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि घर के आसपास में समान वर्ग के लोग रहते हो, आसपास निम्न प्रवृत्ति के लोग न रहते हों। आसपास ऐसे लोगों के रहने से हथियार भय अर्थात लड़ाई-झगड़ा होने की आशंका रहती है।

अन्य अशुभ भूमि

ऐसी भूमि जिस पर आना-जाना कठिन हो तथा ऐसी भूमि (प्लाट) जो कि पापियों के वंशज (पुत्र-पौत्र आदि) की हो, उसे त्याग (छोड़) देना चाहिए, अर्थात नहीं खरीदना चाहिए।

ऐसी भूमि जिस पर नकारात्मक कार्य करने वाले व्यक्ति रहते हो उनके स्पन्दन से, उनकी गतिविधियों के कारण उस स्थान का प्रभाव खराब हो जाता है। इसके अतिरिक्त उस भूमि को कैसे लिया है, भविष्य में कोई परेशानी न हो इस हेतु यह कहा गया है कि ऐसी भूमि को छोड़ देना चाहिए।

३०.५ भूमि में निम्न दोष न हों

पत्थर

जिस भूमि में अत्यधिक पत्थर हों उस भूमि पर निवास नहीं करना चाहिए, ऐसी भूमि दरिद्रता देती है। निवास के लिए उपजाऊ भूमि को शुभ कहा गया है, बताया गया है।

गड्ढ़ा

प्लाट आसपास की भूमि से बहुत नीचे अर्थात गड्ढे में नहीं होना चाहिए,।

छिद्र

प्लाट पोला या छेद से युक्त नहीं होना चाहिए। इससे एक तो मकान बनवाते समय आधार मजबूत नहीं हो पाएगा, दूसरा उस पोली जमीन में जीव-जन्तु जैसे सर्प या चूहे इत्यादि हो सकते हैं जिससे जीवन व धन की हानि हो सकती है।

अन्य अशुभ भूमि

भंयकर (भयानक) भूमि

ऐसी भूमि या जमीन जिस पर आने-जाने में डर लगता हो, भय उत्पन्न करती है।

दीमक

जिस भूमि में दीमक हो ऐसी भूमि पर भी निवास के लिए घर नहीं बनवाना चाहिए।

हड्डी, कोयला, राख, आदि शल्य भी भूमि में नहीं होना चाहिए।

३०.६ अन्य पक्ष

जिस भूमि पर हम घर बनवा रहे हो, या खरीद रहे हो, ऐसी भूमि या भवन से सम्बन्धित समस्त कागजात एकदम स्पष्ट हो, कोई भी स्थानीय या अन्य संस्थान का बकाया (ड्यू) इत्यादि न हो।

नगर निगम, कलेक्टेरेट, विघुत विभाग, जल विभाग या कोई भी टेक्स या लोन इत्यादि भूमि पर न हो यदि हो तो उसकी जानकारी आपको होना चाहिए। इस संबंध में कानूनी सलाहकार (वकील) इत्यादि की सहायता ली जा सकती है।

बोध प्रश्न-

निवास करने हेतु भूखण्ड किन-किन स्थानों पर नहीं खरीदना चाहिए।

निवास हेतु भूखण्ड शहर से बहुत दूर होना शुभ है या अशुभ।

निवास स्थान के पास लगा हुआ बस स्टेण्ड शुभ है या अशुभ।

पान की दुकान के एकदम पास (लगा हुआ) घर बनवाना चाहिए या नहीं।

मंदिर के एकदम पास (सटा हुआ) घर रहने के लिए शुभ है या अशुभ।

पोल्ट्री फॉर्म, श्मशान,

३०.७ सारांश

इस प्रकार से हमने यहाँ आसपास की लोकेलिटी या परिवेश के प्रभाव को देखा। इस प्रकार के परिवेश वाले स्थान का त्याग कर हम भविष्य में होने वाली अनेकानेक कठिनाइयों से बच सकते हैं।

३०.८ उपयोगी पुस्तकें

विश्वकर्मा प्रकाश

मानसार

मयमत

३०.९ सर्वेक्षण

निम्न स्थान पर जाकर वहाँ रहने वालों लोगों से उस स्थान पर होने वाली असुविधाओं का अध्ययन करें तथा एक रिपोर्ट तैयार करें-

शहर से बहुत दूर बनी हुई कॉलोनी

मंदिर के पास (मंदिर में कार्य करने वालों के अलावा अन्य लोगों के घर)

श्मशान के पास

नाले के पास (मध्यम तथा उससे ऊपर के स्तर के व्यक्ति)

मैरिज गार्डन

प्रश्न करते समय इकाई में दी गई असुविधाओं के बारे में पूछें।

इकाई-३१

आकार

३१.१ उद्देश्य

इस इकाई में हम प्लाट (भूखण्ड), कमरे आदि के आकार का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-यह बता पाएँगें कि-

कौन सा आकार शुभ या अशुभ हैं।

किस आकार में रहने पर क्या परिणाम उत्पन्न होता है।

किस कार्य के लिए कौन सा आकार शुभ है।

किस व्यक्ति के लिए कौन सा आकार शुभ है।

अशुभ आकार होने पर उसका सुधार किस प्रकार किया जाए।

३१.२ आकार का महत्व

जैसा की हम जानते हैं कि मनुष्य की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ होती हैं। इन ज्ञानेन्द्रियों से वह बाहरी ज्ञान (विषय) को ग्रहण करता है। इनमें आँख प्रमुख होती है, हमारे ज्ञान का अधिकांश भाग हम आँख से ग्रहण करते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार अपने ज्ञान का ८५ प्रतिशत भाग हम आँखों से ग्रहण करते हैं। आँख से हम दो चीज देखते हैं-आकार व रंग। इन दोनों का हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

नगर की रचना, कॉलोनी की रचना, प्लाट व उस पर बने हुए कमरे का आकार हमें अत्यधिक प्रभावित करते हैं।

विषय की गहराई में जाए तो कमरे का फर्नीचर, पलंग, खिड़की. दरवाजे आदि का आकार, फोटो फ्रेम आदि सभी के आकार उस घर में निवास करने वाले व्यक्तियों को प्रभावित करते हैं।

आइए सबसे पहले यह देखें कि किस आकार का प्लाट निवास के लिए शुभ कहा गया है-

३१.३ आकार

जब यह कहा कि चौकोर आकार की भूमि पुत्र, पौत्र, धन व धान्य देती है तो इसका यही अर्थ है कि चौकोर आकार पुत्र, पौत्र, धन, धान्य देता है।

फिर वह आकार चाहे प्लाट का हो या कमरे का, खिड़की का हो या टेबल का। यह आकार का प्रभाव है, जो भूमि के आकार के माध्यम से व्यक्त किया है। इस आकार का प्रयोग फोटोफ्रेम के रूप में करने पर भी वही गुण उत्पन्न होगा।

इसी प्रकार ग्रन्थ में लिखा है कि त्रिशूल के समान आकार की भूमि होने पर वह वीरता प्रदान करती है। (शूरवीरों की उत्पत्ति करती है।)

इसका अर्थ यह है कि त्रिशूल आकार व्यक्ति को एग्रेसिव बनाता है, वीरता का भाव उत्पन्न करता है- अब आकार चाहे भूमि का हो या कमरे का या त्रिशूल का चित्र ही बनाकर दीवार पर लगा दिया जाए तो भी यही भाव उत्पन्न होगा।

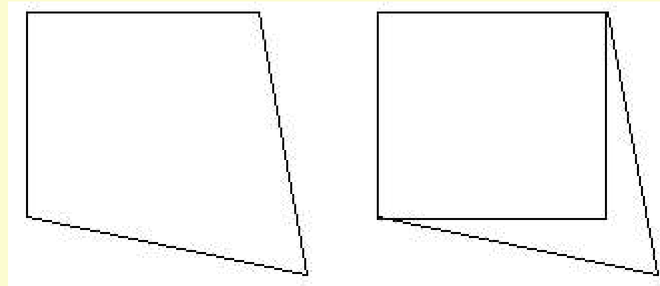
तो भूमि के आकार के माध्यम से आकार के गुण बताए हैं।

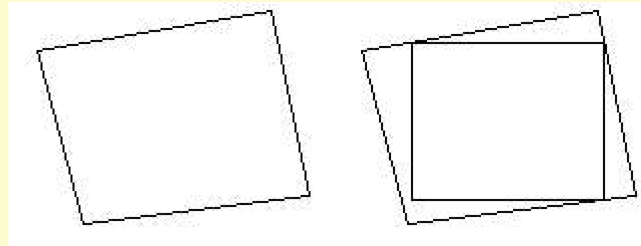
आइए भूमि के आकार के माध्यम से आकार के गुणों का अध्ययन करें।

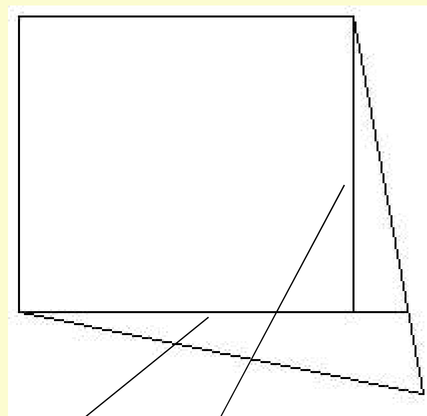
आकार

शुभ आकार	परिणाम
वृषभाकार	पशु की वृद्धि
वृत्ताकार	धनदायी
भद्रपीठ	धनदायी
त्रिशूल	वीरों की उत्पत्ति, धन व सुख देने वाली
लिङ्ग	साधुओं के लिए शुभ
महल के झण्डे के समान	पदोन्नति
घड़ा	धन को बढ़ाने वाली
अशुभ आकार	परिणाम
त्रिकोणाकार	पुत्र हानि
गाड़ी के समान आकार	सुखहानि
सूपड़े के समान	धनहानि
पंखे के समान	धर्म की हानि
मृदंग के समान	वंशहानि

सर्प के समान	भय
मेढक के समान	डर देने वाली
गधे के समान	गरीबी
अजगर के समान	मृत्यु देने वाली







ताम्बे का तार, समकोन करने के लिए

चिमटे के समान	पुरुषार्थ से हीन करने वाली
कौवे के समान	दुख, शोक, व डर
उल्लू के समान	दुख, शोक, व डर
साँप के समान	पुत्र-पौत्र का नाश
बाँस के समान	वंश नाश
सुअर, ऊँट, बकरे के समान	कमजोर, मलिन, मूर्ख व ब्रह्म का नाश करने वाले पुत्रों की दाता।
गिरगिट व मुर्दे के समान	पुत्र नाश, धनहानि व पीड़ा
कुत्ते व सियार के समान	भयानक पुत्र

यहाँ जिन आकार का वर्णन किया गया है उस आकार का चित्र आदि भी लगाने पर वही प्रभाव उत्पन्न होता है।

३१.४ प्रेक्टीकल

अब हम यह देखेंगे कि अशुभ आकार का प्लाट होने पर किस प्रकार उसका सुधार कर उपयोग में लाया जा सकता है।

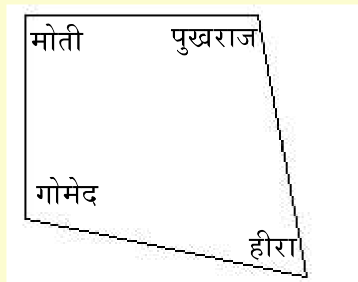
इसके अतिरिक्त कई बार इस प्रकार से भी समाधान करते हैं-

प्रश्न- वर्गाकार भूमि शुभ है या अशुभ

प्रश्न- त्रिकाणाकार भूमि शुभ है या अशुभ

प्रश्न- लिंग के आकार की भूमि किसके लिए शुभ है।

प्रश्न-आयताकार भूमि शुभ है या अशुभ।



३१.५ अशुभ आकार का प्लाट (कमरा) होने पर दोष कैसे दूर करें।

उपाय-

उदाहरण में जो हमने ताम्बे के तार से माध्यम से सुधार देखा उस स्थान पर ताम्बे का तार भूमि के नीचे ६ इंच गहराई में डालने के लिए कहा है, उसके स्थान पर ईंट की जुड़ाई या बीम डाल सकते हैं।

सुधार ३

जो कोण समकोण न हो उस दिशा में निम्नानुसार रत्न लगाए-

ईशान- पुखराज

आग्नेय हीरा

नैर्ऋत्य गोमेद

वायव्य मोती

पाठ्य सामग्री-

रत्न लगाने की विधि का अध्ययन के लिए गर्भविन्यास नामक अध्याय देखें।

दिशा के दोष के लिए दिशा व प्रभाव अध्याय देखें।

समरांगण सूत्रधार- चयविधि अध्याय

इकाई ३२

भूमि में स्थित दोष

उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत हम शल्य ज्ञान की विधि तथा शल्य दोष निवारण अर्थात घर में यदि शल्य हो तो उसके दोष का किस प्रकार निवारण (दूर करना) किया जाता है, इसका अध्ययन करेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगे कि-

भूमि में कौन-कौन से पदार्थ का होना अशुभ होता है।

ये शल्य कितनी गहराई तक दोष कारक होते हैं।

शल्य ज्ञात करने की विधि क्या है।

घर् में शल्य होने पर किस प्रकार के दोष उत्पन्न होते हैं।

भूमि में शल्य होने पर क्या उपचार है।

घर् में शल्य होने पर उस दोष को किस प्रकार दूर किया जाता है।

शल्य

शल्य एक प्रकार का दोष है, भूमि के अंदर ऐसे पदार्थ (वस्तु, चीज़ें) जो नकारात्मक ऊर्जा का उत्सर्जन करती है अर्थात नकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न करती हैं तथा उसका विकिरण (रेडियेशन) चारों ओर फैलाती हैं शल्य कहलाती है। इनमें मुख्य रूप से हड्डी, ढाँचा, कोयला, राख, बाल, भूसा इत्यादि को शल्य कहा गया है।

शल्य ज्ञान का महत्व

शल्य ज्ञान वास्तु का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी क्षेत्र है। इसके अंतर्गत भूमि में यदि कोई दोष है तो उसका कैसे पता लगाया जाए तथा उसे कैसे दूर किया जाए इस विधि का वर्णन है।

वास्तु में कॉस्मिक ऊर्जा को वास्तुपुरुष के रूप में कल्पित किया गया है। उस वास्तु पुरुष के शरीर के कुछ प्रमुख संवेदनशील स्थान, नाज़ुक स्थान, जिन्हें मर्म कहा गया है, पर शल्य होना अत्यंत दोष कारक माना गया है। इन स्थानों पर (मर्म स्थान पर) शल्य होने पर उस मकान में रहने वाले व्यक्तियों को विशेषकर घर के मालिक को पीड़ा होती है। अतः घर बनवाना शुरू करने के पहले ही शल्य को उस भूमि से निकाल देना चाहिए।

इसकी उपयोगिता को एक उदाहरण के द्वारा समझने का प्रयास करेंगे। मान लो किसी गिलास में कोई अपेय (जो पीने के लिए उपयुक्त नहीं हो) पदार्थ भरा हो, (उदाहरण के लिए गंदा पानी, कचरा, मिट्टी या अन्य कुछ) तो हम उसमें पानी भरकर नहीं पीते है बल्कि उसको ख़ाली करके माँज-धोकर साफ़ करके फिर पानी भरकर पीते है। ठीक उसी प्रकार वास्तु (भूमि) को नेगेटिव रेडिएसन वाले पदार्थ जिन्हें शल्य कहते है, हो तो, पहले उसका पता लगाते है, फिर उसे निकालते है, उसके बाद उस भूमि को शुद्ध करते हैं उसके पश्चात ही निर्माण की प्रक्रिया आगे बढ़ाते है।

वास्तुशास्त्र में नकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थों के उपयोग का निषेध किया है। (मना किया है।) सामान्य रूप से हम देखते हैं कि कई मन्दिर में प्रवेश करने से पहले चमड़े का पट्टा (बेल्ट), पर्स आदि ले जाने पर प्रतिबन्ध रहता है, मना किया है। उसे मरे हुए जानवर (पशु) के शरीर का अंग मानकर उपयोग करना निषेध है। उसी प्रकार कहा गया है कि वास्तु में या घर में या प्लाट के नीचे, भूमि के अन्दर हड्डी, चमड़ा आदि नकारात्मक ऊर्जा वाले पदार्थ नहीं होना चाहिए।

यह भी प्रश्न उठ सकता है कि वे पदार्थ यदि भूमि के नीचे है, पांच-सात फीट की गहराई पर है, तो वे पदार्थ उस भवन में निवास करने वाले व्यक्ति को किस प्रकार प्रभावित करेंगे। उत्तर- सामान्य रूप से हम जानते है कि मानव निर्मित उपग्रह पृथ्वी के ऊपर काफी अधिक ऊँचाई (कई किलोमीटर) पर स्थित रहते हुए भी पृथ्वी के अन्दर स्थित लोहा, कोयला, पेट्रोल आदि के बारे में बड़ी सटीकता से भंडारण का पता लगाते हैं तथा उसकी मात्रा भी बता देते हैं। कैसे? उन पदार्थों में से ऐसी किरणें (रेडिएशन) निकलती हैं जो उपग्रह में स्थित सेन्सर ग्रहण कर लेते हैं। इस बात से इतना तो स्पष्ट है कि पदार्थों में से किरणें निकलती हैं तथा वे किरणें कई किलोमीटर का सफर तय कर उपग्रह तक पहुँचती हैं। तो वे ही किरणें उस प्लाट, घर या मकान पर रहने वाले व्यक्तियों को क्यों नहीं प्रभावित करेंगी? निश्चित रूप से करेंगी। अतः प्लाट या भूमि के नीचे से शल्य को ज्ञात कर निकालना चाहिए।

अब यह प्रश्न उठता है कि कितनी गहराई तक का शल्य नुकसानदायक है? वास्तुशास्त्र में बताया गया है कि सामान्य शल्य होने पर लगभग ७-८ फीट तक की गहराई का शल्य हानिकारक है।

सामान्य रूप से शल्य होने का तात्पर्य है कि वहाँ २-४ हड्डी आदि हो। परन्तु यदि पहले से ही वहाँ श्मशान या भूमि के नीचे पशुओं के शरीर या मानव शरीर हो तो उस भूमि पर निवास नहीं करना चाहिए।

प्रायोगिक रूप से देखा गया है कि कई बार वर्षो पहले जो भूमि इस प्रकार के उपयोग में लाई जाती थी। समय के साथ वह भूमि को मिट्टी आदि से भर दिया, उस पर कॉलोनी या फेक्टरी स्थापित हो गई तो वह भूमि निवास के लिए शुभ नहीं पाई गई। वहाँ रहने वालों ने काफी कठिनाई का अनुभव किया।

बने हुए मकान में भूमि के अन्दर शल्य होने के लक्षण-

किसी बने हुए मकान में यदि भूमि के अन्दर शल्य स्थित हों तो सामान्य रूप से इस प्रकार के लक्षण पाए जाते हैं-

पहले व्यक्ति को बुरे या अशुभ स्वप्न आते हैं।

उसके पश्चात धन का हानि होती है।

उसके बाद निवास करने वाले व्यक्ति सामान्य रूप से अधिक बीमारी रहते हैं, रोगी रहते हैं।

शास्त्र कहता है कि उनकी मृत्यु की आशंका बनी रहती है (विश्वकर्म प्रकाश अध्याय १२)

शल्य ज्ञात करने की प्रायोगिक विधि-प्लाट में शल्य पता लगाने की विधि-

शल्य ज्ञात करने की अनेक विधियाँ हैं। इन सभी विधियों में एकाग्रता तथा आचरण की पवित्रता अत्यन्त आवश्यक है।

(१) प्लाट पर रंगत करते समय (सूत्र बाँधते समय, सीमांकन करते समय) कोई जानवर (कुत्ता, बिल्ली, बकरी आदि) सूत्र को उलाँघ जाए तो उस भूमि में शल्य दोष होता है।

(२) वास्तुपूजन (वास्तुशास्त्र में गृहारम्भ से लेकर गृहप्रवेश तक ३ से ५ अवसर पर वास्तुपूजन का विधान बताया है) करते समय जिस देवता को आहुति देते समय

(वास्तुपूरुष के शरीर ४५ देवता होते हैं, इसके लिए पद विन्यास अध्याय देखें) अग्नि में विकार उत्पन्न हो जाए या अपशकुन घटित हो (अग्नि में विकार का तात्पर्य है-आग बुझ जाए, अग्नि की ज्वाला में असामान्य परिवर्तन हो, अपशकुन से तात्पर्य है-रोना, छींक आदि कोई भी अपशकुन) तो उस देवता के पद (के स्थान) शल्य होता है। उदाहरण यदि आपवत्स देवता को आहुति देते समय अपशकुन हो तो आपवत्स देवता का स्थान (मध्य स्थान तथा ईशान कोण के बीच के स्थान) पर शल्य जानता चाहिए।

(३) तीसरी तथा सबसे सशक्त विधि का अब वर्णन करते हैं। इस विधि का अध्ययन करने के लिए चित्त की निर्मलता आवश्यक है।

जिस किसी व्यक्ति के मकान में शल्य है, यह ज्ञात करना हो उस व्यक्ति के आने पर उससे उसके प्लाट या घर के बारे में चर्चा करें- प्लाट कहाँ स्थित है, कैसे पहुँचते हैं, वहाँ आसपास क्या-क्या है आदि-आदि। यदि घर हो तो घर कहाँ है, कैसे पहुंचते हैं, घर के आसपास क्या-क्या है, घर में कौन -कौन से कमरें हैं आदि-आदि। इस प्रकार जब देखें कि वह व्यक्ति पूरी तरह से प्लाट या घर के बारे में बताने में तल्लीन हो चुका है, तब उससे कोई नाम लेने को कहें (किसी व्यक्ति का नाम, आदि) उस नाम जो प्रथम अक्षर आए उससे निम्न प्रकार से शल्य जाने-

अ	पूर्व दिशा
क	आग्नेय कोण
च	दक्षिण
ट	नैर्ऋत्य
त	पश्चिम
प	वायव्य
य	उत्तर
श	ईशान
ह	मध्य

इन अक्षरों के अतिरिक्त कोई अक्षर हो तो उस स्थान पर शल्य नहीं है, यह जानना चाहिए।

दोष दूर करने का उपाय-

दोष दूर करने के उपाय के रूप में सीधा-सीधा तरीका तो यह है कि शल्य को निकाल दिया जाए तथा उस स्थान पर गोबर, गोमूत्र आदि छिड़ककर पवित्र कर दें।

इसके अतिरिक्त हम यहाँ एक अन्य विधि का वर्णन कर रहे हैं-

इस विधि में गर्भ विन्यास अध्याय में बताई गई विधि का प्रयोग करते हैं तथा उस अध्याय में बताए गए कलश को जो की सभी रत्न, पारा, सर्वोषधि, खनिज व जड़ी-बुटियों के साथ शुद्ध जल से भरा हुआ है, भूमि के अन्दर विधि विधान से पूजा कर स्थापित करते हैं। यह कलश मध्य स्थान तथा चारों कोण में स्थापित किया जाता है।

भूमि परीक्षण के उपरान्त भूमि को सकारात्मक ऊर्जा से भरा जाता है।

भूमि को सकारात्मक ऊर्जा से चार्ज करने की विधि-

उपाय

• भूमि पर ब्राह्मण के चरण डलवाए।

• गाय, बैल व बछड़ा लाकर पूरी भूमि पर घुमवाए। यदि संभव हो तो वहाँ सात दिन गाय, बैल व बछड़े को रखें।

• यदि संभव हो तो पूरी भूमि को स्वस्थ बैल की जोड़ी के द्वारा हल से जुतवा दें।

या

• गोबर (लगभग ५० किलो) व गोमूत्र (२० लीटर) लें।

• वच, कूट, चन्दन, जटामाँसी, सौंठ, नागरमोथा, हल्दी लें।

• इन सबको लगभग ४०० लीटर पानी में घोल दें। (पानी में सोना भी डालें)।

• इस पानी के घोल को जितनी भूमि पर घर बनवाना हैं छिड़क दें।

• उपरोक्त प्रक्रिया से भूमि सकारात्मक ऊर्जा से भर जाती है।

• प्रश्न भूमि को सकारात्मक ऊर्जा से भरने की विधि का वर्णन कीजिए।

प्रश्न-

(१) शल्य किसे कहते हैं। उसे भूमि में से निकालना क्यों आवश्यक है।

(२) शल्य से होने वाले दोषों (परिणामों) का वर्णन कीजिए।.....

(३) शल्य ज्ञान की विधि का वर्णन कीजिए।

(४) शल्य निकालने के पश्चात भूमि को शुद्ध करने की विधि का वर्णन करे।

शल्य मर्म स्थान पर होने से अत्यन्त अशुभ होता है। (मर्म स्थान आगे समझाएगें)

शल्य के ऊपर शयन करने से अत्यधिक दुष्प्रभाव होता है।

घर में आने के बाद धन की हानि होती हो तो एक कारण बताएँ।

घर में रहने वाले अधिकांश व्यक्ति रोगी हो तो कारण सुझाएँ।

किसी घर में शल्य दोष होने पर कौन से कौन शकुन या लक्षण होते हैं।

यदि प्रश्न का प्रथम अक्षर त हो तो किस दिशा शल्य होगा।

यदि अर्यमा को आहुति देते समय अग्नि बुझ जाए तो किस दिशा में शल्य होगा।(पदविन्यास कहाँ है, बताए)

शल्य का पता लग जाए उसके बाद क्या करते हैं।

घर में शल्य हो तो दोष का निवारण कैसे करते हैं।

इकाई - ३३

भूमि परीक्षा (मिट्टी की परीक्षण)

३३.१ उद्देश्य

इस इकाई में हम भूमि परीक्षण विधि का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप बता पाएँगें कि

जिस भूमि का हमने चयन गृह बनाने के लिए कर लिया है वह निर्माण के लिए उपयोगी है या नहीं।

भूमि पर निर्माण करते समय किन-किन बातों की सावधानी रखना चाहिए।

३३.२ विषय प्रवेश

आधुनिक समय में जब भूमि का चयन कर लेते हैं तो देखते हैं कि जिस भूमि पर निर्माण कर रहे है वह भूमि भवन का भार वहन कर पाएँगी या नहीं, उस पूरे भवन का वजन सहन कर पाएँगी या नहीं, कहीं भवन डिफार्म तो नहीं हो जाएगा, धंस तो नहीं जाएगा, आदि-आदि। इसके लिए मृदा (या मिट्टी) का परीक्षण किया जाता है।

वास्तुशास्त्र में भी मिट्टी की परीक्षा की विधि का वर्णन किया गया है। यह विधि आधुनिक विधि से श्रेष्ठ इसलिए कही गई है कि वास्तुशास्त्र के अनुसार मिट्टी का परीक्षण प्लाट पर ही किया जाता है। मिट्टी के आसपास का वातावरण वही रहता है जिसमें भवन बनेगा, जबकि आधुनिक सिविल इंजीनियरींग में अधिकांश परीक्षण लेबोरेटरी में किए जाते हैं जहाँ का वातावरण, कार्यस्थल के वातावरण से अलग हो सकता है, जिससे परीक्षण के परीणाम (रिजल्ट) में फर्क आ सकता है। वास्तुशास्त्र में बताई गई परीक्षण की विधियाँ सरल हैं तथा कोई शुल्क या खर्च भी नहीं लगता है।

विधि (१)

आइए सबसे पहले घनत्व या मिट्टी की भार वहन क्षमता का परीक्षण करें।

भूमि में एक हाथ लंबा, एक हाथ चौड़ा तथा एक हाथ गहरा गड्ढा खोदे। फिर उस गड्ढे को उसी मिट्टी से भर दें।

(१) यदि गड्ढा भरने के बाद मिट्टी बच जाए तो भूमि बहुत अच्छी है, ऐसा मानना चाहिए। इससे पता चलता है कि भूमि ठोस है तथा उसकी भार वहन क्षमता अच्छी है तथा भूमि घर बनाने के लिए ठीक है।

(२) यदि गड्ढा भर जाए तथा मिट्टी न बचे तो वह भूमि मध्यम है, यह जानना चाहिए।

(३) यदि उस निकली हुई मिट्टी से गड्ढा पूरा न भरे अर्थात मिट्टी कम हो जाए तो वह भूमि अधम (सबसे नीची, घर बनाने के लायक नहीं) है, यह समझना चाहिए। क्योंकि ऐसा तभी संभव है जब भूमि पोली हो, उसमें अंदर छिद्र हो, ऐसी भूमि की भार वहन क्षमता भी बहुत कम होती है। अतः ऐसी भूमि निर्माण के लिए ठीक नहीं होती है, एवं उस पर घर नहीं बनवाना चाहिए ऐसी भूमि को त्याग देना चाहिए।

अर्थात भूमि का आधार इस प्रकार बनाया जाए कि वह ठोस हो।

(२) आर्द्रता परीक्षण

एक हाथ लंबा, एक हाथ चौड़ा तथा एक हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसे पानी से भर दे। उसके बाद एक सौ कदम तेज़ी से किसी दिशा में जाकर वापस आए तथा पानी का स्तर देखें यदि पानी कम हो जाए तो भूमि शुभ नहीं होती है।

इस प्रयोग में मौसम का अपना प्रभाव निश्चित रूप से होता है। बारिश के मौसम में तथा गर्मी के मौसम में विशेष रूप से परिणामों में अंतर आता है। लेकिन इस परीक्षण का उद्देश्य उस भूमि की नमी का पता लगाना है। यदि भूमि में नमी बिल्कुल न हो तो वह भूमि कालम, दीवार की नमी तेज़ी से सोख लेगी, जिससे उस भवन में क्रेक या दरारें आने की आशंका अधिक होगी।

सुधार का उपाय- (सावधानी)-

गर्मी के दिनों में जब मिट्टी में नमी बहुत कम होती है तब तरी (पानी का छिड़काव) अधिक बार करना चाहिए।

(३) मिट्टी की उर्वरता का परीक्षण

भूमि में धान्य (गेहूँ, चावल, सरसों, तिल, जौ, मूँग को बो दें। यदि ३ दिन में अंकुरण हो जाए तो शुभ, ५ दिन में अंकुरण हो तो मध्यम, सात दिन में अंकुरण होने

पर अशुभ होने से त्याग देना चाहिए।

इसका तात्पर्य यह है कि जो भूमि उपजाऊ होगी उस पर निवास करने वाले को प्रकृति की पोषणकारी शक्ति पूरी तरह प्राप्त होती है।

सुधार के उपाय-

जिस भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो वहाँ अधिक मात्रा में गोबर, गोमूत्र आदि का छिड़काव करना चाहिए।

(४) वायु संचरण परीक्षण

जिस भूमि का हम परीक्षण कर रहे हैं, उस भूमि की धूल उठाकर ऊपर उछालकर देखें कि वह कहाँ गिरती है। यदि पूरी की पूरी वहीं नीचे गिर जाती है तो वह भूमि अधम है, यदि थोड़ी दूर तक जाती है, तो वह भूमि मध्यम तथा ऊपर की ओर जाती है तो वह भूमि उत्तम है।

यहाँ हमें उस प्लॉट पर हवा किस प्रकार व कितनी चलती है इसका पता चलता है। अर्थात वायु संचरण का पता करना है। जिस प्लॉट पर हवा बिल्कुल नहीं चलती है उस पर निवास करना शुभ नहीं होता है, इसलिए परीक्षण के समय जब धूल पूरी की पूरी नीचे गिर जाती है, तो उस भूमि को अधम कहा है तथा जिस भूमि की धूल ऊपर की ओर जाती है, उस भूमि को उत्तम कहा है।

इस परीक्षण के माध्यम से यह देखते हैं कि जिस भूमि पर घर बना रहे हैं उस पर वायु का आवागमन होना चाहिए। जब भवन के आसपास (बहुत नजदीक) ऊँचे-ऊँचे भवन हों तो जिस भूमि पर अपन गृह बनाएँगें, उस पर उचित मात्रा में शुद्ध हवा तथा प्राकृतिक रोशनी नहीं आ पाएँगी। अतः भूखण्ड पर हवा का आवागमन होना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रश्न-

भूमि परीक्षण की कितनी विधियाँ है?

प्रश्न मिट्टी के घनत्व का परीक्षण किस प्रकार करते हैं?

प्रश्न मिट्टी की आर्द्रता ज्ञात करने की विधि का वर्णन करें?

प्रश्न मिट्टी की उपजाऊ शक्ति का किस प्रकार पता लगाते हैं?

प्रश्न घर के आसपास ऊँचे-ऊँचे भवन होने पर क्या दुष्परिणाम होता है, लिखिए?

इकाई-३४

आयादि

आयादि गणित के सूत्र या फार्मूले के आधार पर किसी प्लाट या कमरे आदि का आकार (लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई) का मान ज्ञात करना है।

आवश्यकता व महत्व

वास्तुशास्त्र में बताया गया है कि कोई भी निर्माण चाहे वह प्लाट पर भवन का निर्माण हो या कमरे का या कोई फर्नीचर, या दरवाजे या खिड़की का ही मान हो, कोई मूर्ति का मान हो या टेबल, कुर्सी आदि का मान हो, सभी मान उसके उपयोग कर्ता (उपयोग करने वाले व्यक्ति) या गृहस्वामी (मालिक) के शरीर के अनुपात में हो।

जैसे किसी व्यक्ति के लिए, कोई वस्त्र बनाते हैं, जैसे पैंट, शर्ट, इत्यादि। तो पेन्ट, शर्ट व्यक्ति के नाप के अनुसार होना चाहिए। चूँकि प्रत्येक व्यक्ति का नाप या आकार अलग-अलग होता है। अतः उसके शर्ट, पेन्ट आदि का नाप भी अलग होता है।

ठीक उसी प्रकार जब हम किसी व्यक्ति के लिए घर बनवाते हैं तो उसके उपयोग में आने वाली वस्तुएँ भी उस व्यक्ति के नाप के अनुसार होना चाहिए। जैसे एक व्यक्ति जेसलमेर, बाड़मेर आदि क्षेत्र में रहने वाला है, उसकी ऊँचाई या उसके शरीर की लंबाई साढ़े छह फीट है, दूसरा व्यक्ति लद्दाख क्षेत्र का है, पहाड़ी क्षेत्र का है, जिसकी ऊँचाई या जिसके शरीर की लंबाई सामान्यतः पाँच या साढ़े पाँच फीट है।

इस प्रकार दोनों व्यक्तियों के घर बनवाते समय हमें यह ध्यान रखना होगा कि उसके शरीर का क्या मान है। जेसलमेर वाले व्यक्ति के लिए पलंग क़रीब सात फीट का बनेगा जबकि लद्दाख क्षेत्र में रहने वाले व्यक्ति का पलंग साढ़े पाँच या छह फीट का बनेगा।

इसी प्रकार उनके बैठने की जो कुर्सी होगी उसकी ऊँचाई भी अलग-अलग होगी।

इसलिए वास्तु में व्यक्ति के शरीर के नाप के अनुपात में गृह का निर्माण किया जाता है। इससे घर तथा व्यक्ति के बीच में सामंजस्य स्थापित होता है।

व्यक्ति के शरीर के जिस अंग के अनुपात में निर्माण किया जाता है वह है हाथ या हस्त। छोटे माप के लिए जिस इकाई का प्रयोग करते हैं वह है अंगुल। एक हस्त में चौबीस अंगुल होते हैं।

एक अंगुल का मान- जो सबसे बड़ी अंगुली है, जिसे मध्यमा अंगुली कहते है, उसके बीच के भाग की लम्बाई का मान को अंगुल कहा है। यह लगभग १ इंच के बराबर होता है।

हस्त का मान कन्धे से तीसरी अंगुली तक होता है यह २४ अंगुल या २४ इंच या दो फीट के बराबर होता है। अलग-अलग व्यक्ति के शरीर का मान अलग-अलग होता है, यह हमने सामान्य मान दिया है।

(कई पुस्तकों में या डिक्शनरी में आपको हस्त का मान १८ इंच के बराबर मिलेगा तथा अंगुल का मान पौन इंच (मध्यमा अंगुली के मध्यम पर्व की ऊँचाई के बराबर मिलेगा, उसे पढ़कर भ्रमित न हो वह मान भी लिया जाता है।)

आयादि सूत्र-

वैसे तो वास्तुशास्त्र में अनेक आयादि सूत्र का वर्णन मिलता है। ये सूत्र भी ग्रंथ के अनुसार अलग-अलग है। किसी-किसी ग्रंथ में (जैसे मानसार, मयमत आदि) छह सूत्र हैं तो इन्हें षड्वर्ग कहा है। किसी ग्रंथ में (विश्वकर्म प्रकाश आदि) में नौ सूत्र हैं।

किसी ग्रंथ में क्षेत्रफल से आयादि ज्ञात करते हैं तो किसी में परिधि से, किसी में लंबाई व चौड़ाई व ऊँचाई ज्ञात करने के अलग-अलग सूत्र है।

छह सूत्र के नाम इस प्रकार हैं, आय, व्यय, योनि, तिथि, वार, नक्षत्र। इनमें पहला आय है, अतः ये सूत्र आयादि कहलाते हैं।

हम यहाँ एकदम सरलतम रुप में एक ही सूत्र दे रहे हैं।

सूत्र

लम्बाई को चौड़ाई से गुणा करें, जो गुणनफल आए उसे आठ से भाग दें। शेषफल को आय कहते है। शेषफल विषम (१, ३, ५ या ७) आना शुभ कहा है।

शेषफल सम (२, ४, ६ या ८(०) आए) तो लम्बाई या चौड़ाई इस प्रकार लें कि शेषफल विषम आए।

उदाहरण माना कि प्लाट की लम्बाई २१ हस्त है तथा प्लाट की चौड़ाई ३१ हस्त है।

लम्बाई x चौड़ाई = २१ x ३१ = ६५१ वर्ग हस्त

६५१/८ तो शेषफल आया-३ जो कि विषम है अतः शुभ है।

माना कि किसी प्लाट की लम्बाई २० हस्त तथा चौड़ाई ३० हस्त है

तो गणना इस प्रकार होगी-

लम्बाई x चौड़ाई = २० x ३० = ६०० वर्ग हस्त

६००/८ करने पर शेषफल आया शून्य (८) जो कि अशुभ है।

जब आप अभ्यास करेंगे तो एक बात स्पष्ट रूप से सामने आएगी कि जब दो विषम संख्या का गुणा कर ८ से भाग देते हैं तो शेषफल विषम आता है।

इसलिए लम्बाई व चौड़ाई विषम लेकर आठ से भाग देने पर शेषफल हमेशा विषम ही आएगा।

नियम-

लम्बाई व चौड़ाई विषम संख्या में लें।

वर्ण के अनुसार आय विचार-

जैसा कि हम देख चुके हैं कि लम्बाई को चौड़ाई से गुणाकर आठ से भाग देने पर शेषफल को आय कहते हैं।

वास्तुशास्त्र में आय के नाम इस प्रकार बताएँ हैं-

शेषफल	आय
१	ध्वज
२	धूम
३	सिंह
४	श्वान
५	वृष
६	खर
७	गज
८	काक

जैसा कि हम देख चुके हैं कि विषम आय शुभ तथा सम आय अशुभ होती है।

अतः शेषफल १ (ध्वज), ३(सिंह), ५(वृष) तथा ७(गज) शुभ हैं।

शेषफल २(धूम), ४(श्वान), ६(खर) तथा ८(काक) अशुभ है।

अब यह देखेंगे कि किस व्यक्ति के लिए कौन सी आय शुभ हैं।

वर्ण	शुभ आय
ब्राह्मण	१
क्षत्रिय	३
वैश्य	५

इसका तात्पर्य यह है कि प्रशासनिक कार्य करने वाले व्यक्ति के

-ऑफिस की लम्बाई व चौड़ाई में सिंह आय हो।

-उसके कमरे का सारे फर्नीचर अलमारी, टेबल, कुर्सी आदि में सिंह आय का उपयोग हो।

कमरे में स्थित सभी सामान में सिंह आय हो।

उदाहरण-

आइए देखें कि सिंह आय किस प्रकार दी जाए-

माना कि कमरे की लम्बाई

जल स्थान, शयन कक्ष आदि ७

प्लाट की चौड़ाई का मान १३३ अंगुल है (११ फीट १ इंच) तथा लम्बाई १६१ इंच (१५ फीट १ इंच) अर्थात लम्बाई १६१ अंगुल तथा चौड़ाई १३३ अंगुल है।

तो

लम्बाई x चौड़ाई = १६१ x १३३ = २१४१३ वर्ग अंगुल

इसे ८ से भाग देने पर शेषफल ५ आया। यह वृष आए है। तब हमें तो सिंह आय चाहिए, तो क्या करेंगे।

माना कि कमरे की लम्बाई या चौड़ाई बढ़ाई नहीं जा सकती है। तो कम तो की जा सकती है (कमरे में दीवार पर प्लायबोर्ड आदि लगाकर, पेनेलिंग करके व अन्य प्रकार से) तो कमरे की लम्बाई दोनों ओर से १-१ अंगुल कम की अर्थात कुल लम्बाई १६१ के स्थान पर १५९ अंगुल ली।

लम्बाई x चौड़ाई = १५९ x १३३ = २११४७ वर्ग अंगुल आया।

इसको ८ से भाग देने पर शेषफल ३ आया यह सिंह आय है। जो की प्रशासनिक कार्य के लिए शुभ है।

इसी प्रकार सभी सामान (फर्नीचर आदि) में ३ (सिंह) आय देने से पूरे कमरे का आयादि वास्तु शुभ होता है। यह प्रशासनिक कार्य में सहायक होता है।

कई वास्तुविद इन्हीं गणनाओं के आधार पर वास्तुशोधन (वास्तुसुधार) करते हैं।

इसी प्रकार व्यापारी की दुकान, व्यापार के स्थान शोरुम आदि में वृष आय देना चाहिए। पूरे फर्नीचर, कमरे, टेबल, कुर्सी, दरवाजे, खिड़की, रोशनदान, फ्लोरिंग आदि में वृष आय देना शुभ है। यही वास्तु के अनुसार व्यापारी के लिए शुभ आयादि है।

कार्य के अनुसार आय

कार्य	आय	शेषफल
सभी कार्य	ध्वज	१
जल स्थान	गज	७
शयन कक्ष	गज	७
पूजा स्थान	ध्वज	१
व्यापार	वृष	५
प्रशासन	सिंह	३
भोजनकक्ष	वृष	५
अध्ययन	ध्वज	१

अलग-अलग आय अलग अलग व्यक्ति के लिए शुभ।

अलग-अलग आय अलग अलग कार्य (उपयोग के लिए कमरा) के लिए शुभ।

अलग-अलग आय अलग अलग दिशा के लिए शुभ।

उदाहरण- ४० फीट चौड़ा तथा ६० फीट लम्बे प्लाट का शुभ आकार बताए। जब गृहस्वामी के हस्त का मान .. फीट है। उसके अंगुल का मान .. फीट है।

पढ़ने के कमरे में कौन सी आय शुभ है।

शयन कक्ष में कौन सी आय देना चाहिए।

शयन कक्ष के लिए लम्बाई में चौड़ाई का गुणाकर आठ से भाग देने पर शेषफल क्या आना शुभ है।

इकाई ३५

मुहूर्त

उद्देश्य

इस इकाई में हम गृह निर्माण कब प्रारम्भ करना चाहिए, इसका अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह बता पाएँगें कि-

किस माह में किस दिशा के प्लाट का शुभारम्भ करना चाहिए।

किस माह में किस दिशा से खुदाई प्रारम्भ करना चाहिए।

खुदाई प्रारम्भ करने के लिए शुभ मुहूर्त कौन-कौन से हैं।

गृहारम्भ मुहूर्त का महत्व

जैसा कि हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है या परिक्रमा करती है। सूर्य की परिक्रमा करने में एक वर्ष का समय लगता है। इसके कारण ऋतुएँ होती है, पृथ्वी के किसी विशेष स्थान पर अलग-अलग ऋतुएँ होती है। कभी ठण्ड होती है उसके बाद बसंत फिर गर्मी आती ऋतुएँ होती है।

इसी बात को हम इस प्रकार भी देख सकते हैं कि सूर्य बारह राशियों में घूमता है। इन राशियों में घूमने में उसे एक वर्ष का समय लगता है। समझने के लिए ऐसा समझे कि प्रतिवर्ष १४ जनवरी को मकर संक्रान्ति आती है। मकर संक्रान्ति को सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है। प्रतिवर्ष मकर राशि में आता है। इस प्रकार १२ राशियों में घूमने में उसे १२ महीने लगते हैं। सूर्य जब अलग-अलग राशियों में रहता है तो पृथ्वी पर अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करता है। जैसे मकर राशि के सूर्य में पृथ्वी पर बहुत ठण्ड होती है। वृषभ राशि के सूर्य में बहुत गर्मी होती है। इसका तात्पर्य यही है कि सूर्य के अलग-अलग राशि में होने पर भूखण्ड पर अलग-अलग प्रभाव होता है।

हमारे इस पाठ में इसी को आधार बनाकर हम देखेंगे कि पूर्व मुखी प्लाट पर कब निर्माण करना शुभ होता है, तो उत्तर मुखी प्लाट पर कब?

आइए सबसे पहले अंग्रेजी महीने व सूर्य राशि का सम्बन्ध देखें-

अंग्रेज़ी महीने	सौरमास (सूर्य जिस राशि में हो)
१४ मार्च-१३ अप्रैल	मीन
१४ अप्रैल-१४ मई	मेष
१५ मई-१४ जून	वृषभ
१५ जून-१५ जुलाई	मिथुन
१६ जुलाई-१६ अगस्त	कर्क
१७ अगस्त-१६ सितंबर	सिंह
१७ सितंबर-१६ अक्टोबर	कन्या
१७ अक्टोबर-१५ नवंबर	तुला
१६ नवंबर-१५ दिसंबर	वृश्चिक
१६ दिसंबर-१३ जनवरी	धनु
१४ जनवरी-१२ फ़रवरी	मकर
१३ फ़रवरी-१३ मार्च	कुंभ

वास्तुशास्त्र में गृहनिर्माण प्रारम्भ करने के लिए कई प्रकार के नियम बताए हैं। वे मास, नक्षत्र, दिन, वार व तिथि आदि पर आधारित हैं। यहाँ हम एकदम सरल रुप में मास के अनुसार गृहारम्भ देख रहे हैं।

प्लाट की मुख	सूर्य की राशि	अंग्रेजी तारीख
पूर्व	सिंह, कन्या, तुला	१७ अगस्त- १५ नवम्बर
दक्षिण	वृश्चिक, धनु, मकर	१६ नवम्बर-१२ फरवरी
पश्चिम	कुम्भ, मीन, मेष	१३ फरवरी-१४ मई
उत्तर	वृष, मिथुन, कर्क	१५ मई-१६ अगस्त

इसका तात्पर्य यह है कि पूर्व दिशा के प्लाट पर घर बनवाना हो तो १७ अगस्त से १५ नवम्बर के बीच के समय में प्रारम्भ करना शुभ होता है। इसी प्रकार अन्य दिशा के लिए जाने।

आइए इसके साथ यह भी देखें कि कब गृहारम्भ करना शुभ नहीं होता है।

बनवाए	सूर्य की राशि	अंग्रेजी तारीख	न बनवाए
पूर्व	सिंह, कन्या, तुला	१७ अगस्त- १५ नवम्बर	उत्तर
दक्षिण	वृश्चिक, धनु, मकर	१६ नवम्बर-१२ फरवरी	पूर्व
पश्चिम	कुम्भ, मीन, मेष	१३ फरवरी-१४ मई	दक्षिण
उत्तर	वृष, मिथुन, कर्क	१५ मई-१६ अगस्त	पश्चिम

उपरोक्त सारणी देखने पर यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि किन-किन माह में किस दिशा का प्लाट नहीं बनवाना चाहिए।

जैसे १७ अगस्त से १५ नवम्बर के मध्य पूर्व दिशा के मुख वाला प्लाट पर निर्माण प्रारम्भ करना शुभ है जबकि इस समय उत्तर मुख वाले प्लाट पर निर्माण प्रारम्भ करना शुभ नहीं है, अशुभ है। दक्षिण व पश्चिम दिशा के प्लाट का प्रारम्भ करना मध्यम है। इसी प्रकार अन्य महीनों को जानें।

प्रश्न- पश्चिम मुख वाले गृह का आरम्भ कब करना चाहिए।

प्रश्न- उत्तर दिशा वाले प्लाट पर कब निर्माण कार्य प्रारम्भ नहीं करना चाहिए।

महत्वपूर्ण बात-

यह मुहूर्त घर के लिए हैं, मन्दिर, जलाशय तथा यज्ञवेदी के नियम अलग है।

नक्षत्रानुसार मुहूर्त-

नक्षत्र का ज्ञान पंचांग से होता है। यह नक्षत्र पेपर (न्यूज पेपर) में आते हैं। जिन दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, वह उस दिन का नक्षत्र होता है। नक्षत्र २७ होते हैं। गुण के आधार पर इन नक्षत्रों की अलग-अलग संज्ञा होती है। जैसे अधोमुखी, ऊपर मुख वाले, उग्र आदि। नियम- इन नक्षत्रों के गुण इस प्रकार कहें हैं कि वे अधोमुखी है, उसमें खुदाई, कुआँ खुदवाना, जलाशय बनवाना आदि कार्य करना चाहिए।

नक्षत्र के अनुसार सामान्य नियम यह है कि अधोमुख नक्षत्र में खुदाई प्रारम्भ करना चाहिए।

गृहारम्भ (खुदाई) हेतु शुभ नक्षत्र-

अधोमुख नक्षत्र-मूल, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, विशाखा, भरणी, कृत्तिका।

इसके अलावा अलग-अलग दिशा के लिए अलग-अलग नक्षत्र भी बताएँ हैं, जिन्हें हम यहाँ नहीं लिख रहे हैं (विश्वकर्म प्रकाश अध्याय १ देख सकते हैं।)

सामान्य रूप से गृहस्वामी के नक्षत्र से गृहारंभ का नक्षत्र ३, ५, ७, १२, १४, १६ तथा २१, २३ एवं २५ वाँ नहीं होना चाहिए।

गृहस्वामी की राशि से गृहारंभ समय की राशि ४ थी, ८वीं या १२ वीं नहीं होना चाहिए।

प्रश्न- किन-किन नक्षत्रों में खुदाई प्रारम्भ करना शुभ है?

अशुभ तिथि

मुहूर्त निर्धारण में तिथि का अपना महत्व है, इसलिए चतुर्थी, नवमी व चौदस (ये रिक्ता तिथि कहलाती है) तथा अमावस्या अशुभ है। इन तिथि को गृहारम्भ नहीं करना चाहिए।

पक्ष-शुक्ल पक्ष शुभ है।

वार-सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार शुभ हैं।

पंचांग के पाँच अंग होते हैं-**तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण।**

पूरी तरह मुहूर्त ज्ञात करने के लिए शुभ योग हो तो बहुत अच्छा है। योग का जो नाम है वही गुण है, जैसे शुक्ल, शुभ, सौभाग्य आदि अन्य योग शुभ हैं तो शूल, गण्ड, व्यतीपात आदि योग अशुभ हैं।

इस प्रकार से शुभ समय ज्ञात कर गृहारम्भ करना चाहिए।

गृहारम्भ समय का निर्धारण तो हो गया, अब खुदाई किस दिशा से प्रारम्भ करना चाहिए इसे देखें।

अंग्रेजी तारीख	खुदाई की दिशा
१७ अगस्त- १५ नवम्बर	आग्नेय
१६ नवम्बर-१२ फरवरी	ईशान
१३ फरवरी-१४ मई	वायव्य
१५ मई-१६ अगस्त	नैर्ऋत्य

किस वार को किस दिशा में खुदाई नहीं करना चाहिए-

महीने के अनुसार किस दिशा का प्लाट शुरु करना चाहिए।

सूर्य राशि के अनुसार

खुदाई की दिशा	**किस दिन खुदाई न करें**
वार	दिशा में ख़ुदाई न करें
रविवार	नैऋत्य
सोमवार	उत्तर
मंगलवार	आग्नेय
बुधवार	पश्चिम
गुरुवार	ईशान
शुक्रवार	दक्षिण
शनिवार	वायव्य

पूर्व मुखी प्लाट कब बनवाए। श्रेष्ठ समय, मध्यम समय, अशुभ समय (मास के अनुसार, अंग्रेजी तारीख)

दक्षिण मुखी प्लाट कब बनवाए। श्रेष्ठ समय, मध्यम समय, अशुभ समय (मास के अनुसार, अंग्रेजी तारीख)

पश्चिम मुखी प्लाट कब बनवाए। श्रेष्ठ समय, मध्यम समय, अशुभ समय (मास के अनुसार, अंग्रेजी तारीख)

उत्तर मुखी प्लाट कब बनवाए। श्रेष्ठ समय, मध्यम समय, अशुभ समय (मास के अनुसार, अंग्रेजी तारीख)

प्रश्न-

उत्तर मुखी प्लाट का आरम्भ कब करें।

पूर्व मुखी प्लाट पर घर बनवाना कब शुरू करें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न-

(१) दक्षिण मुखी प्लाट निम्न महीने में बनवाए-

(अ) चैत्र (आ) आषाढ़ (इ) कार्तिक (ई) पौष

कार्तिक माह में किस दिशा के प्लाट पर घर बनवाना श्रेष्ठ हैं।

वैशाख महीने में किस दिशा के प्लाट का शुभारंभ करना चाहिए तथा खुदाई किस दिशा से शुरु करना चाहिए।

सावधानी-प्लाट की दिशा से ही निर्धारण होता है, बने हुए हिस्से का मुख या मुख्य द्वार अन्य दिशा में हो सकता है, नक्शे का उदाहरण देकर समझाए।

इसी आधार पर नक्शा देकर प्रश्न पूछें। कि कौन सा मुख वाला प्लाट है।

इकाई - ३६

भूमि पूजन

जैसा कि हम सब जानते है भूमि पूजन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, पूजन विधि है। इससे प्लाट पर निर्माण कार्य का प्रारम्भ होता है।

शुभ मुहूर्त में (जिसे हम पिछली इकाई में देख चुके हैं), स्नान आदि करके, स्वच्छ वस्त्र पहन कर, पवित्र मन से भूमि पर परिवार, ब्राह्मण (पंडित जी, कर्मकाण्ड में निपुण) व्यक्ति के साथ जाए।

(भूमि को दो-एक दिन पहले ही साफ कर ले। वहाँ पर स्थित कचरा आदि हटाकर, गोमूत्र, गोबर का छिड़काव करें।)

वहाँ भूमि पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके पूजन करें।

कलश की स्थापना कर गणेश जी, नवग्रह आदि का पूजन करें।

स्वस्ति वाचन करें।

दिक्पाल (इंद्र, अग्नि, यम, नैऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईश), कुल देवी व देव तथा नाग की पूजा करें।

उन्हें उसके बाद हवन करके, जल चढ़ाकर जप करें। (जलाय मंत्र का जप करें।) रुद्राष्टाध्यायी का विधि विधान से जप करें।

उसके बाद वास्तुपुरुष का ओम नमो भगवते वास्तुपुरुषाय कपिलाय च पृथ्वीधराय देवाय प्रधान पुरुषाय च इस मंत्र से पूजन कर नमस्कार करें।

पूजन करते समय इस प्रकार प्रार्थना करें-

उसके बाद उनसे इस प्रकार प्रार्थना करें कि- हे वास्तुपुरुष, सभी घर, महल, जलाशय, बग़ीचे के कार्य तथा घर के बनाते समय शुरू में सभी सिद्धि (सफलता) को देने वाले, जिनकी सेवा रात दिन सिद्ध, देव व मनुष्य करते हैं, आप इस प्रजापति (ब्रह्मा) के क्षेत्र में आकर स्थित हो जाओ, इस पूजा को ग्रहण (स्वीकार) करें तथा वरदान दें।

हे वास्तुपुरुष, भूमि रूपी शय्या (बिस्तर) पर सोने को तैयार, हे प्रभो (नायक, शक्तिशाली) आपको नमस्कार है। मेरे इस घर को आप सदा धन-धान्य आदि से समृद्ध करें।

जो वास्तु के स्वामी है, संसार के प्राण हैं, पहले पूर्व दिशा में आश्रित हैं, जो साँपों के नायक हैं उनका विष्णोरराट मंत्र से पूजन करें।

इसके उपरान्त पूर्व दिशा की ओर मुख करके जिस स्थान पर पहला डोबरा (गड्ढा) खोदना है वहाँ गैंती से खुदाई (सांकेतिक रुप से) करें। शास्त्र में बताया गया है कि यह कुदाली सोनी की बनी हो। यहाँ हम देखते हैं कि आज के समय में स्वर्ण से कुदाल से खुदाई संभव न हो तो सोने का बर्क लाकर कुदाई पर घी आदि लगाकर उस बर्क को लगाकर खुदाई कर सकते हैं। दूसरा तरीका यह भी हो सकता है कि कुदाल पर सोने का पॉलिस करवा कर खुदाई करें। जो संभव हो वैसी विधि अपनाए। यहाँ संकेत यह है कि पवित्र धातु से खुदाई प्रारम्भ करना चाहिए। यह गैंती विषम अंगुल की हो तो शुभ है।

वहां उपस्थित पांच व्यक्ति क्रम से खुदाई करें।

पूरी विधि के उपरान्त सभी व्यक्ति को प्रसाद आदि का वितरण करें (बाँट दें)। उपस्थित मान्य व्यक्ति आदि को (पंडित जी, कारीगर, ठेकेदार, इंजीनियर, मजदूर आदि) को दक्षिणा, दान आदि देकर सन्तुष्ट करें।

इकाई ३७

द्वार

आयादि

द्वार को शुभ आयादि में बनवाना चाहिए।

द्वार की चौखट का आकार विषम अंगुल में हो तो शुभ होता है।

द्वार की ऊँचाई मंजिल की ऊँचाई की दो तिहाई होती है। जैसे दस फीट मंजिल की ऊँचाई हो तो द्वार की ऊँचाई लगभग पौने सात फीट होगी।

मान

द्वार का मान मंजिल की ऊँचाई का दो-तिहाई होता है। गृह की ऊँचाई ११ फीट हो तो द्वार का मान सवा सात फीट होगा।

इसके अतिरिक्त वास्तुशास्त्र में अन्य नियम भी बताए हैं कि उसकी ऊँचाई कम से कम ८१ अंगुल (इंच) कही गई है।

ऊँचाई से आधी चौड़ाई कही गई है। ऊँचाई अधिक होने पर चौड़ाई एक तिहाई तक हो सकती है।

इसके साथ ही उसके चौखट की चौड़ाई, मोटाई आदि मान भी मिलता है।

चौखट की ऊँचाई जितने हस्त हो उतने अंगुल चौखट की चौड़ाई होती है। जैसे चौखट की ऊँचाई ७ फीट (साढ़े तीन हस्त) हो तो साढ़े तीन अंगुल (इंच) चौखट की चौड़ाई होगी तथा चौड़ाई से डेढ़ गुना (सवा पाँच इंच) मोटाई होती है।

द्वार वेध

हम देख चुके हैं कि मानव शरीर में नाक के समान द्वार का भी अत्यन्त महत्व है। यहाँ से प्रवेश करने वाली ऊर्जा पूरे घर को प्रभावित करती है। मुख्य द्वार के सामने कोई भी अवरोध (रुकावट) या गन्दगी आदि नहीं होना चाहिए।

अब हम इस बात का अध्ययन करेंगे कि मुख्य द्वार के सामने किस प्रकार की रुकावट हो तो क्या दुष्परिणाम होता है।

इसमे बहुत कुछ शोध का विषय भी हो सकता है। यहाँ हम शास्त्र में वर्णित दोष व परिणाम दे रहे हैं-

अवरोध	परिणाम
वृक्ष	द्वेष, खराब आचरण
किसी देवता का मंदिर	विनाश
खम्बा	स्त्री में दुःशीलता
जूठा	स्त्री में बांझपन
निम्न जाति का व्यक्ति	शस्त्र से भय
कील	आग लगने का डर
कीचड़	दुख
सामने से सीधी सड़क	परिवार का क्षय (क्रमशः कम होना)
कुआँ	मृगी (मिरगी) रोग
पानी का नाला	फिजूल खर्च

द्वार दोष-

मान से कम या अधिक ऊँचा होना, दरवाजे में आवाज आना, आदि भी दोष हैं।

इसके अतिरिक्त द्वार इस प्रकार भी नहीं होना चाहिए कि बाहर से गृह का ब्रह्मस्थान (आँगन) दिखता है।

मुख्य द्वार तिरछा, टेड़ा, टूटा, फटा, बाहर या भीतर की ओर झुका नहीं होना चाहिए।

इन वेध (रुकावट) के होने पर इन इन्हें हटाना ही चाहिए, अन्यथा ये दोषकारक हैं।

कोई वृक्ष, स्तम्भ (खम्बा) आदि का वेध हो, उसकी दूरी घर से दोगुना दूरी पर हो तो वेध का दोष नहीं लगता है।

इसके अलावा बीच में दीवार या सड़क होने पर भी वेध का दोष नहीं लगता है।

इसका निष्कर्ष अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए।

द्वार की लकड़ी

द्वार शुभ लकड़ी के बनवाना चाहिए, इनसे ऊर्जा घर में प्रवेश करती है। यह बने हुए हिस्से के प्रवेश द्वार के लिए तथा अन्य द्वार के लिए है।

लकड़ी	परिणाम
श्री पर्णी	धन प्राप्ति
असन	रोग नाश
तिन्दुकी	धन प्राप्ति
शीशम	वृद्धि
सागवान	सुख
पद्मक	दीर्घायु
चन्दन	शत्रु-क्षय, यश-वृद्धि

उपयोगी पुस्तकें-

विश्वकर्म प्रकाश

राजवल्लभ

सावधानीः-

कमरे के अन्दर से लगने वाली चिटखनी इस प्रकार की हो कि बाहर से दरवाजा खटखटाने पर, अपने आप न खुले।

कई बार ऐसा देखा गया है कि दरवाजे व खिड़की की चौखट में एक लकड़ी कॉमन होती है, यह दोषपूर्ण माना गया है, ऐसा नहीं करना चाहिए।

दरवाजे के अन्दर की चिटखनी, रोशनदान व खिड़की में से नहीं खुलना चाहिए।

दरवाजे का रंग, दरवाजे की पॉलिश यथा संभव नेचलर या सुनहरे रंग की होना चाहिए। जब बहुत अधिक खिड़की, दरवाजे या लकड़ी का काम हो तो चेरी पॉलिश का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

यथासंभव दरवाजे पर काला, गहरा नीला या गहरा भूरा रंग नहीं करवाना चाहिए। अन्य रंग या पॉलिश का प्रयोग कर सकते हैं।

मुख्य द्वार अन्य दरवाजे से बड़ा होना चाहिए तथा इसे विभिन्न चित्र, डिजाईन से सजाना चाहिए।

बाहर की ओर से सभी दरवाजे मजबूत होना चाहिए।

यदि तल मंजिल हो (ग्राउण्ड फ्लोर) हो तो दरवाजे की संख्या कम होना चाहिए।

अन्दर के दरवाजे फ्लश डोर के हो सकते हैं।

बाथरुम का दरवाजा अन्दर से वॉटर प्रूफ हो, इसके लिए निचले भाग में एल्यूमीनियम या प्लास्टिक शीट या अन्य पदार्थ का प्रयोग कर सकते हैं।

बाथरुम के दरवाजा का ऊपरी भाग इस प्रकार का खुलने वाला बनवाए कि यदि कोई बच्चा अन्दर से बन्द कर ले तो उसे खोला जा सके। अस्तु

द्वार

इस इकाई में द्वार का महत्व, उसका स्थान तथा उसके सामने होने वाले वेध का अध्ययन करेंगे।

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

किसी भी प्लाट, घर, दुकान, ऑफिस, फेक्टरी के लिए द्वार का शुभ स्थान बता पाएँगे।

द्वार की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई का मान बता पाएँगे।

द्वार दोष होने के क्या दुष्परिणाम होते हैं बता पाएँगे।

द्वार वेध किसे कहते है तथा उसके क्या दुष्परिणाम होते हैं बता पाएँगे।

वास्तु शास्त्र में मुख्य द्वार के स्थान को अत्यधिक महत्व दिया गया है। मुख्य द्वार प्लाट का हो सकता है या बने हुए हिस्से का, दोनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्लाट का प्रवेश द्वार वह स्थान है जिसकी ओपनिंग से वायु या ऊर्जा घर में प्रवेश करती है।

विषय प्रवेश

वास्तुशास्त्र मे मुख्य द्वार के स्थान को अत्यधिक महत्व दिया गया है। मुख्य द्वार प्लाट का हो या बने हुए हिस्से (भवन) का दोनों ही बहुत महत्वपूर्ण हैं। मनुष्य के शरीर में जो महत्व नाक का है, वास्तु में वही महत्व द्वार का है। नाक का स्थान इस प्रकार बना है कि वह फेफड़े आदि अवयव से जुड़ी हुई होकर प्राणवायु का संचार करती है, उसी प्रकार द्वार शुभ स्थान हो तो पूरे भवन में प्राणवायु का संचार करते हैं। जिस प्रकार नासिका के सामने कोई अवरोध नहीं होना चाहिए, उसी प्रकार द्वार के सामने कोई रुकावट नहीं होना चाहिए। जिस प्रकार नाक में शुद्ध, स्वच्छ वायु ही प्रवेश करना चाहिए, उसी प्रकार द्वार से शुद्ध ऊर्जा ही प्रवेश करना चाहिए, द्वार के सामने कचरा, कीचड़, गन्दगी, जूठा नहीं होना चाहिए।

आइए पहले सरल रुप में प्रवेश द्वार को देखें।

शास्त्र में चार प्रकार के प्रवेश बताएँ हैं-

(१) जिस दिशा में प्लाट का मुख्र हो उसी दिशा में बने हुए हिस्से (भवन) का मुख्र हो तो उसे उत्संग कहते हैं, यह प्रवेश शुभ कहा है। यह पुत्र, पौत्र, धन-धान्य की वृद्धि करता है।

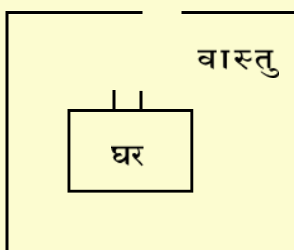
(२) जिस दिशा में प्लाट का मुख हो उसमें से प्रवेश करने के बाद दाहिनी ओर मुड़ने पर घर का प्रवेश हो तो उसे पूर्णबाहू प्रवेश कहते है यह भी शुभ होता है। इसमें निवास करने वाले व्यक्ति को पुत्र, पौत्र, धन-धान्य का सुख मिलता है।

(३) जब प्लाट में प्रवेश करने के उपरान्त बाईं ओर से घर में प्रवेश हो तो उसे हीन बाहु प्रवेश कहते हैं। इसमें निवास करने वाला व्यक्ति कम धन, कम मित्र, रोग से पीड़ित तथा स्त्रीजित होता है। यह मध्यम प्रकार का प्रवेश है।

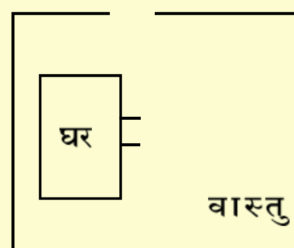
(४) प्लाट में प्रवेश करने के उपरान्त घर में पीछे से प्रवेश हो तो उसे प्रत्यक्षाय प्रवेश कहते हैं। यह अत्यन्त अशुभ होता है। इसमें निवास करने वाले व्यक्ति का सब कुछ क्षय को प्राप्त होता है।

द्वार निर्धारण

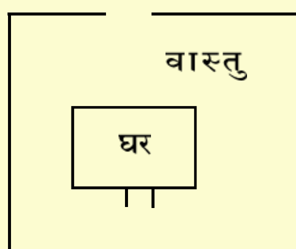
परम शायिक पद विन्यास इकाई में हम देख चुके हैं कि बाहरी पैशाच वीथि में ३२ देवता होते हैं। प्लाट पर जब हम द्वार का निर्धारण करेंगे तो इन्हीं ३२ देवता में से किसी एक के स्थान पर द्वार बनाना होता है। आइए देखें कि किस पद में (देवता के स्थान में) द्वार बनाने पर क्या परिणाम होता है।



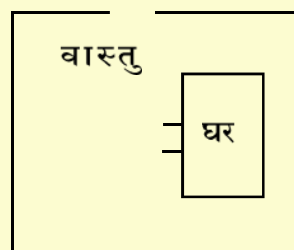
उत्संग



पूर्णबाहु



प्रतिक्षाय



हीनबाहु

देवता (पद) का नाम	द्वार होने का परिणाम
ईश	अग्नि भय (आग लगने का डर)
पर्जन्य	बहुत नारी (कन्या सन्तति)
जयन्त	बहुत धन
महेन्द्र	राजा की दया (प्रसन्नता)
सूर्य	क्रोध
सत्य	झूठापन
भृश	क्रूरता
अन्तरिक्ष	चौरी
अग्नि	कम सन्तान
पूषा	दासता
वितथ	अकेलापना
गृहक्षत	समृद्धि
यम	क्रोध
गन्धर्व	एहसान फरामोश
भृंगराज	सम्पत्ति की हानि
मृष	सन्तान हानि
पितृ	बच्चों को नुकसान
दौवारिक	शत्रुता
सुग्रीव	सम्पत्ति की प्राप्ति (शत्रुता)
पुष्पदन्त	समृद्धि
वरुण	भोग
असुर	राज भय
शोष	सम्पत्ति का क्षय (सूखापन)
रोग	रोग
मारुत	मृत्यु, बन्धन
नाग	शत्रुता
मुख्य	पुत्र व सम्पत्ति की प्राप्ति
भल्लाट	समृद्धि

सोम	धन व पुत्र की प्राप्ति
सर्प	पुत्र से विमुखता
अदिति	महिलाओं को कष्ट
उदित	गरीबी

दो पद में द्वार होने पर दोनों पद का मिलाजुला (मिश्रित) परिणाम आता है।

प्रायोगिक उपयोग

जब भी किसी भवन का नक्शा आपको बनाना हो तो उसका द्वार शुभ स्थान पर अवश्य दें।

ऐसा भी देखा गया है कि हाल फिलहाल एक ओर गेरेज होने के कारण कोने पर द्वार आता है। इसके लिए शुभ पद में एक अतिरिक्त द्वार दें।

बने हुए हिस्से के शुभ पद में द्वार दें।

उदाहरण-

जैसे ४० फीट चौड़ा तथा ६० फीट लम्बा उत्तर मुखी प्लाट है।

उत्तर व पूर्व दिशा में १०-१० फीट खुला स्थान देना है।

दक्षिण व पश्चिम दिशा में ५-५ फीट खुला स्थान देना है।

आग्नेय कोण में गेरेज है तो प्रवेश द्वार ईशान कोण में देना होगा, ताकि कार

वायु	नाग	मुख्य	भल्लाट	सोम	मृग	अदिति	उदिति	ईश
रोग	रुद्र	रुद्र-जय	भूधर			आप	आप-वत्स	पर्जन्य
शोष								जयन्त
असुर	मित्र		ब्रह्मा			आर्य		महेन्द्र
वरुण								आदित्य
पुष्पदन्त								सत्यक
सुग्रीव	इन्द्र-राज	इन्द्र	विवस्वान			सविन्द्र	सावित्र	भृश
दौवारिक								अन्तरिक्ष
पितृ	मृष	भृङ्ग	गन्धर्व	यम	राक्षस	वितथ	पूषा	अग्नि

अन्दर आ सके। इसके साथ ही मुख्य, भल्लाट या सोम में पद में अतिरिक्त द्वार देना चाहिए।

जब हम दूसरे प्रकार से प्लानिंग बताएँगे तब बताएँगे कि कार को आगे ही उत्तर दिशा में पार्क करें तथा शुभ पद में द्वार ले (यह हम प्लानिंग की इकाई में बताएँगें।)

प्रेक्टीकली किसी बने हुए भवन में द्वार की स्थिति ज्ञात करना।

इसी प्रकार हम किसी भी बने हुए घर के द्वार की स्थिति देख सकते हैं।

विधि- प्लाट का मध्य बिन्दु ज्ञात करें।

उसके उत्तर दिशा से उत्तर दिशा मिलाकर चक्र (३२ देवताओं का गोल चक्र) को रखें। देखें कि द्वार किस पद में है, उसके अनुसार परिणाम बताएँ। अशुभ पद में द्वार होने पर शुभ पद का सुझाव दें।

उपयोगी पुस्तकें-

मनुष्यालय चन्द्रिका

राजवल्लभ, समरांगण सूत्रधार

श्री

प्लानिंग

यहाँ हम विभिन्न पद में क्या बनवाना चाहिए इसे देखेंगे। यह सूची तो बहुत ही विस्तृत या व्यापक है। यहाँ हम संक्षेप में ही यह सूची दे रहे हैं, अधिक जानकारी के लिए-

मानसार ग्रन्थ का अध्याय नौ, दस, इकतीस, बत्तीस, चौतीस, पैंतीस, छत्तीस, चालीस, देखें।

मयमत ग्रन्थ का अध्याय नौ, दस, तैईस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, व उन्तीस देखें।

मनुष्यालय चन्द्रिका का अध्याय सात देखें।

यहाँ सांकेतिक रुप से मयमत ग्रन्थ के अध्याय २७ व २९ के अनुसार प्लानिंग दी गई है।

इन स्थानों पर इन वस्तुओं को रखा जा सकता है, उदाहरण पर्जन्य के पद में शंख का स्थान है, अतः एक बात तो यह है कि वह ध्वनि का स्थान है जो की अनाहद (अनाहत) है इसका अर्थ ध्वनि संकेत, डोर बेल के रुप में लिया जा सकता है, इसके अतिरिक्त इस स्थान पर शंख रखा जा सकता है। इसी प्रकार जलयन्त्र का फोटो ईश के पद में रखा जा सकता है।

मयमत

ईश

आया, पानी, क्रीड़ा, आंगन, जलाशय, आराम भूमि, होम, स्नान, शिव, देवता, मूलकोश, शौचालय, पचनालय, सभी पदार्थ, विहार, सभा।

पर्जन्य- कुआँ, शंख, भेरी,

जयन्त-

जलाशय, आराम भूमि, आंगण सहित सभा, विष, दक्षिणाशाला, इष्टदेवता,

महेन्द्र

मुहर लगाना, छत्र, भेरी, शंख, दानशाला, शास्त्र अध्ययन, भोजनस्थान,

सूर्य

भेरी, शंख, गान,

सत्य-

शंख, भेरी, दान,

भृश

वृत्त, प्याऊ, अध्ययन

अन्तरिश

ईंधन, वृत्त, रसोई

अग्नि-

मूल कोश, रसोई, रत्न, सोना, वस्त्र, सभी लक्षणों से युक्त आहार कक्ष, टूप का निरीक्षण, गाय व बछड़ा

पूषाण-

दक्षिणा के लिए सोना, अश्वशाला, भुक्तिगेह, गाय-बछड़ा।

वितथ-

लवण, चमड़ा, सूखा माँस, भुक्तिगेह, अश्वशाला, मूलकोश

गृहक्षत-

राजा, शस्त्रशाला, हाथी का स्थान

यम-

राजा का घर, अन्नपानकर्म, चित्र व शिल्प का कमरा, स्त्री

गन्धर्व-

नृत्य, सेनापति, रस,

भृंगराज

अरष्टागार (अरिष्टागार), घर गृहस्थी का सामान, अश्वशाला, सेनापति, रस, स्त्री

मृग

सूतिकागृह, फकीर, जादूगर, ईंधन

पितृ

व्यय, भैंस, रिसेप्शन, दान, नृत्त, गाना, सभा, उपस्त्री, जल से युक्त आराम व क्रीड़ा, सभी स्त्री, राजा, शिव, रत्न, सोना, अरष्टागार, घर गृहस्थी का सामान,

नैर्ऋत्य का वायु कोण- दान, अध्ययन

दौवारिक

व्यय, अरष्टागार, घर गृहस्थी का सामान, आचमन, दान

सुग्रीव

प्रसूतिगृह, आचमन, नृत्तशाला, अरष्टागार, घर गृहस्थी का सामान, अखाड़ा

पुष्पदन्त

प्रसूतिगृह, दान, स्नान,

वरुण

क्षौर, दानशाला, युवराज, होथी, घोड़ा, पुरोहित, राजा, नारी, संकरालय, जलक्रीड़ा, सभा,

पश्चिम के आंगन के दोनों ओर स्नान, सभी पदार्थ (दक्षिण की ओर)

असुर

धान्य, संकरालय, इन्द्रशाला

शोष

अन्तःपुर, हिरण, संकरालय

रोग

ओखली, औषधि, ऊँट

वायु-

क्षौर, अस्थान, पानी, वापी, विहाराश्रम, जलक्रीड़ा स्थान, तालाब

नाग

सैरन्ध्रि (नर्स), पानी का टेंक, फूलों का जलाशय

मुख्य

कन्या, आया, हाथी, उलूखल, रानी,

भल्लाट-

औषधि कक्ष, घोड़ा, चित्रकार, अस्थान,

सोम

क्षौर, जच्चाघर, आगन्तुक, तुलाभार, हेमगर्भ, अस्थान

सर्प (मृग)- जलाशय, विहार, आराम भूमि, आंगण सहित सभा, फिजियोथेरेपी

अदिति

सोना, रत्न, गन्ध, हाथी, जलाशय, विहार, आराम भूमि, आंगन सहित सभा, कुबड़ी, ठिकनी, बाँझ

उदिति

जलाशय, विहार, आराम भूमि, आंगण सहित सभा, आया,

आप

कुण्ड, गणिका, गर्म पानी नहाने के लिए, ठण्डा पानी पीने के लिए, वापी, कुप, जलाशय, पानी का कमरा, बगीचा, मञ्जन, स्नान,

आपवत्स

गर्मपानी, ठण्डा पानी, वापी, कूप, जलाशय, पानी का कमरा, बगीचा, विषघात, मञ्जन, स्नान

आर्यमा

अन्नप्राशन, भोजनस्थान

सवित्र

पुत्र, अन्नप्राशन, रसोई,

साविन्द्र

भुक्तिगेह

विवस्वान

श्रवण

इन्द्र

अन्नप्राशन

इन्द्रजय

क्षौर, आयुध

मित्र

विवाह, मित्र, नृत्य, रस, उपकरण, संकरालय

रुद्र

पानी का टेंक,

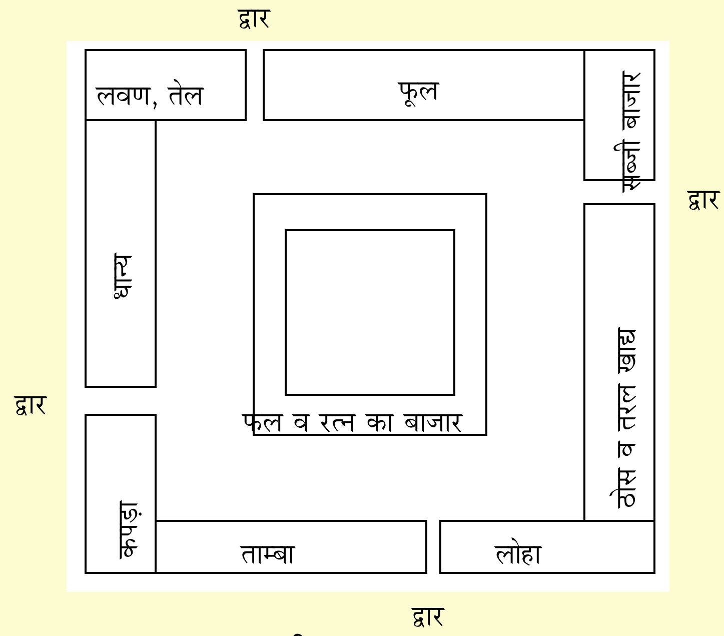
रुद्रजय

भूधर

कोशगृह, पेषणी (सिलबट्टा)

ब्रह्मा

सभा, अभिषेक मंडप


द्वार
लवण, तेल
फूल
सब्जी बाजार
द्वार
धान्य
द्वार
फल व रत्न का बाजार
ठोस व तरल खाद्य
कपड़ा
ताम्बा
लोहा
द्वार

चित्र- नगर बाजार

राज-अधिकारी	ब्राह्मण, तपस्वी, यति, सिद्ध	फलादि बेचने वाले
रथ, आयुध चलाने वाले	अ.पु. १०६-६	सेनापति
नट, भाँट, मल्लाह आदि,	वैश्या, नर्तकी	सुनार, लोहार

	दण्डाध्यक्ष	
प्रधान सचिव, कोश रक्षक, शिल्पी	अ.पु. १०६-१०	सेनापति
केम्प लगाने वाले	अन्तःपुर अध्यक्ष	सेना

	ब्राह्मण	
शूद्र	अ.पु. १०६-	क्षत्रिय
	वैश्य	

म्लेच्छ	किसान	म्लेच्छ
गौशाला	अ.पु. १०६-१५	गुप्तचर
म्लेच्छ	श्मशान	म्लेच्छ

धान्य	द्रव्यागार	देवालय
भोजनालय	अ.पु. १०६-१८	कोशागार
अस्त्रागार	शयन	रसोई

गन्ध	धन, पशु	दीक्षा
धन	अ.पु. १०६-१८ अनुवाद चेक करना है।	
अस्त्रागार	शयन	रसोई

प्राहारक, अस्त्रग्राह
नरेन्द्र सार्वभौम
प्राहारक, अस्त्रग्राह

पट्टधर
नरेन्द्र
प्राहारक, अस्त्रग्राह
प्राहारक, अस्त्रग्राह
पट्टधर
पट्टधर

पट्टधर
सार्वभौम
अध्याय ४० श्लोक ३७
सार्वभौम
सार्वभौम
पार्ष्णिक

पार्ष्णिक
मण्डलेश, पट्टभाक
मण्डलेश, पट्टभाक
पार्ष्णिक
अधिराज

सार्वभौम अधिराज
मण्डलेश, पट्टभाक

सूतिका		
सूतिका		

तालाब		पचनालय
	अध्याय ४० श्लोक ५०	
भोजनकक्ष	भोजनकक्ष	तालाब

			रत्नादि	रत्नादि		स्नानादि	स्नानादि	
वस्तुनिक्षेप								
वस्तुनिक्षेप								
धनालय				अध्याय ४० श्लोक ४७				
आयुध								
आयुध								
धनालय		आभूषण	आभूषण					

विलासिनी

विलासिनी

युवराज

अध्याय ४० श्लोक ५३

शयनालय

दास, दासी

दास, दासी

रसोई

रसोई

रसोई

कुआँ

भोजनालय

भोजनालय

कुआँ

कुआँ

देवता भोजन	पत्नी	पत्नी	ब्राह्मणी	पत्नी	ब्राह्मणी	देवता भोजन		देवता भोजन
								पत्नी
वासनालय								
पत्नी, वासनालय								
पत्नी, वासनालय			मानसार ३६ (१५-१६)					
								पत्नी
								रानी पत्नी
देवता भोजन	रानी	रानी	रानी					

हवन (ब्र)

रत्न, सोना

रत्न, सोना

स्नान

३ ६ - २०मानसार

गाय

गाय

गाय

			विलासी	विलासी				
								अनुचर, सखी
युवराज			मानसार ३६-२९					
युवराज								
								अनुचर, सखी
सूर्य	कुमारी	चन्द्र	रानी कुमारी	रानी			अनुचर, सखी	अनुचर, सखी

चढ़ाव	चढ़ाव	चढ़ाव
चढ़ाव		चढ़ाव
चढ़ाव	चढ़ाव	चढ़ाव

धान्य	धान्य	धान्य						
पुष्प								
पुष्प								
								धान्य

सभी के लिए	ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र	शूद्र
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य	३६- ८ से १३	ब्राह्मण
शूद्र	ब्राह्मण, क्षत्रिय	सभी के लिए

नृतांगना	नृतांगना		नृतांगना					

तैल-अभ्यंग

विद्या

पुत्री

पुत्री

बालालोकन
मण्डप

मानसार
३६-२४

वस्त्राच्छादन
मण्डप

पुत्र

पुत्र

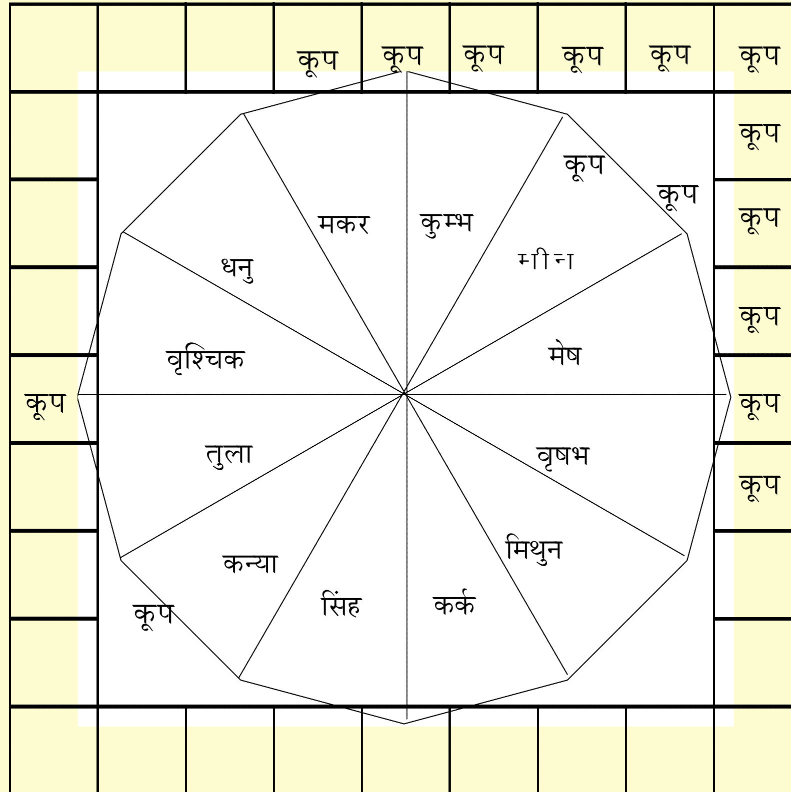
धोबी	तैली सूतिका (दर्जी)	
मछुआरे, मांस व्यापारी		नाचने वाले
सूतिका (दर्जी)	नाचने वाले किरात	धोबी

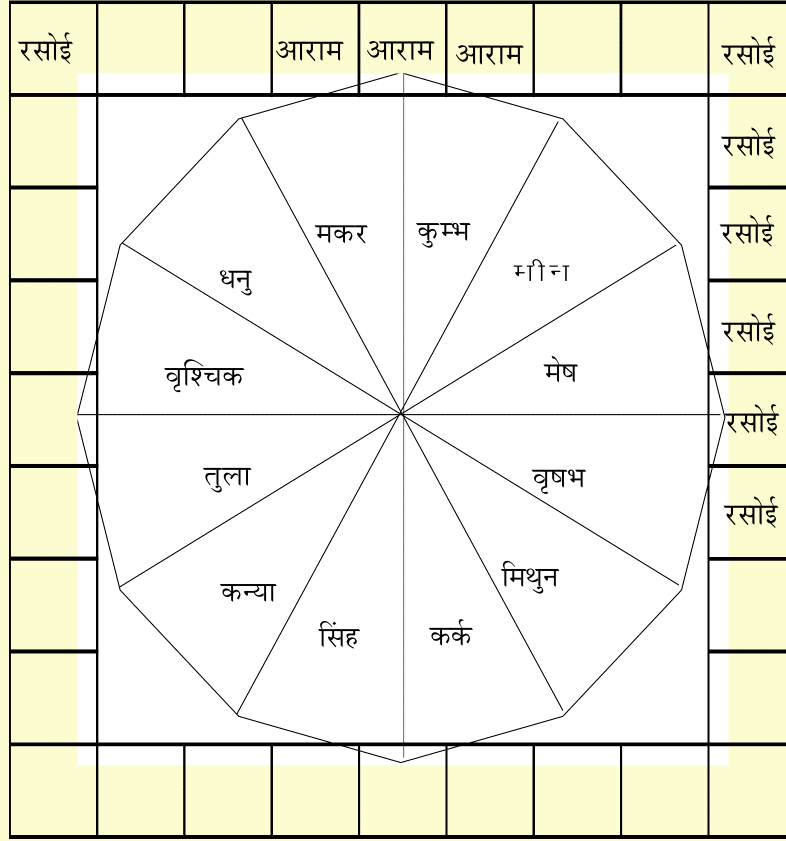
	टोकनी वाले चर्मकार	
हथियार बनाने वाले		हथियार बनाने वाले
	कर्मकार टोकनी वाले	

अन्नादि		देवता गृह शान्ति गृह
	म.पु.२५६-३३	जल
घरेलू सामग्री		रसोई-गृह

अन्नादि		देवता गृह शान्ति गृह
	म.पु.२५६-३३	जल
धारे ला सामग्री		रसोई-गृह

मनुष्यालय चन्द्रिका ७-२८-२९




रसोई
आराम
आराम
आराम
रसोई
रसोई
रसोई
रसोई
रसोई
रसोई
मकर
कुम्भ
धनु
मीना
वृश्चिक
मेष
तुला
वृषभ
कन्या
मिथुन
सिंह
कर्क

								गोशाला
गोशाला								गोशाला
								गोशाला
गोशाला								
गोशाला								
		गोशाला		भैंस			गोशाला	

		कुलदेवी-देवता
कुलदेवी-	नित्य पूजा	कुलदेवी देवता
		कुलदेवी-देवता

मनुष्यालय चन्द्रिका अध्याय ७ श्लोक ३१

	कुटुम्बादि	
धन	मानुष्यालय चन्द्रिका २२/७	होम तथा अर्चना आदि
शायाना, विद्याभ्यास	अतिथि का स्वागत	

	होम तथा अर्चना आदि	
अतिथि का स्वागत	मनुष्यालय चन्द्रिका २२/७	कुटुम्बादि
शाला, विद्याभ्यास	धन	

	(धान्य) धनालय	
धनालय (धान्य)	म.च. २४/७	धनालय (धान्य)
धान्य	धनालय खलिहान, धान्य	

विहार

स्नान

सुख

स्नान

भोजनशाला

भोजनशाला

व्यायाम, शस्त्र

नृत्य

शयन

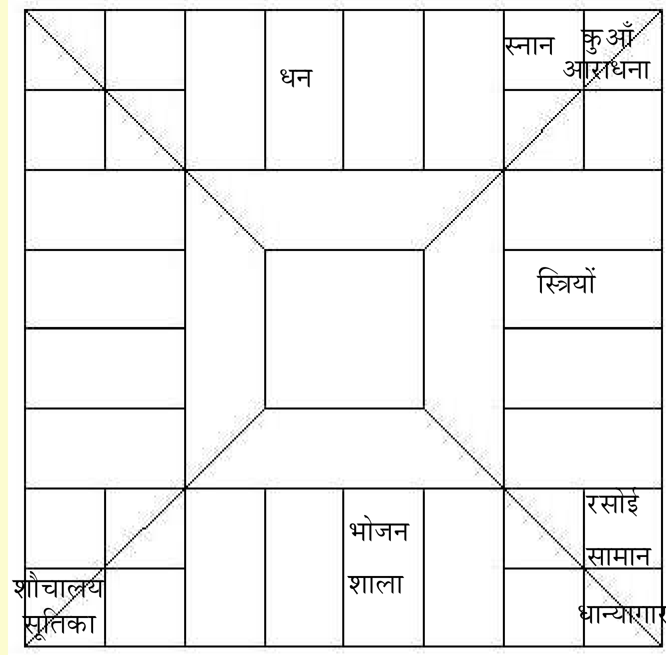
मनुष्यालय चन्द्रिका अध्याय ७
श्लोक ३४

मदिर		कात्यायनी		धनद		मातृ		शंकर
								शंकर
								शंकर
विष्णु								सौर
गणाध्यक्ष								
सुगत								विष्णु
केशव	केशव	विनायक		षण्मुख				कालिका

मयमत ९-७६
मंदिर स्थान

(जहाँ जल की आवश्यकता हो) जलाशय, वापी या कुआँ

मछुआरों	पुष्पवाटिका कुम्हारों	
कसाई	मयमत ९-८७	कुम्हारों
	गौशाला वैश्य	



मयमत २६-२१६

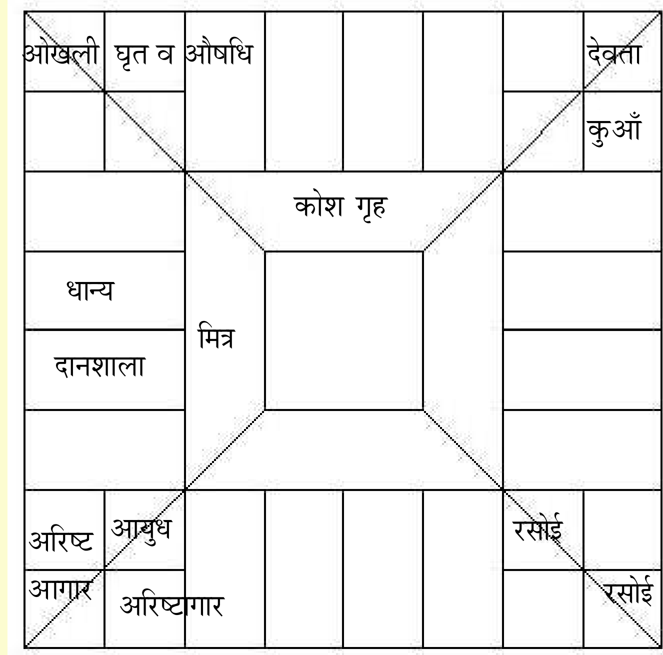
खलूरी विन्यास

रसोई

ओखली

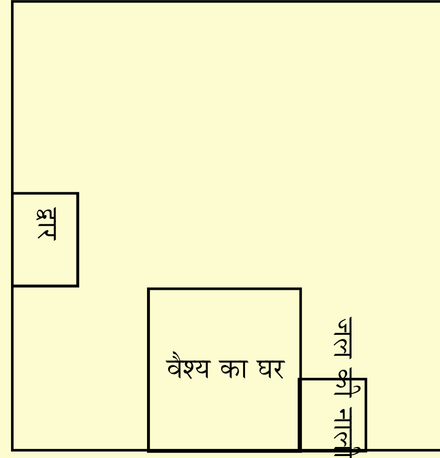
चूल्हा

२७-१०३ गृह-विन्यास

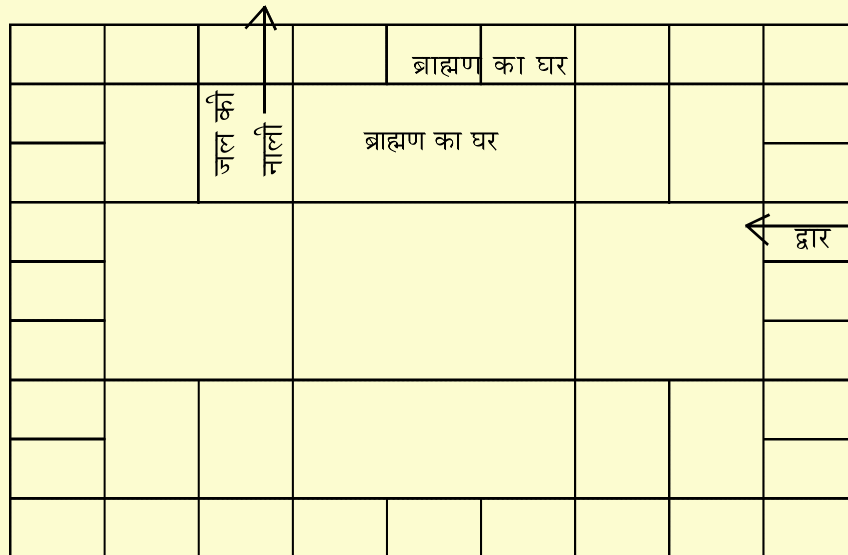


मयमत २७-११४-

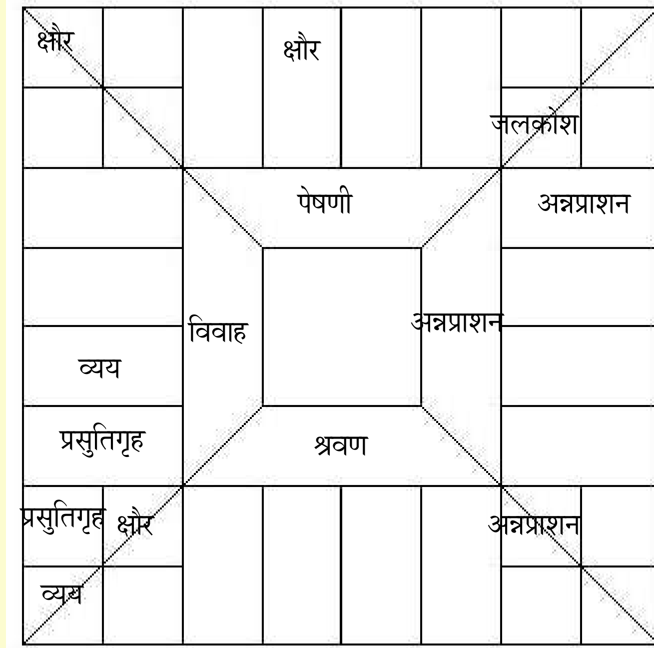
गृहविन्यास



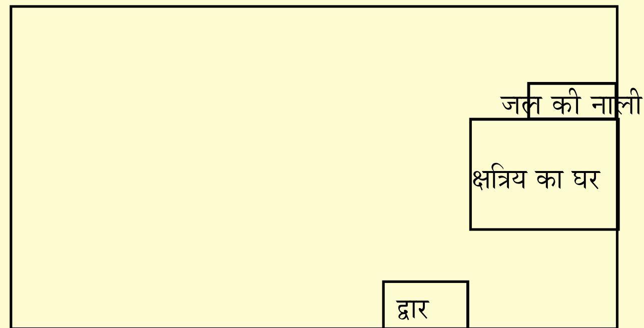
मयमत २७.४० धान्यालय



मयमत २७-४०



२७-१०५ मयमत गृह-विन्यास



मयमत २७.४० अन्नालय

जलाशय		रानी		हेमगर्भ		सोना, रत्न, गन्ध		कुआँ, शौचालय
अन्तःपुर								
राजा				मयमत २९-११६				
नृत्य								
स्त्री		स्त्री		स्त्री	द्वार	मूलकोश		रसोई

	सैरन्ध्रि (नर्स)	कन्या (चेम्बरमेड)	औषधि कक्ष			फिजियो	थेरेपी	इष्ट देवता
						मज्जन, स्नान (गर्म पानी, नहाने के लिए, ठंडा पानी पीने के लिए)		
संकरालय								इष्ट देवता
संकरालय	संकरालय		मयमत२९ श्लोक ३५-४२					भोजन
संकरालय	नृत्य, रस व उपकरण							भोजन
आचमन								
आचमन								
रिसेप्शन	सूतिका घर	अश्वशाला	नृत्य				दक्षिणा के लिए सोना	

सरोवर हाथी
अश्व
उपनीतिका
लम्बे जलाशय, विहार, आराम
औषधालय
(pleasure garden), आँगन

हाथी, ऊँट
चाँदनी
युवराज, पुरोहित

श्लोक ५६-६४
अध्याय २९

शास्त्र
गान
गणित
अध्ययन

कुश्ती
दान
ईंधन
मसाले
चित्र शिल्प
हाथी
नमक
रसोई
गाय

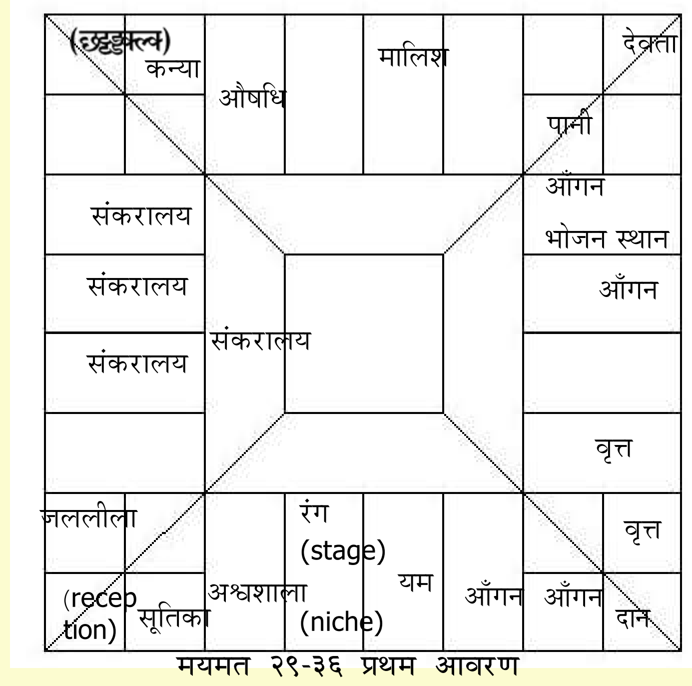
चित्र गृहविन्यास तृतीय आवरण

सरोवर	nurses				बाँझ स्त्री	(nurses	
	सरोवर	सेविका,	पेंटर,	कलाकार		जलाशय	दक्षिणा
						छत्र व भेरी	
						शंख,	
स्नान						दान	
दानशाला						प्याऊ	
			सेनापति		द्वारशाला		(चक्की)
भैंस		सेनापति		रसोई		अश्वशाला	ईंधन

मयमत २९-५० द्वितीय आवरण

गीत व वनिता (स्त्री)		जल, स्नान, देवालय
नृत्य, वाद्य, व लीला		निरीक्षण

मयमत २९-१०१



मयमत २९-३६ प्रथम आवरण

	पानी	कन्या, आया	चित्रकार	चित्रकार	चित्रकार	कूबड़ी बांझ	धात्री (आया)	धात्री (आया)
	पानी					पानी	पानी	धात्री (आया)
								दक्षिणा शाला
								दानशाला
			मयमत अध्याय २९ द्वितीय आवरण श्लोक ४३-५५					छत्र, भेरी, शंख
								दान
भैंस			दान स्नान			अश्व		प्याऊ
भैंस								ईंधन
भैंस	फकीर, जादूगर	सेनापति (अजेय)	सेनापति	रसोई	शस्त्रशाल	अश्व	अश्व	

पटरानी

अश्वशाला

अश्वशाला

व्यय

राजवल्लभ

४०/५

अश्वशाला

धर्मशाला

अश्वशाला

अध्ययन

वादित्र

राजमाता,

युद्धशाल

लक्ष्मी

नृत्य

भोजन

रसोई

गृहस्वामी के इच्छानुसार, सभी स्थान पर (कहीं भी) शयन का स्थान करना।

नृत्यशाला		
नृत्यशाला, भोजनशाला		नृत्यशाला
शौचालय		नृत्यशाला

पारधी		रंगरेज, कपड़ों का
कुआँ, तालाब, बाबड़ी, कुण्ड		ब्राह्मण
वैश्या	चमड़े का कार्य करने वाले, अन्त्यज, क्षत्रिय	अग्नि जीवी, सुनार, लोहार,

औषधि	नागा (हाथी?)	व्यायाम शाल्व चित्रशाला	गावां, क्षीर	पुरोहित, अभिषेचन, दान, अध्ययन	राजपुत्र	राजपुत्र, विद्या	राजमाता, चाचा, मामा	देवकुल
ओखली	भण्डागार	लकड़ी कर्म	चामर, छत्र, मन्त्रि, राजा द्वारा अधिकारियों का निरीक्षण			हंस, क्रौंच,सारस	हाथी, जल	ज्योतिषी
आयुध								सेनापति
कोष्ठागार								
वापी, पान								राजगृह
पुष्प								धर्म व्यवहार निरीक्षण
अरिष्टगार	स्त्री उपस्थान		रथशाला, गजशाला			वन्दिनः	वाद्यशाला	कोष्ठागार
								मृग-पक्षी
अवस्कर	अन्तःपुर	कुमारी भवन, झूला	संगीत	गुप्त कोष्ठागार	सोना, चाँदी	चर्म	सभा, भोजन	रसोई

उत्तर

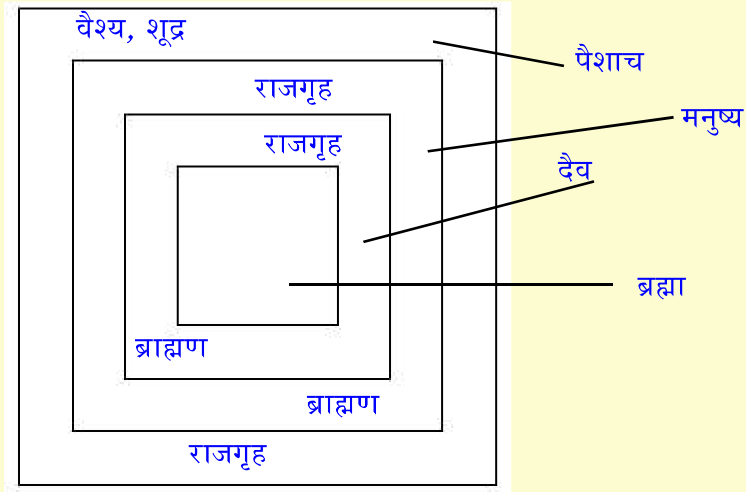
	रतिगृह	भंडार	औषधि	मन्दिर
कोप भवन				
				स्नान
पढाई				मथने
	शौचालय		घी	रसोई

विश्वकर्म प्रकाश अध्यायय २ श्लोक ९४-१००

मठ, मण्डप या सत्रशाला		मठ, मण्डप या सत्रशाला
	मानसार ६८-९	
मठ, मण्डप या सत्रशाला		मठ, मण्डप या सत्रशाला, जल

	टोकनी वाले चर्मकार	
हथियार बानाने वाले		हथियार बनाने वाले
	कर्मकार टोकनी वाले	

धोबी	तैली सूतिका (दर्जी)	
मछुआरे, मांसा व्यापारी		नाचने वाले
सूतिका (दर्जी)	नाचने वाले किरात	धोबी



वादक, गणिका	स्थपति	नेत्रचिकित्सक		ऑपरेशन थिएटर		वैद्य के घर		रक्षक
वादक, गणिका		राजगृह						
स्वामीभक्त								रक्षक राजगृह
सामंत								कीर्णकार
राजा	राजगृह		मानसार १११-१२०-९					
पुरोहित								कीर्णकार
पुरोहित रक्षक								
रक्षक								अतिथि
क्लर्क			वादक, गणिका					

अतिथि (?)

मछुआरों, मांस		
	मछुआरों, मांस	

उत्तर

	रतिगृह	भंडार	औषधि	मन्दिर
कोप भवन				
				स्नान
पढाई				मथने
	शौचालय		घी	रसोई

विश्वकर्म प्रकाश अध्यायय २ श्लोक ९४-१००

इकाई ३९

शिलान्यास व गर्भ विन्यास

उद्देश्य

इस इकाई में भूमि या भवन को सकारात्मक ऊर्जा से भरने की शास्त्रोक्त विधि का अध्ययन करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

शिलान्यास विधि का महत्व बता पाएँगें।

शिलान्यास करने की विधि का साधारण परिचय दे पाएँगे।

महत्व-

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में शिलान्यास विधि का वर्णन मिलता है। जो भी भवन का निर्माण करना हो उसका आधार सशक्त हो, मजबूत हो, इसी आधार पर पूरे भवन का भार आता है। आज के समय में कॉलम बनाए जाते हैं ये भारवाहक कॉलम (लोड बियरींग कॉलम) भवन का भार भूमि पर स्थानान्तरित करते हैं। पहले अपने यहाँ ईंट के भवन (पूरा स्ट्रक्चर) बनते थे। (आज भी बनते है)। उसमें भवन का भार ईंट के पीलर लेते थे, वे पीलर (ब्रिक पीलर) भवन का भार भूमि पर ट्रांसफर करते थे, आज इनका स्थान लोहे, सीमेंट, गिट्टी, रेत के बने कॉलम ने ले लिया है। ईंट का प्रयोग हम पार्टीशन दीवार (वॉल) के रूप में करते हैं।

वास्तुशास्त्र में वर्णन किया गया है कि इन भार वाहक खम्बे (लोड बियरींग पीलर) के नीचे पूजा करके सकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थ व चिह्न रखे जाते हैं या लगाए जाते हैं। पूरे भवन का भार ठीक तरह से भूमि पर स्थानान्तरित हो (ट्रांसफर हो) इसके लिए आधार में सबसे नीचे के बड़ा विशाल पत्थर जिसे शिला कहते हैं रखा जाता है। यह शिला जहाँ-जहाँ कालॅम आते हैं, उसके नीचे स्थापित की जाती है। विशेष रूप से मुख्य दिशा व विदिशा में शिला की स्थापना की जाती रही है। यह शिला आयताकार या वर्गाकर होती है तथा उसकी मोटाई, चौड़ाई से आधी होती है।

आज के समय में जो कॉलम खड़े किए जाते हैं, बनाए जाते हैं उसमें भी सबसे

नीचे बेस पुटिंग करते हैं। कॉलम का आधार तैयार करते हैं, उसी में सरिए को जोड़कर कॉलम खड़ा किया जाता है।

हम यहाँ सरलतम रूप से शिलान्यास विधि का वर्णन करेंगे। मन्दिर आदि धार्मिक स्थल का निर्माण करना हो, ऐसे पवित्र स्थल का निर्माण करना हो, जहाँ हजारों या लाखों व्यक्ति आएगें वहाँ शिलान्यास विधि बहुत सी सावधानी से तथा विस्तार से करना आवश्यक है। उस विधि का वर्णन यहाँ नहीं किया जा रहा है। यहाँ सामान्य रूप घर के लिए उपयोगी शिलान्यास विधि का वर्णन कर रहे हैं।

किस स्थान पर शिलान्यास करें-

गृहारम्भ मुहूर्त अध्याय के अनुसार जिस समय गृहारम्भ करें उससे खुदाई का दिशा निश्चित करते हैं।

खुदाई कि दिशा निश्चित होने के बाद जहाँ पहला डोबरा (गड्ढा) खोदते हैं, जहाँ पहला कॉलम बनेगा) उस कॉलम के नीचे शिलान्यास किया जाएगा।

विशेष- मंदिर में सभी दिशा व विदिशा वाले कॉलम के नीचे शिलान्यास करते हैं।

कई बार सामान्य रूप पंडित जी आग्नेय कोण से खुदाई प्रारम्भ करते हैं तब आग्नेय दिशा वाले स्तम्भ (कॉलम, खम्बा) के नीचे शिलान्यास किया जाता है।

विशेष बात-

कई ग्रन्थ मानसार, मयमत आदि में इस विधि को गर्भ विन्यास के नाम से कहा गया है। इसे नींव भरने की विधि के रूप में कहा गया है।

लाभ-

कुल मिलाकर उद्देश्य यह है कि किस प्रकार पूरे भवन को सकारात्मक ऊर्जा से भरा जा सकें। आवेशित किया जा सके। इसके लिए कॉलम (स्तम्भ) भवन के वे अंग है जो सभी मंजिलों से सीधे-सीधे जुड़े हैं। अतः स्तम्भ के नीचे शिलान्यास करने का विधान है। जिससे की सकारात्मक ऊर्जा पूरे भवन में फैल सके।

सामग्री-

अब हम देखेंगे कि शिलान्यास या गर्भविन्यास करने के लिए क्या-क्या सामग्री उपयोगी है, आवश्यक है।

शिला-

जैसा हम देख चुके हैं कि शिलान्यास में एक शिला या पत्थर होता है वह आकार में विशाल या बहुत बड़ा होता है कि वह भवन का भार वहन कर सके।

यहाँ हमें यह भी वर्णन मिलता है कि शिला पत्थर, ताम्बे, चाँदी या सोने की हो सकती है।

आजकल हमारे भवन कॉलम के बने होते हैं तो हम ताम्बे की शिला का प्रयोग करेंगे। यह ताम्बे की एक शीट या जिसे हम पतरा, चद्दर या प्लेट कहते हैं, हो सकती है। इस पर विभिन्न चिह्न अंकित होते हैं। इसका आकार बेस फुटिंग के आकार से थोड़ा कम तथा विषम अंगुल में होता है।

कलश-

यह संख्या में ५ हो सकते हैं। यह सामान्य आकार के हो सकते हैं। यह बहुत बड़े नहीं होना चाहिए। ३ अंगुल एक आदर्श आकार हो सकता है।

रत्न-

माणिक्य, मोती, मूँगा, पन्ना, हीरा, पुखराज, गोमद, नीलम,

धातु-

सोना (कम से कम १ ग्राम, ३, ५, ७, ११ ग्राम का भी हो सकता है। स्वस्तिक के आकार में लें।

औषधि-

वच, कूट, चन्दन, जटामाँसी, शूंठी, नागरमोथा, हल्दी (आमा व सामान्य)

मात्रा- सुविधानुसार लगभग ५०-५० ग्राम

खनिज-

जातिहिंगुल्य (हिगलु), हरिताल, माक्षी (सोनामक्खी), मनःशिला (मेनसिल), राजावर्त, गैरिक, अंजन, गन्धक।

इन सभी खनिज का प्रयोग सावधानी पूर्वक करना चाहिए। इनको हाथ लगाने के बाद वह हाथ शरीर के किसी अंग से स्पर्श न करें। (घबराने या डरने की बात नहीं है, केवल सावधानी पूर्वक प्रयोग करने के लिए लिखा है।) यह सभी खनिज आयुर्वेदिक दवाइयों की दुकान पर मिलते हैं। मात्रा- इनकी मात्रा आज के समय के अनुसार (सन् २००६) करें तो लगभग १०-१० या २०-२० ग्राम हो सकती है। इसमें लाजावर्त की मात्रा

कम लेना होगी।

पारा-

यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण धातु है। मात्रा लगभग १ किलो हो तो अच्छा है। यह भी सराफा या आयुर्वेदिक दवाई का दुकान पर प्राप्त किया जा सकता है।

पवित्र जल-

पवित्र नदियों का जल हो तो बहुत अच्छा है, अन्यथा शुद्ध जल का प्रयोग करें।

विधि-

प्रारम्भिक तैयारी

(१) पूजा की सभी सामग्री को तैयार कर लें। (पंडित जी से सूची लेकर) (सामान्य रुप से थाली, कलश, पानी, कंकू, चावल, धागा (मौली), पान, सुपारी, गेहूँ, चावल, कपूर, फूल (पुष्प), दिया, घण्टी, आरती का सामान, प्रासाद, फल, कपड़ा (सफेद, लाल), खारक, चम्मच आदि।

विधि-

(१) जितनी गहराई पर पथरीली जमीन या ठोस जमीन आ जाए वहाँ तक खुदाई करें।

(२) भूमि का तल समतल करें। उसके आधार को गोबर से लीपकर या गोबर, गोमूत्र छिड़ककर पवित्र करें।

उस पर अक्षत (साबूत, बिना टूटा चावल) की पतली सी चादर बिछा या यूँ कहे कि चावल बिखेर दें।

(३) बेसगिट्टी से आधार तैयार करें। (इंजीनियर, ठेकेदार आदि बेस गिट्टी से आधार तैयार करना जानते हैं, इसमें गिट्टी (पत्थर के मोटे-मोटे टुकड़े लगभग डेढ़-दो इंच मोटे होते हैं, लेकर, उसमें रेत व सीमेन्ट तथा उचित मात्रा में पानी मिलाकर, मिक्चर बनाकर भूमि पर बिछा देते हैं। यह आधार लगभग ४-६ इंच मोटाई का होता है।

(४) कलश व शिला को सभी औषधी व खनिज के जल से स्नान कराए, उसके पश्चात शुद्ध जल से स्नान कराकर पवित्र करें। (पंचामृत, पंचगव्य से भी स्नान कराकर पवित्र कर सकते हैं।)

पंचामृत-गाय का दूध, उसी से बना दही व घी, शहद व शक्कर

पंचगव्य-गाय का दूध, दही, घी, गोमूत्र व गोबर

(५) एक कलश में सभी रत्न दूसरे में औषधी तीसरे में खनिज चौथे में पारा तथा पाँचवें कलश में सोने का स्वस्तिक रखें। सभी कलश के शेष भाग को जल से भर दें। कलश की पूजा करें। कंकू आदि लगाकर उस बेस पुटिंग के चारों कोण में चार कलश तथा एक कलश मध्य में स्थापित कर दें। उसका ऊपरी भाग बेस पुटिंग के ऊपरी भाग के बराबर आ जाए।

(पारा भरते समय सावधानी रखें कि पारा धातु को खा जाता है, अतः कलश में पारा भरने के उपरान्त अधिक देर तक न रखकर, शीघ्र ही स्थापित कर दें। ऐसा नहीं करने से यदि अधिक देर तक रखा जाए और कलश पतला हो तो कुछ समय बाद कलश की दीवार में छिद्र कर पारा बाहर आने लगेगा।)

(६) इसके ऊपर वस्त्र में लपेट कर ताम्बे की शिला स्थापित कर दें।

उसके ऊपर निर्माण कार्य प्रारम्भ करें।

इस पूरी विधि में पूजन-पाठ व मन्त्र आदि का वाचन पंडित करते हैं। स्वस्ति वाचन भी किया जाता है। शिलाओं से प्रार्थना की जाती है कि वे गृह में रहने वाले सभी व्यक्ति को आयु, कामना, समृद्धि प्रदान करें।

गर्भविन्यास

गर्भविन्यास शब्द का अर्थ पहले देख लें। जैसा कि हम जानते हैं कि माता के गर्भ में सन्तान वृद्धि को प्राप्त करती है, बढ़ती है। यह गर्भ पेट (गर्भाशय) के अन्दर होता है, रहता है, आवृत रहता है, ढका रहता है। उसी प्रकार भूमि के अन्दर सकारात्मक ऊर्जा देने वाले पदार्थों को ढककर (एक पात्र या बर्तन में रखकर, ढककर) भूमि के अन्दर रखा जाता है। इसे गर्भविन्यास कहते हैं। गर्भविन्यास रात्रि में करना शुभ कहा है। इसके पीछे कारण यह है कि इसमें रत्न, सोना, चाँदी आदि रखे जाते है वह कोई चुरा न ले, इसलिए इसे गोपनीय तरीके से किया जाता है।

शिलान्यास विधि में जो कलश तैयार किया गया है ठीक उसी प्रकार गर्भविन्यास विधि में कलश तैयार किया जाता है। इस कलश के तैयार कर ढककर नींव में नीचे स्थापित किया जाता है।

बने हुए भवन में कलश का उपयोग

वास्तु सुधार में कलश का उपयोग

कलश का प्रयोग हम निम्न प्रकार से कर सकते हैं या करते हैं।

कलश को हम इस प्रकार देखते हैं कि इसका मुख्य उद्देश्य पूरे वातावरण को सकारात्मक ऊर्जा से भरना है, आवेशित करना है।

यहाँ कलश को जिस स्थान पर स्थापित करना है उस स्थान पर भूमि में लगभग ६ इंच लम्बा, ६ इंच चौड़ा तथा ६ इंच गहरा गड्ढा खोदकर, उसे समतल कर, गोबर से लीपकर, चावल बिछाकर कलश की स्थापना करते हैं।

आइए हम अध्ययन करें कि भवन के कौन-कौन से स्थान पर कलश लगाना चाहिए-

(१) मर्म स्थान-

शल्य इकाई में हमने देखा कि मर्म स्थान पर शल्य हो तो अत्यन्त ही दोषकारक होता है। हम यह भी जानते हैं कि मर्म स्थान पर कोई भी स्तम्भ (कॉलम) या दीवार या निर्माण नहीं होना चाहिए, क्योंकि मर्म स्थान भवन की ऊर्जा के केन्द्र हैं। जब ये स्थान (मर्म स्थान) नकारात्मक ऊर्जा (शल्य) से आवेशित होते हैं तो पूरे भवन में नकारात्मक ऊर्जा फैलती है। इसी प्रकार यदि ये मर्म स्थान सकारात्मक ऊर्जा से आवेशित किए जाए तो पूरे भवन में सकारात्मक ऊर्जा फैल जाएगी।

(२) मध्य स्थान पर-

वास्तु शास्त्र में ९ मर्म स्थान बताए गए हैं, सभी नौ स्थान पर कलश लगाना संभव न हो तो मध्य स्थान में कलश लगाना चाहिए।

जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में नाभी (नाभि) होती है, उसी प्रकार भवन के मध्य स्थान को भी नाभी (नाभि) कहते हैं। माता के गर्भ में बालक का पोषण नाभी के द्वारा ही होता है। भवन की नाभी (नाभि) को सकारात्मक ऊर्जा से आवेशित करने पर पूरे मकान या गृह में सकारात्मक ऊर्जा फैलती है।

(३) प्रवेश द्वार के नीचे-

प्रवेश द्वार सामान्य रुप से भवन (बने हुए हिस्से) का वह स्थान है, जिसमें से गृह के सभी सदस्य प्रवेश करते हैं। इस स्थान पर भूमि के अन्दर कलश स्थापित करने से आते-जाते समय सकारात्मक ऊर्जा से आवेशित होते हैं। यहीं से ऊर्जा भी घर में प्रवेश होती है, वह भी आवेशित होती है।

(४) दीवार-

प्रवेश द्वार की दीवार के दाहिनी ओर गर्भ विन्यास का विधान है।

(५) आसन (कुर्सी आदि) के नीचे

आज के समय में यदि हमें किसी ऑफिस, फैक्ट्री, दुकान आदि का वास्तु सुधार करना हो तो जिस स्थान पर सबसे प्रमुख व्यक्ति (दुकानदार, मालिक, प्रमुख मेनेजर) बैठता हो, उसकी कुर्सी के नीचे यह गर्भ विन्यास किया जाता है।

फ्लेट के लिए गर्भस्थापना

उपरोक्त सभी उपयोग हम तल मंजिल पर ही कर पाएँगे। जब बहुमंजिला भवन, मल्टीस्टोरिड बिल्डिंग हो या हमें किसी फ्लेट में वास्तुसुधार करना हो तो कलश के स्थान पर हम चाँदी के बने हुए केप्सूल (ताबीज) का प्रयोग कर सकते हैं। जिस स्थान पर केप्सूल लगाना हो, वहाँ ड्रील मशीन से एक-डेढ़ इंच गहरा ड्रील कर, केप्सूल लगाकर छिद्र को बन्द कर देते हैं।

हमारे वास्तु सुधार के तरीकों में कलश की स्थापना एक बहुत ही सशक्त व महत्वपूर्ण विधि है।

इसका प्रयोग शुभ मुहूर्त में प्रसन्न चित्त होकर करना चाहिए।

उपयोगी पुस्तकें

विश्वकर्म प्रकाश अध्याय ४, ५, ६

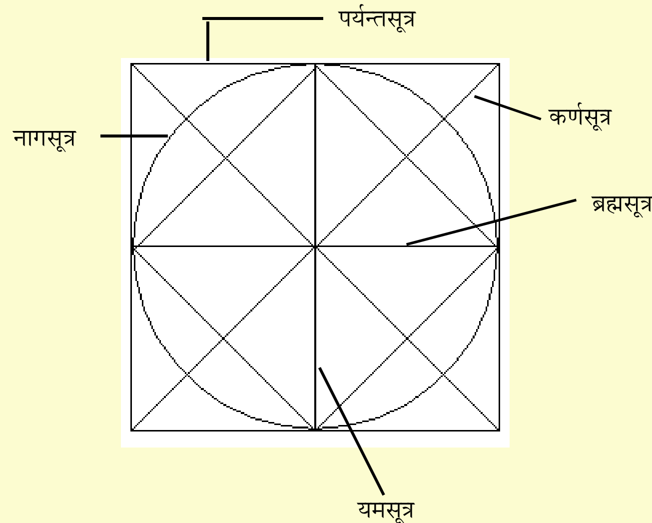
इकाई ४१

प्लानिंग वास्तुशास्त्र के अनुसार प्लानिंग के नियम

पेपर पर पहले यह निर्धारित करें कि कौन सा पद विन्यास करना है।

८ गुणित ८ या ९ गुणित ९, क्योंकि ८ गुणित ८ में बाहर २८ भाग है, मध्य में ४ भाग ब्रह्मा है, दोनों मिलाकर कुल ३२ भाग हुए जहाँ निर्माण नहीं करना है, तो निर्मित क्षेत्रफल कुल ३२ भाग अर्थात ५० प्रतिशत होगा।

९ गुणित ९ में बाहर ३२ पद ब्रह्मा ९ पद कुल ४१ पद, जो छोड़ना है, ४० पद में निर्माण



चित्र २.३ सूत्र विन्यास

करना है। इस तरह से यह ५० प्रतिशत से कुछ कम आएगा।

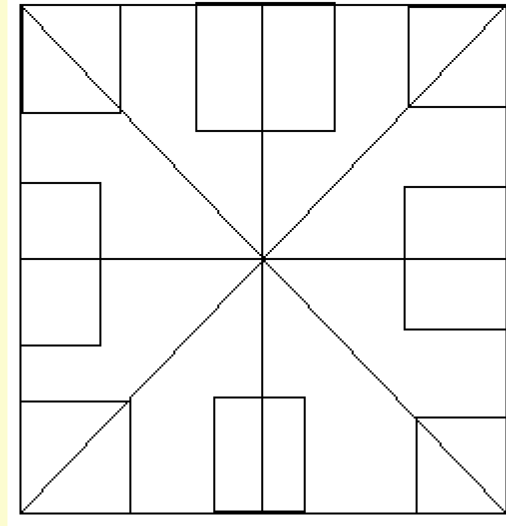
ब्रह्मस्थान ४ भाग छोड़े।

जो हिस्सा बनाना है, उसका मध्य स्थान तथा प्लाट (भूखण्ड) का मध्य स्थान एक नहीं होना चाहिए। कोई भी कमरे का मध्य न तो दिशा के मध्य की रेखा पर, न ही कोण की मध्य रेखा पर हो।

(१) सबसे पहले प्लाट की सीमा निर्धारित करें।

उत्तर दिशा ज्ञात करके पद विन्यास करें।

पेपर पह बाहर की वीथि में द्वार का शुभ स्थान ज्ञात करें।
(२) बाहर की पैशाच वीथि में निर्माण नहीं करते हैं।
(३) मध्य की ब्रह्मा वीथि में पद विन्यास नहीं करते हैं।



चित्र २.६ सूत्र वेध

८ गुणित ८ में -
१- यमसूत्र व ब्रह्मसूत्र मध्य से जाते हैं।
२- इसके मर्म कर्णरेख्रा तथा आड़ी व ख्रड़ी रेख्रा के सन्धिस्थल मिलकर, मर्म बनते हैं, जो की ज्यादा सही है।
३- इसमें जो देवताओं का विस्तार होता है वह कोण से बराबर मिलता है।
प्लाट के प्रवेश द्वार के पास में ही बैठक का कमरा बनाए, (ड्राईंग रूम)
बैठक कक्ष के बाद में लीविंग के लिए अलग से स्थान हो तो वह बनाए,
इसके पश्चात भोजनशाला (डाईनिंग कक्ष), व रसोई घर हो।
वहीं दूसरी ओर स्नान आदि के कक्ष हो।
सबसे अन्त से शयन कक्ष हो।
एक से अधिक शयन कक्ष हों तो दक्षिण दिशा, नैर्ऋत्य कोण, पश्चिम दिशा में शयन कक्ष उचित हैं।
आयादि का ध्यान रख्रें-

प्लाट का आयादि,

अलग-अलग कमरों का आयादि

दीवार का आयादि

व्यक्ति के अनुसार कौन सी आय लेना।

व्यक्ति के अनुसार पूरे प्लाट आयादि करना-आय, व्यय, योनि, नक्षत्र।

जो भी कमरे हमने बनाए, उनका मान विषम इंच में लें। जैसे किसी कमरे की लम्बाई ११फीट ३ इंच अर्थात् कुल १३५ इंच हुए यह विषम हैं अतः शुभ है।

इसी प्रकार यदि कमरे की चौड़ाई १० फीट ४ इंट है तो कुल १२४ इंच चौड़ाई हुई। यह सम संख्या है, तो चौड़ाई १२५ इंच या १२३ इंच लें। इससे कमरे की आय शुभ होगी।

आय विचार-

सबसे पहले पूरे प्लाट के लिए आय विचार करें।

उसके पश्चात पूरे घर के लिए आय दें।

अलग-अलग कमरे के लिए अलग-अलग आय दे सकते हैं।

आय विचार का आधार-

दिशा के अनुसार

कमरे के उपयोग के अनुसार-

यहाँ हम कमरे के उपयोग के अनुसार आय का विचार करेंगे।

ड्राईंग रुम आय शुभ आय १, ७

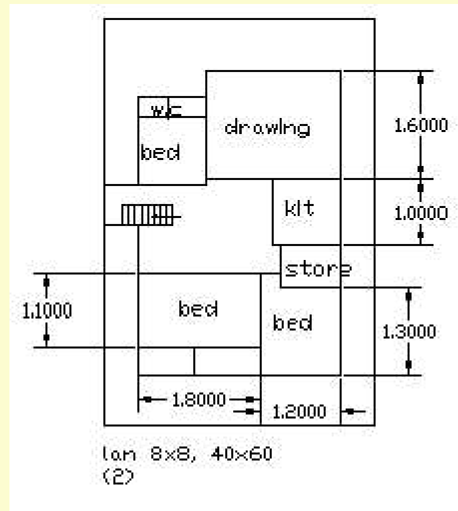
बेड रुम शुभ आय ७

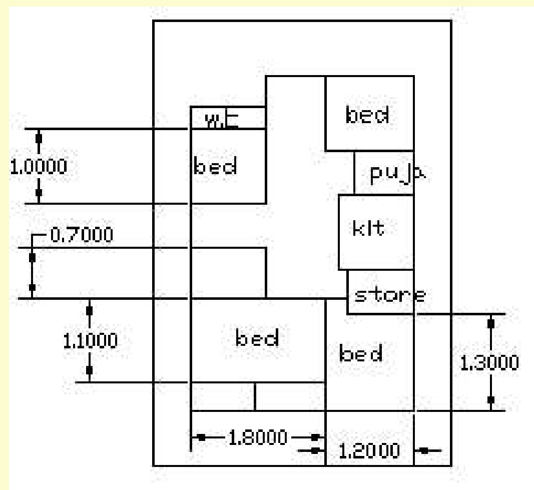
पूजा कक्ष शुभ आय १

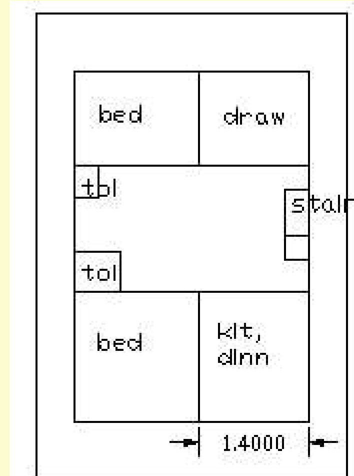
रसोई १, ५,

घर में ध्वज व गज आय शुभ है।

सिंह आय के स्थान पर गज या अन्य आय शुभ नहीं है।


w.c
drawing
bed
kit
1.6000
1.0000
store
bed
bed
1.1000
1.3000
1.8000
1.2000
lan 8x8, 40x60
(2)


bed
w.c
bed
puja
1.0000
kit
0.7000
store
bed
bed
1.1000
1.3000
1.8000
1.2000


bed
draw
toi
stair
toi
bed
kit,
dinn
1.4000

इकाई- ४२

ड्राईंग रुम

कमरे की उपयोगिता तथा बैठक व्यवस्था

ड्राईंग रुम अर्थात बैठक का कमरा यह वह कमरा है जिसमें हम मेहमान का स्वागत करते हैं। वार्तालाप करते हैं। यह कमरा प्रवेश के पास नजदीक होना चाहिए तथा अन्य कक्ष मे इसका हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। बैठने की व्यवस्था इस प्रकार हो कि सभी व्यक्ति एक दूसरे को बाधित किए बिना, आराम से बैठ सकें।

इस कमरे में प्राकृतिक प्रकाश तथा हवा उचित मात्रा में आना चाहिए। कमरे में अंधेरापन नहीं होना चाहिए।

आकार

ड्राईंग रुम के लिए आयताकार शुभ है। इसकी लम्बाई चौड़ाई से १.६ गुना अधिक होना अत्यन्त शुभ है। अर्थात् यदि कमरे की चौड़ाई १० फीट हो तो उसकी लम्बाई १६ फीट होना चाहिए।

आयादि

कमरे की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई आयादि के सूत्र के अनुसार हो या विषम अंगुल या विषम हस्त में होना चाहिए। खिड़की, दरवाजे की चौखट, अलमारी की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई व गहराई विषम अंगुल में होना चाहिए। इसी प्रकार बैठने की सीट, सोफा इत्यादि की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई विषम अंगुल में होना चाहिए।

गृहस्वामी का मुख

यथा संभव गृहस्वामी उत्तर दिशा की ओर या पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठें।

प्लानिंग

कमरे में हवा व प्रकाश की पर्याप्त व्यवस्था के लिए खिड़की व रोशनदान होना चाहिए। ड्राईंग रुम बहुत अधिक सामान से भरा हुआ नहीं होना चाहिए। उसमें आवश्यकता के अनुसार लोगों के बैठने की व्यवस्था हो। उसमें आवश्यकतानुसार सेन्ट्रल टेबल, साईड टेबल, डिस्प्ले रेक व अन्य सामान हों। कालीन इत्यादि का प्रयोग सुन्दरता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

फोन, टी.वी. आदि सुविधाजनक स्थान पर हों। फोन घर के व्यक्ति एक दूसरे को बाधित किए बिना आराम से सुन सकें।

इसी प्रकार टी.वी. भी बगैर बाधा के देखा जा सके।

टी. वी. मुख्य, भल्लाट, सोम व मृग के पद में शुभ है। इसे गन्धर्व के पद में रखा जा सकता है। मनोरंजन के अन्य सामान जैसे म्यूजिक सिस्टम, वी. सी. आर. आदि भी इन्हीं पदों में शुभ हैं।

लाईट की व्यवस्था व दिशा इस प्रकार हो की वह आँखों को न चुभे।

आन्तरिक सज्जा

इसकी आन्तरिक सज्जा शान्त व मनोहारी हो एवं वह गृहस्वामी की रुचि का प्रदर्शन करती हो। यह मित्रता का भाव लिए हुए हो।

इस कमरे में पानी से भरा हुआ कलश रखा जा सकता है। इससे पूर्णता का बोध होता है। कलश ताम्बें या चाँदी का बना हुआ शुभ है। इस पानी का छिड़काव अगले दिन घर में करने के उपरान्त कलश को साफ कर पुनः पानी भर ऐसे स्थान पर रखना चाहिए, जहाँ से वह आते-जाते समय दिखाई दे।

इन्डोर प्लान्टस्

कमरे में इन्डोरप्लान्टस का उपयोग किया जा सकता है। परन्तु इस बात की विशेष सावधानी रखना चाहिए कि लगभग सभी प्लान्टस रात्रि में कार्बन डायऑक्साईड गैस को उत्सर्जन करते हैं, निकालते हैं, छोड़ते हैं। अतः इस प्रकार की व्यवस्था हो कि वह गैस घर से बाहर जा सके तथा घर में रहने वाले व्यक्तियों के स्वास्थ्य को प्रभावित न करे।

रंग

कमरे में सफेद, क्रीम या हल्के पीले (सुनहरे रंग) का प्रयोग करना शुभ होता है। इस कमरे में लीपिंग, बार्डर आदि पर सुनहरे रंग का प्रयोग कर उसे सुन्दर बनाया जा सकता है।

पेलमेट, पर्दे तथा फ्लोरिंग उचित रंग का हो, इसमें काले, ग्रे व नीले रंग का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

छत में विभिन्न प्रकार का कार्य जैसे प्लास्टर ऑफ पेरिस का कार्य करवा कर, किनारे पर गोलची (मोल्डिंग) आदि बनवाकर सुसज्जित किया जा सकता है।

इसी प्रकार दीवार पर भी कार्य कर, पेन्टिंग आदि से सुन्दरता बढ़ाई जा सकती है।

फर्नीचर पर हल्के रंग या नेचलर पॉलिश करवाना शुभ होता है। अस्तु।

प्रश्न-

ड्राईंग रुम कहाँ होना चाहिए?

ड्राईंग रुम की लम्बाई व चौड़ाई का अनुपात क्या होना चाहिए?

गृह-स्वामी किस दिशा की ओर मुख करके बैठे?

क्या ड्राईंग रुम से घर का भीतरी भाग जैसे शयन-कक्ष दिखना चाहिए?

ड्राईंग रुम प्रवेश द्वार के पास होना चाहिए या दूर होना चाहिए?

ड्राईंग रुम के लिए शुभ रंग कौन-कौन से हैं?

इकाई ४३

भोजनकक्ष

भोजनकक्ष वह स्थान है जहाँ बैठकर व्यक्ति अपने परिवार के साथ भोजन करता है। यह कमरा शान्त व मनोरम होना चाहिए। इस कमरे में प्राकृतिक प्रकाश व हवा की उचित मात्रा में व्यवस्था होना चाहिए। यह कक्ष रसोईघर के पास या नजदीक होना चाहिए।

यदि संभव हो तो यह कक्ष अतिथिकक्ष (ड्रॉईंग रुम से पृथक (अलग) होना चाहिए।

ड्राईंग रुम व डाईनिंग रुम के बीच में पर्दा होना चाहिए। यह कक्ष टायलेट (शौचालय) के एकदम नजदीक नहीं होना चाहिए।

यह कक्ष घर की दक्षिण दिशा, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य या ईशान कोण मे हो सकता है। यदि यह संभव न हो तो डायनिंग हॉल के कमरे की या रसोई कक्ष की इस दिशा से इस दिशा में (टेबल आदि) हो सकते हैं, क्योंकि सामान्य रुप से हम रसोईघऱ पूर्व या उत्तर दिशा में बनाते हैं।

पद के अनुसार देखें तो यह कक्ष यम, वरुण, इन्द्र या महेन्द्र के पद में हो सकता है।

आकार-आयताकार शुभ है।

आयादि- कमरे की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई विषम अंगुल में होना चाहिए।

रंग- इस कमरे में हल्के रंग का प्रयोग करना चाहिए। काले, गहरे नीले रंग का प्रयोग न करें।

टेबल तथा कुर्सी की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई विषम अंगुल में होना शुभ है।

इस कक्ष में प्रकाश की उचित व्यवस्था हो। हल्के रंग का प्रयोग करें। इस कमरे की आन्तरिक सज्जा इस प्रकार से हो कि व्यक्ति आनन्द के साथ भोजन कर सके, उसे पूर्ण भूख़ लगे, ख़ाने की इच्छा हो।

इस कमरे की दीवार को निम्न प्रकार से चित्र आदि के द्वारा सजाया जा सकता है-

सोने, चाँदी, मणि इत्यादि के बर्तन में खाने-पीने के पदार्थ (फल एवं पेय पदार्थ) रखे हों।

कमल के फूल व पत्ते बिछे हुए हों।

इस कमरे में करुण रस (रोना, दया आदि) एवं वीभत्स रस के चित्र नहीं होना चाहिए।

यदि संभव हो तो खान-पान के पात्र (बर्तन) आदि का रेक इस कक्ष में बनाया जा सकता है। इस कक्ष में उचित स्थान पर फ्रीज रखा जा सकता है।

भोजन करने के नियम-

भोजन से पूर्व व पश्चात हाथ एवं मुँह अवश्य धोना चाहिए।

जूते व चप्पल आदि पहन कर भोजन नहीं करना चाहिए।

भोजन करने से पहले भगवान को भोग लगाकर, प्रसाद के रूप में भोजन को ग्रहण करना चाहिए।

थाली में झूठन छोड़ना अशुभ होता है।

यदि संभव हो तो पूर्व दिशा की ओर मुख करके भोजन करना चाहिए।

मर्म स्थान पर बैठकर भोजन नहीं करना चाहिए।

अन्य- उचित दिशा एवं स्थान पर एवं डाईनिंग टेबल से दूर हाथ धोने के लिए वॉशबेसिन होना चाहिए। वहीं पर दर्पण, साबुन व हाथ पौछने के लिए साफ नेपकीन होना चाहिए।

कुल मिलाकर यह कमरा मनोहरी हो तथा इस प्रकार का हो कि व्यक्ति वहाँ बैठकर शान्तिपूर्वक भोजन कर सके। अस्तु

इकाई

पूजा घर

पूजा का स्थान सामान्य रूप से घर के पूर्वी या उत्तरी भाग में होना शुभ होता है। उत्तर मुख तथा पूर्व मुख वाले घर के लिए ईशान कोण एक आदर्श स्थान है। इसके अतिरिक्त पूजा घर ऐसे स्थान पर हो जहाँ व्यक्ति पूजा, अर्चना, ध्यान आदि शान्तिपूर्वक कर सके। पूजन करते समय पूजा करने वाले का मुख पूर्व दिशा की ओर होना चाहिए। (अलग-अलग प्रकार की साधना में मुख अन्य दिशा में हो सकता है।) पूजन गृह में यथासंभव कम मूर्तियाँ होना चाहिए। सभी मूर्तियाँ चल अवस्था (एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जा सके, जिन्हें हिलाना डुलाना संभव हो) में होना चाहिए।

मूर्ति की अधिकतम ऊँचाई ९ इंच हो सकती है।

ध्यान के लिए कुश के आसन का प्रयोग करना चाहिए।

पूजन के वस्त्र अलग हों तो शुभ है।

पूजन प्रतिदिन एक निश्चित समय पर करना चाहिए, सुबह पूजन करना शुभ है।

भगवान को प्रतिदिन नैवेद्य (भोग) लगाना चाहिए।

पूजा के कमरे में नीले, काले, ग्रे रंग का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

पूजन का स्थान या कमरा रात्रि में पल्ले (किवाड़) या पर्दे से ढक देना चाहिए।

इकाई ४५

बेडरूम या शयन कक्ष

वास्तुशास्त्र में शयन कक्ष को बहुत महत्व दिया गया है। इसी कक्ष में व्यक्ति दिनभर कार्य करने के उपरान्त ८-१० घन्टे आराम कर तरोताजा होता है। यह कमरा अन्य कमरों की अपेक्षा अधिक सुव्यवस्थित व मनोहारी होना चाहिए।

यह कमरा यथा संभव फ्रन्ट में न हो तथा दक्षिण, नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में हो। यदि यह संभव न हो तो जहाँ भी शयन कक्ष हो उस कमरे की दक्षिण, नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में पलंग हो।

सोते समय सिरहाना दक्षिण दिशा की ओर हो। इससे समृद्धि आती है, जबकि बच्चे एवं वृद्ध पूर्व दिशा की ओर सिर करके सो सकते हैं। इससे शान्ति मिलती है।

यह शयन कक्ष ब्राह्मण के लिए भल्लाट, मृग पद में, वैश्य के लिए वरुण, असुर, नाग, मुख्य, पर्जन्य व सोम के पद में, क्षत्रियों के लिए गन्धर्व, भृंगराज, अन्तरिक्ष, मृग पद में तथा शूद्रों के लिए वरुण, असुर, नाग, मुख्य, पर्जन्य, सोम पद में होना चाहिए।

(यहाँ प्लाट की फेसिंग के अनुसार बेडरूम का स्थान दिया है, दूसरा किस प्रकार के गुण विकसित करने में किस दिशा या पद में बेडरूम होना चाहिए यह बताया है।)

इसके अतिरिक्त उत्तर, दक्षिण, नैर्ऋत्य व वायव्य दिशा में शयन कक्ष हो सकता है।

नवविवाहित युगल के लिए शयन कक्ष उत्तर से वायव्य दिशा के बीच में बनवाना चाहिए। जबकि अन्य व्यक्ति के लिए उत्तर दिशा की दीवार से पलंग टच करना अशुभ होता है।

पुत्र का शयन कक्ष सवित्र व सावित्र के पद में शुभ है। पुत्री का शयन कक्ष रुद्र, रुदजय पद में शुभ कहा है।

शयन कक्ष इस प्रकार व दिशा में बनाया जाए कि उसकी (कक्ष की) प्रायवेसी अफेक्ट न हो।

शयन कक्ष की आन्तरिक सज्जा, रंगों का चयन, पेन्टिंग, सीलिंग, लाईट, पर्दे, बेडशीट, पलंग की डिजाईन, कारपेट, फ्लोरिंग, फर्नीचर की की डिजाईन इस प्रकार की हो वह पति-पत्नि के परस्पर प्रेम को बढ़ाती हो।

कमरे का रंग सुन्दर व मनोहारी हो, उस कमरे में दो-तीन चित्र लगे हो जो श्रृंगार रस से पूर्ण हो, उसमें मिथुन इत्यादि के चित्र भी लगाए जा सकते हैं।

शयन कक्ष में रोना नहीं चाहिए। इससे कमरे की ऊर्जा बिगड़ती है।

पलंग के नीचे शल्य आदि होने से बुरे स्वप्न आते हैं।

बीम के नीचे नहीं होना चाहिए।

नग्न होकर नहीं सोना चाहिए।

जूठे मुखनहीं सोना चाहिए।

गीले कपड़े पहनकर नहीं सोना चाहिए।

पलंग से दर्पण सीधा-सीधा न दिखता हो। यदि दिखे तो सोते समय पर्दे से ढक देना चाहिए।

कमरे की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई आयादि के सूत्र के अनुसार हो या विषम अंगुल या विषम हस्त में होना चाहिए। लम्बाई व चौड़ाई का गुणाकर आठ से भाग देने पर शेषफल यदि सात आए तो अत्यन्त शुभ होता है। (सावधानी-लम्बाई व चौड़ाई का मान हस्त या अंगुल में ही लेना चाहिए।)

उसमें खिड़की, दरवाजे की चौखट, अलमारी की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई व गहराई विषम अंगुल में होना चाहिए।

कमरे में रोशनदान होना चाहिए।

चौखट व पल्ले में यथासंभव लोहे का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसके लिए कब्जे, स्क्रू, हेन्डल, स्टापर, चिटखनी इत्यादि ताम्बे की बनी हुई हो।

इकाई ४६

जल विचार

दिशा व प्रभाव

आकार व प्रभाव

आय विचार

जलाशय मुहूर्त्त

मासानुसार

नक्षत्रानुसार

तिथि अनुसार

लग्नानुसार

महत्व

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में जल स्थान का बड़ा महत्व प्रतिपादित किया गया है। उसके स्थान, आकार, मुहूर्त्त आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

जल स्थान शुभस्थान पर होने पर शुभ प्रभाव उत्पन्न होता है, जबकि अशुभ स्थान पर हो तो अशुभ प्रभाव उत्पन्न होता है।

वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों में यह भी बताया है कि जब प्लाट या भवन बहुत बड़ा हो तो जहाँ-जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ-वहाँ जल स्थान बनवाना चाहिए।

शास्त्र में जल के लिए जो शुभ स्थान बताया है वह कोई भी जल स्थान जैसे कुआँ, भूमिगत पानी की टंकी आदि हो सकता है।

दिशा

पूर्व, ईशान या उत्तर दिशा जल स्थान के लिए शुभ है।

पद

ईश, पर्जन्य, जयन्त, महेन्द्र, भूधर, सोम, आप, आपवत्स, वरुण के पद में जल स्थान शुभ है।

सावधानी-बोरिंग कर्ण (प्लाट के डायगोनल) पर नहीं होना चाहिए।

आयादि

जितनी बड़ी पानी की टंकी बनवाना हो, उसकी लम्बाई व चौड़ाई को हस्त से नापकर विषम संख्या में ले। इससे शुभ आय आती है।

आकार

शुभ- चौकोर आकार शुभ है।

गोल व त्रिकोणाकार जलस्थान भी शुभ होता है।

मध्यम

धनुषाकार जलस्थान मध्यम होता है।

कलश, पद्म (कमल) के समान आकार वाला जलस्थान मध्यम होता है।

अशुभ आकार

सर्पाकार जलस्थान अशुभ होता है।

मुहूर्त्त

किसी भी जलस्थान का निर्माण करते समय मुहूर्त्त का विचार अवश्य करना चाहिए।

मासानुसार

जलाशय निर्माण के लिए वैशाख्र, श्रावण, मार्गशीर्ष तथा फाल्गुन मास शुभ है।

नक्षत्रानुसार

अधोमुख्र नक्षत्र (मूल, आश्लेषा, मघा, तीनों पूर्वा, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, विशाख्रा, भरणी व कृतिका) नक्षत्र में जब चन्द्रमा हो तब जलाशय निर्माण प्रारंभ करना चाहिए।

अन्य विचार से शुभ नक्षत्र

रोहिणी, उतराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य, अनुराधा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा व श्रवण।

वारानुसार

रविवार, मंगलवार व शनिवार को छोड़कर शेष सभी वार शुभ हैं।

तिथि-

रिक्ता तिथि (चतुर्थी, नवमी व चौदस) को छोड़कर अन्य तिथि शुभ है। अमावस्या को जलाशय निर्माण नहीं करना चाहिए।

चन्द्रमा-

जलचर राशि (कर्क, वृश्चिक व मीन) में चन्द्रमा हो तो शुभ होता है।

लग्न विचार

केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थान में सौम्य ग्रह (गुरु, शुक्र) शुभ हैं।

३, ६, ११ भाव में क्रूर ग्रह (मंगल, शनि, सूर्य) शुभ फल देते हैं।

गर्भ स्थापना-

पानी में चाँदी के बने हुए कछुआ, मगर, सर्प, मछली व केकड़ा डालना चाहिए। इसमें शिलान्यास का विधान भी बताया गया है। इस प्रकार से मुहूर्त्त के अनुसार उचित स्थान पर विधिविधान से जल स्थान बनवाना चाहिए।

पदार्थ

मिट्टी, ताम्बा, चाँदी, सोने से बने बर्तन में जल रखना शुभ होता है। चाँदी, सोने से बने बर्तन में जल भर कर रखें। बाद में उस जल का छिड़काव घर में करना भी शुभ होता है। इस जल से स्नान करना, पीना आदि भी अत्यन्त शुभ होता है।

दिशा	**परिणाम**
ईशान	पुत्रवृद्धि
पूर्व	पुत्र को कष्ट (सूर्य का पद)

आग्नेय	अग्नि भय
दक्षिण	विनाश
नैर्ऋत्य	स्त्री कलह
पश्चिम	दुष्टता
वायव्य	निर्धनता
उत्तर	धनलाभ

श्री

अध्ययन कक्ष

अध्ययन कक्ष वह स्थान है जिस स्थान पर बैठकर हम अध्ययन करते हैं। यह स्थान **शान्त** होना चाहिए। यह कमरा नैर्ऋत्य कोण व पश्चिम दिशा के मध्य होना चाहिए। यदि यह संभव न हो तो जिस कमरे में बैठकर अध्ययन करते हों उस कमरे की पश्चिम दिशा में बैठकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके अध्ययन करना चाहिए।

यह कमरा महेन्द्र, भृश, विवस्वान के पद में हो सकता है। इस स्थान पर बैठकर उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुख करके पढ़ना चाहिए।

आयादि

इस कमरे की लम्बाई व चौड़ाई इस प्रकार हो कि लम्बाई में चौड़ाई का गुणाकर आठ से भाग देने पर शेषफल एक आए तो अध्ययन शुभ होता है। (सावधानी-लम्बाई व चौड़ाई हस्त में लेना चाहिए।)

रंग

कमरे में हल्के रंग का प्रयोग करना चाहिए। इस कमरे में काले, गहरे नीले रंग का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

गन्ध

इस कमरे में इस प्रकार की गन्ध का प्रयोग कर सकते है जिससे एकाग्रता बढ़ती हो। विशेष प्रकार के पदार्थ का तिलक आदि लगाकर एकाग्रता को बढ़ाया जा सकता है।

आन्तरिक सज्जा

कमरे की आन्तरिक सज्जा इस प्रकार की हो कि वह एकाग्रता को बढ़ाने में सहायक हो। इस कमरे में सरस्वती देवी, गणेश जी, ग्रन्थ आदि की फोटो या चित्र लगाए जा सकते हैं।

जो लक्ष्य निर्धारित किया हो, उसका चित्र भी लगाया जा सकता है।

इस कमरे में यथा संभव मनोरंजन के साधन व चित्र नहीं होना चाहिए।

प्रकाश की व्यवस्था इस प्रकार हो कि पढ़ते समय किताब, कापी इत्यादि पर छाया न पड़े।

शौचालय

आजकल प्रायः सभी घरों में शौचालय बनाए जाते हैं। आधुनिक घरों में शयन कक्ष के साथ शौचालय भी होता है, जिसे अटेच्ड टायलेट के नाम से जानते हैं।

प्राचीन समय में यह स्थान घर से दूर दक्षिण दिशा में होता था।

शौचालय घर की दक्षिण दिशा एवं नैर्ऋत्य कोण के मध्य होना चाहिए। यह यम से वायु के पद के बीच अर्थात् दक्षिण दिशा के मध्य से वायव्य कोण के बीच हो सकता है।

यह स्थान कमरे से इन दिशा या पद में हो सकता है।

किसी भी स्थिति में शौचालय का निर्माण मर्मस्थान, ब्रह्मस्थान एवं अग्नि के पद में नहीं होना चाहिए।

शौचालय हवादार हो, उसमें रोशनदान अवश्य हो। रोशनदान खुले स्थान या साईड़ गली में खुलता हो।

शौचालय का दरवाजा अन्दर से पानी द्वारा खराब न होना वाला (वाटर प्रूफ) हो। उसका निचला भाग या हिस्सा एल्यूमिनियम शीट या प्लास्टिक से ढका हो सकता है। पल्ले के ऊपरी भाग में कांच लगा हो।

टॉयलेट का दरवाजा उपयोग करने के लिए आते-जाते समय के अतिरिक्त बन्द रहे। नल इत्यादि (फ्लश वॉल्व) में लिकेज न हो (अर्थात वे टपकते न हों।)

यह पूर्णतः स्वच्छ हो उसमें किसी भी प्रकार की बदबू इत्यादि न आती हो। नियमित रूप से दुर्गन्ध नाशक (जैसे फिनाइल आदि) का प्रयोग करें।

आवश्यकता हो तो शौचालय के अन्दर सामान रखने के लिए छोटा बॉक्स बनवाया जा सकता है।

शौचालय में कपड़े इत्यादि नहीं लटकाना चाहिए।

सेप्टीक टेंक

वैसे तो शहरों में ड्रेनेज सिस्टम की व्यवस्था होती है या रहती है। फिर भी यदि कहीं यह व्यवस्था न हो तो वहाँ सेप्टीक टेंक बनाए जाते हैं।

सेप्टीक टेंक बिल्ट-अप के नीचे न हों।

यह प्लाट के पश्चिमी भाग में हो।

इसके ऊपर शयन कक्ष, ड्राईंग रुम, रसोईघर, पूजन स्थल इत्यादि न हो।

यह प्लाट के या बिल्ट-अप के मर्म स्थान, ब्रह्मस्थान या अग्नि के पद में बिल्कुल न हो।

यथा संभव यह मुख्य द्वार के पास भी न हो।

इकाई ५०

चढाव सीढ़ी

चढ़ाव चढाव अर्थात सोपान का प्रयोग एक मंजिल से दूसरी मंजिल पर जाने के लिए करते हैं।

यह चढ़ाव उचित स्थान पर होना चाहिए। मानसार ग्रन्थ में कहा है कि चढ़ाव सभी दिशा में तथा सभी कोण में बनवाया जा सकता है।

चढ़ाव उचित स्थान पर हो, भवन के प्रवेश द्वार के बाजू में हो, यह सामने भी हो सकता है, प्रवेश द्वार के नजदीक होना चाहिए।

तल मंजिल पर रहनेवाले व्यक्ति को असुविधा न हो।

सीढियाँ प्रदक्षिण क्रम से (क्लाकवाईज) घूमना चाहिए। ऊपर चढ़ते समय दाहिनी ओर घूमना चाहिए। सीढ़ियों की विषम होना चाहिए। सीढ़ियों की चौड़ाई तीन फीट से अधिक हो तो उत्तम होता है। यह विषम अंगुल में होना चाहिए।

सभी सीढ़ियों की ऊँचाई समान होना चाहिए। यह ७ इंच शुभ है।

सीढ़ी की गहराई लगभग ११ इंच होना चाहिए, सभी सीढ़ी की गहराई समान होना चाहिए।

यदि सीढ़ियों की संख्या १३ से अधिक हो तो बीच में लेन्डिंग (ठहरने के लिए स्थान) होना चाहिए। इस लेन्डिंग पर सीढ़ी (कली) नहीं होना चाहिए।

सोपान (चढ़ाव) पर हवा व प्रकाश की उचित व्यवस्था होना चाहिए।

चढ़ाव की रेलिंग को हाथी की सूँड से सजाया जा सकता है।

चढ़ाव के नीचे टायलेट न हो।

चढ़ाव मर्म स्थान पर न हो।

चढ़ाव के नीचे पूजा स्थान न हो।

इकाई ५१

बाथरुम

यह घर की पूर्वी दिशा या उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए।

शौचालय व स्नानगृह अलग-अलग हो तो अच्छा है।

इसमें प्राकृतिक हवा व प्रकाश उचित मात्रा में आना चाहिए।

यथासंभव पूर्व दिशा की ओर मुख करके स्नान करना चाहिए।

यह स्थान साफ-सुथरा होना चाहिए। इसकी जमीन पर पानी तथा साबुन आदि ढुला हुआ नहीं होना चाहिए।

नानी ट्रेप (पानी निकलने के लिए रास्ता) दरवाजे से विपरीत दिशा में होना चाहिए।

नल इत्यादि लिकेज न करें।

शॉवर का पानी दरवाजे पर न गिरता हो।

दरवाजा या तो वॉटर प्रूफ हो या उसका निचला भाग प्लास्टिक या एल्यूमिनियम की शीट से ढका हो।

बाथरुम में कपड़े लटकाने के लिए खूँटी होना चाहिए। उसमें बाशबेसिन हो सकता है।

धातु (ताम्बा, चाँदी आदि) के बर्तन में रखे जल से स्नान करना शुभ होता है। यदि इन धातुओं के बर्तन न हो तो इन धातुओं के लोटे से स्नान करना चाहिए। यदि यह भी संभव न हो तो इन धातुओं को पानी में डाला (रखा) जा सकता है।

सूर्योदय से पूर्व स्नान करना अत्यन्त शुभ होता है। अस्तु

पाठ ५२

आन्तरिक सज्जा

आन्तरिक सज्जा-इन्टीरियर डेकोरेशन

पाठ परिचय- इस पाठ में हम आन्तरिक सज्जा को देखेंगे।

जैसा कि हम जानते है कि हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रिय होती है इनमें से आँख प्रमुख है तथा आँख से हम आकार एवं रंग देखते हैं। इन्हीं के विभिन्न संयोजन से चित्र बनता है। ये चित्र मानस पटल पर सूक्ष्म रूप से बड़ा ही गहरा प्रभाव डालते हैं। अतः घर या ऑफिस की आन्तरिक सज्जा करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि आन्तरिक सज्जा इस प्रकार की हो वह कार्य में सहायक हो।

आन्तरिक सज्जा का निर्धारण निम्नलिखित आधार पर किया जा सकता है-

नाट्यगृह

एक्जीबीशन हॉल

रेस्ट्रॉ

हेल्थ क्लब,

ब्यूटी पार्लर

स्वीमिंग पूल इत्यादि

घर

ऑफिस

फैक्ट्री, मंदिर आदि

व्यक्ति की आयु

व्यक्ति का लक्ष्य

कमरा किस उपयोग में लेते हैं, जैसे ड्राईंग रूम, बेड रूम

यह जो आन्तरिक सज्जा है उसका चित्त पर, मन की अन्तर्तम गहराई पर बड़ा गहरा असर पड़ता है, अतः रंग तथा चित्र की विषयवस्तु का चयन सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

प्रतीक विद्या के अनुसार ये जो रंग होते हैं ये विभिन्न गुण को विकसित करने में या डेवेलप करने में सक्षम होते हैं। हर रंग का अपना एक गुण होता है। जैसे सफेद रंग ज्ञान, कीर्ति, शान्ति व मोक्ष को व्यक्त करता है, प्रकट करता है, प्रदर्शित करता है अर्थात यह रंग इन गुणों को विकसित करने में सहायता करता है।

रंगों के अतिरिक्त भी बहुत सी चीजें है जो अन्य बातों को प्रदर्शित करती है, जैसे दण्ड शासन को व्यक्त करता है तो शुक (तोता) ज्ञान को प्रदर्शित करता है। इस प्रकार से अनेकानेक बातें जो की चित्र की विषयवस्तु होती है मनुष्य के मन को प्रभावित करती है।

प्रतीक विद्या चित्र व प्रतीक-चित्र की विषयवस्तु मूल रुप से मन पर गहरा असर छोड़ती है जैसे सूखा वृक्ष, बगैर शाखा व पत्ते वाला वृक्ष, बगैर फूल-फल वाला वृक्ष हमें निराशा के अलावा क्या दे सकता है।

भीषण युद्ध के चित्र, हिंसक पशु-पक्षी के चित्र, उनकी मूर्तियाँ आक्रमक योद्धाओं के चित्र, व्यक्तियों पर अत्याचार एवं शोषण करने वाले चित्र हिसंक प्रवृत्तियों को ही बढ़ावा देते हैं।

जिन चित्रों में झूला दिखाया गया है वह सामान्य रुप से अस्थिरता को जन्म दे सकता है। अब यहाँ हमें लोक परम्परा को भी ध्यान रखना पड़ता है जैसे गुजराती परिवारों में झूला सामान्यतः घरों में पाया जाता है तो वहाँ यह दोषकारक नहीं होता है।

इसी प्रकार ढाल, तलवार या अन्य अस्त्र-शस्त्र के चिह्न जिनका सामान्य रुप से निषेध किया गया हो, योद्धा के ड्राईंग रुम या युद्ध से सम्बन्धित अन्य स्थल पर शुभ हैं क्योंकि ये ऊर्जा को बढ़ाते हैं।

घरों में सामान्य रुप से हास्य व श्रृंगार रस के अलावा अन्य किसी भी रस का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

घरों में निम्नलिखित चित्र एवं मूर्तियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए-

सभी देवता

दैत्य

ग्रह

तारा, गन्धर्व, पिशाच, पितृ, सिद्ध, विद्याधर, नाग, चारण, भूतसंघ तथा उनकी

स्त्रियाँ व पुत्र, अस्त्र-शस्त्र

इसके अलावा दीक्षित, व्रती, पाखंडी, नास्तिक, भूख से व्याकुल, रोगी, बेडियों में बँधा हुआ, आग, तेल, खून, कीचड़, धूल, बुखार आदि से पीड़ित, पागल, जड़, नग्न, नेत्रहीन, बहरा।

इसके अलावा झूला-झूलने, हाथी की लड़ाइयाँ, देवताओं के युद्ध, राजाओं की लड़ाइयाँ, प्राणियों का युद्ध, शिकार,

रस में ऐसे चित्र जिनमें रौद्र, दीन, अद्‌भुत या करुण व वीभत्स रस हो घर में नहीं लगवाना चाहिए।

घर में हास्य व श्रृंगार को छोड़कर अन्य रस का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त हाथी से चलने वाले वाहन, घोड़े से चलने वाले वाहन, आग से जलते हुए भवन भी नहीं लगवाना चाहिए।

वृक्ष (ऐसे चित्र नहीं लगवाना चाहिए)-

जिसमें फूल व फल न हों।

जो सूखा हो।

जो भग्न हो।

जो काँटेवाला हो।

जिस पर भूत आदि का निवास हो।

पक्षी-

गीध (गिद्ध), उल्लू, कबूतर, बाज, कौवा, रात्रि में उड़ने वाले

प्राणी-

जंगली हाथी, जंगली घोड़ा, भैंसा, ऊँट, बिल्ली, गधा, बन्दर, सूअर, हिरण, सियार, माँसभक्षी

रोते हुए, चिखते हुए, चिल्लाते हुए ऐसे फोटो शुभ नहीं है।

अब किन चित्रों का या मूर्तियों का प्रयोग करना चाहिए उसका उल्लेख करते हैं। आन्तरिक सज्जा का चयन कमरे के अनुरूप होना चाहिए, जैसे डाईनिंग रूम में जो चित्र आदि हो वे इस प्रकार के हो कि उसमें खाने-पीन के भोज्य पदार्थ अच्छे सुन्दर सोने चाँदी के बर्तन में हो जो की रत्न जड़ित हो।

शयन कक्ष की आन्तरिक सज्जा श्रृंगार रस से युक्त तथा उसमें रोमांटिक फिलिंग आती हो।

अध्ययन कक्ष (स्टडी रुम) का आन्तरिक सज्जा विचारों में पवित्रता, अध्ययन, मनन, चिंतन के प्रति रुचि तथा श्रद्धा से भरी हुई हो।

इस प्रकार से कक्ष तथा उसकी उपयोगिता तथा व्यक्ति की रुचि के अनुसार आन्तरिक सज्जा का चयन किया जाना चाहिए।

आन्तरिक सज्जा में प्रयुक्त चित्र एवं मूर्ति इस प्रकार है।

चक्र जो कि गति का प्रतीक है, व्यक्ति में गति का संचार करता है अतः जहाँ व्यक्ति में अकर्मण्यता हो, अक्रियाशीलता या आलसीपन अधिक हो वहाँ चक्र का प्रयोग किया जा सकता है।

सामान्यतः **घोड़े** विशेष रूप से दौड़ते हुए महत्वकांक्षा का प्रतीक है। अतः जहाँ व्यक्ति महत्वकांक्षी न हो तथा पूर्ण युवा हो वहाँ इस प्रकार के चित्र का प्रयोग किया जा सकता है। इसी में इसी के विपरीत यदि व्यक्ति बहुत अधिक महत्वाकांक्षी हो और उसके कारण जीवन में डिप्रेशन या हताशा का अनुभव करता है और उसकी आन्तरिक सज्जा में यदि घोड़े हो तो हटा देना चाहिए।

कछुआ जिसे संस्कृत में कूर्म कहा गया है उपनिषद एवं अध्यात्मिक विद्या में कछुए का उदाहरण कई बार आया है। कछुआ धीमी गति से चलने वाला तथा लम्बी आयु जीने वाला प्राणी है। कछुआ आवश्यकता होने पर ही अपने अंगों को बाहर निकालता है, चलने, भोजन इत्यादि करने के लिए अन्यथा अपनी खोल या आवरण के भीतर ही अपने अंगों को समेटे रखता है। अतः कछुए का चित्र या मूर्ति देखकर हमें यह तुरन्त स्ट्राइक होना चाहिए कि हम भी अपनी ज्ञानेन्द्रियाँ आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा एवं हाथ पैर इत्यादि तथा कर्मेन्द्रिय का प्रयोग आवश्यकता होने पर ही करे अन्यथा स्व में आत्मा में स्थित रहे।

घर में निम्न प्रकार से आन्तरिक सज्जा करना चाहिए-

अपने कुल के देवी या देवता जो भी माने जाते हैं।

दरवाजा-

दरवाजे पर **प्रतिहारी** (द्वारपाल) जो कि सजे हुए (अलंकृत) हो, युवा हो, उन्होंने ने आभूषण आदि पहने हों तथा वे सुन्दर दिख़ते हों।

निधि-एक ऐसी देवी जो की शंख व कमल से चित्रित हो उनके मुख में से सोने के रत्न निकल रहें हो।

अष्टमंगला गौरी- गौरी का वह रूप जिसमें वे कमल के ऊपर बैठी हुई हैं, उनका शरीर रत्न व वस्त्र से विभूषित है, सजा हुआ है। उनके पास कलश है, उस कलश में फूल, फल व पत्तियाँ हैं। वे अंकुश, छत्र, नारियल, शीशा चामर से युक्त हैं। उन्होंने शंख व मछलियों की माला धारण कर रखी है। इन्हें द्वार पर लगवाना चाहिए।

लक्ष्मी- प्रवेश द्वार के बीच में हाथियों से स्नान कराई जानेवाली, कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी को बनवाना चाहिए। लक्ष्मी जी के हाथ में कमल है तथा वे खूब सजी हुई हैं।

ड्राईंग रुमः-

बसन्त ऋतु से संबंधित चित्र, हरे- भरे वृक्ष जिन पर फूल व फल हो,

पानी में मछलियाँ हो।

हंस व सारस हों।

सभी स्थान पर तोते, सरिकाएँ, मोर, मुर्गे शुभ हैं।

कमलिनी के पत्ते बिछे हो, इस प्रकार का चित्रण करना चाहिए।

डाईनिंग हाल- (भोजनकक्ष)-

डाईनिंग हाल में खाने-पीने के पदार्थ सोने व चाँदी के बर्तनों में रखें हों ऐसा चित्रण करना चाहिए।

शयन कक्ष (बेड-रूम)

बेडरुम में विचित्र आभूषण व वस्त्र धारण किए स्त्री व पुरुष, रतिक्रीड़ा में संलग्न नारियाँ,

स्त्रियों के शरीर की कान्ति (आभा) पीलापन लिए हुए हो, वे सुन्दर परन्तु कम आभूषण धारण किए हो, थोड़ी शर्म से हो।

पढ़ाई का कमराः-

इसमें सरस्वती जी का चित्र हो, पुस्तक, वेद आदि शास्त्र के चित्र हो, ज्ञान से संबंधित सामग्री व वस्तुएँ होना शुभ है।

इस प्रकार एक-एक जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, वनस्पति पेड़-पौधे आदि

सबका अपना एक सांकेतिक महत्व भी है जो कि मनुष्य के मन पर अपना शुभ या अशुभ प्रभाव छोड़ता है। अतः आन्तरिक सज्जा में इनका चयन व प्रयोग सावधानी पूर्वक करना चाहिए।

इकाई ५३

रसोई घर

स्थान, आयादि, रंग, आन्तरिक सज्जा विचार

रसोई घर एक महत्वपूर्ण कमरा है, जहाँ भोजन इत्यादि (खान-पान-नाश्ता) बनाया जाता है। पानी व अन्य खाने की वस्तुएँ रखी जाती है।

स्थान

यह कमरा ऐसे सुविधाजनक स्थान पर बनवाना चाहिए जहाँ प्रकाश व हवा की उचित व्यवस्था हो।

यह कमरा डाईनिंग हाल से लगा हुआ होना चाहिए तथा ड्राईंग रुम व लिविंग रुम से भी नजदीक होना चाहिए।

दिशा

यह कमरा घर की पूर्वी या उत्तरी दिशा में हो सकता है।

पद

ईश, सवित्र, अन्तरिक्ष, यम, अग्नि, पर्जन्य, वायु, ईशान कोण, सत्य, भृश।

आयादि

कमरे की लम्बाई, चौड़ाई आदि

इस कक्ष की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई आयादि के नियमों के अनुसार होना चाहिए। इस कक्ष में ध्वज आय देना शुभ होता है।

विभिन्न इकाई

इस कमरे में आवश्यकतानुसार प्लेटफार्म, सिंक, केबिनेट, क्राकरी यूनिट आदि होना चाहिए।

प्लेटफार्म

यह उत्तरी या पूर्वी दीवार की ओर हो तो शुभ होता है। इससे गृहणी का मुख पूर्व या उत्तर दिशा में होता है, जो कि शुभ है। सावधानी- यह सावधानी रखना चाहिए कि प्लेटफार्म इस प्रकार हो कि गेस का धुँआ गृहणी के शरीर के

ऊपर से न जाए (इससे श्वास के साथ धुआँ शरीर में जाने से व्यक्ति बीमार होता है, शरीर का तापमान बढ़ता है।)

प्लेटफार्म की लम्बाई व चौड़ाई विषम अंगुल या हस्त में होना शुभ है।

प्लेटफार्म की ऊँचाई गृहणी की ऊँचाई के अनुपात में होना चाहिए। जब गृहणी की ऊँचाई अधिक हो तो प्लेटफार्म अधिक ऊंचा तथा गृहणी की ऊँचाई कम होने पर प्लेटफार्म की ऊँचाई कम होना चाहिए।

प्लेटफार्म मजबूत पत्थर का बना हो। उस पर धब्बे आदि पड़ने पर आसानी से साफ किया जा सके।

प्लेटफार्म के ऊपर की दीवार को धब्बे से बचाने के लिए उस दीवार पर उचित ऊँचाई (लगभग डेढ से दो फीट तक) टाईल्स (सामान्य रूप से ग्लेज्ड टाईल्स) लगवाना चाहिए। इन टाईल्स पर रसोई घर से संबंधित चित्र अंकित (स्क्रीन प्रिन्ट) हो सकते हैं।

पानी

रसोई में पानी का स्थान रसोई कक्ष के ईशान कोण, पूर्व दिशा या उत्तर दिशा में हो सकता है।

सिंक

प्लेटफार्म के पास में ही सिंक हो। सिंक का उपयोग परिवार की पृष्ठभूमि के अनुसार हो।

फ्लेट में किचन में ही बर्तन माँजने की व्यवस्था करना होती है। अतः बर्तन माँजते समय जूठा पानी, पानी के छींटे प्लेटफार्म पर नहीं आना चाहिए। इसके लिए प्लेटफार्म व सिंक के बीच में खड़ा पत्थर लगवा सकते हैं।

कई स्थान पर जहाँ सुविधा हो तो प्लेटफार्म के पास में ही नीचे जूठे बर्तन धोने का स्थान बना सकते हैं।

यह संभव है कि कई घरों में रसोई घर में जूठे बर्तन न रखते हों, वहाँ रसोई घर के पास ही एक स्थान बर्तन माँजने का होना चाहिए।

आवश्यकता होने पर एक या दो सिंक रसोई घर में हो सकते हैं।

आन्तरिक सज्जा

इस कक्ष में कार्य करते समय अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता होती है, अतः इस कमरे की आन्तरिक सज्जा इस प्रकार हो कि उसमें कार्य करते समय व्यक्ति सतर्क हो, जागरुक हो, सावधान रहे।

फ्लोरिंग

किचन का फ्लोरिंग फिसलने वाला नहीं होना चाहिए। उस पर धब्बे आदि आसानी से न पड़े। वह साफ करने में सुविधाजनक हो।

रोशनदान

रसोई घर का धुआँ निकलने के लिए रोशनदान हो, यह रोशनदान खुले स्थान में खुलना चाहिए।

रंग

रसोईघर की दीवार पर हल्के रंग का प्रयोग करना चाहिए। रंग का निर्धारण रसोई घर की दिशा के अनुसार से भी कर सकते हैं।

इस कक्ष में काले, नीले या ग्रे रंग का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

फ्रीज

रसोई घर में यदि फ्रीज रखना हो तो अग्नि (बर्नर) से दूर रखना चाहिए। दीवार से कम से कम छह इंच दूर रखना चाहिए। उसके रेडिएयर की गर्म हवा आसानी से बाहर निकल सके।

स्टोरेज

रसोई का सामान, रसोई कक्ष के पास ही रखना चाहिए। यह इस कक्ष की उत्तर दिशा में हो सकता है।

प्रश्न- रसोई कक्ष किस दिशा में होना चाहिए?

प्रश्न-रसोई कक्ष में प्लेटफार्म किस दिशा में होना चाहिए?

प्रश्न-इस कक्ष मे किस रंग का प्रयोग करना चाहिए?

प्रश्न- प्लेटफार्म के ऊपर टाईल्स लगवाना चाहिए या नहीं?

प्रश्न-प्लेटफार्म की लम्बाई, चौड़ाई व ऊँचाई सम अंगुल में होना शुभ है

या विषम अंगुल में होना शुभ है?

प्रश्न-इस कक्ष में रोशनदान होना अत्यन्त आवश्यक है या नहीं?

श्री

पाठ ५४

गृहप्रवेश

पाठ परिचय- इस पाठ में हम गृह-प्रवेश विधि अर्थात गृह-निर्माण पूरा होने के बाद जब नवीन घर में पहली बार प्रवेश किया जाता है, उसकी विधि को देखेंगे।

गृह-प्रवेश मुहूर्त

उत्तरायण

दक्षिणायन

माह अनुसार फल विचार

पक्ष (शुक्ल-कृष्ण)

विधि

वास्तुशान्ति विधि

तिथि

वार

नक्षत्र

योग

करण

मुहूर्तः-

उत्तरायण

दक्षिणायन

माह अनुसार फल विचार

पक्ष (शुक्ल-कृष्ण)

गृहप्रवेश शुभ मुहूर्त्त में करना चाहिए। मुहूर्त्त का निर्धारण निम्न आधार पर कर सकते हैं।

हम सब जानते हैं कि पूरे वर्ष में दो अयन होते हैं-उत्तरायण व दक्षिणायण। दक्षिणायण (सूर्य मिथुन राशि से धनु राशि तक रहता है वह छह मास) व उत्तरायण (सूर्य मकर राशि से वृषभ राशि तक) का समय होता है।)

इनमें उत्तरायण शुभ है।

मास के अनुसार देखें तो वैशाख, माघ, फाल्गुन मास में गृह-प्रवेश शुभ होता है।

नक्षत्र-

मृदु, ध्रुव संज्ञक एवं पुष्य तथा स्वाति नक्षत्र में गृह-प्रवेश करना चाहिए।

मृदु संज्ञक नक्षत्र- (चित्रा, मृगशिरा, अनुराधा, रेवती)

ध्रुव संज्ञक नक्षत्र- तीनों उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद), रोहणी

इन नक्षत्र में से किसी नक्षत्र में चन्द्रमा हो तो गृहप्रवेश करना शुभ होता है.

तिथि- रिक्ता तिथि (चतुर्थी, नवमी व चौदस) व अमावस्या को छोड़कर गृह-प्रवेश शुभ है।

वार-रविवार, मंगलवार तथा शनिवार को छोड़कर अन्य वार में प्रवेश शुभ है।

वास्तुपूजन इन नक्षत्र में करना चाहिए- चित्रा, शतभिषा, स्वाति, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, रेवती, मूला, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, मृगशिरा तथा अनुराधा।

प्रवेश लग्न में केन्द्र, त्रिकोण में शुभ ग्रह (गुरु या शुक्र) तथा तीसरे, छठवें एवं ग्यारहवें स्थान में पाप ग्रह (सूर्य, मंगल, शनि) बैठे हों तो शुभ होता है।

चन्द्रमा चौथे, आठवें या बारहवें भाव में न हो।

गृह-प्रवेश कब करें-

गृह-प्रवेश गृह का निर्माण पूरा होने पर ही करे। अपूर्ण निर्माण में प्रवेश करने की जल्दी न करे। निर्माण पूरा होने पर विलम्ब से प्रवेश करने पर उसे देवता व भूत आदि गण का निवास होता है।

विधि-

घर में प्रवेश से पहले निर्माण कार्य को पूरा करा लें। जहाँ-जहाँ फर्नीचर आदि

बनवाना हो, उसे बनवाकर ही प्रवेश करें। प्रवेश से पहले गृह उपयोगी सभी सामान को इकट्ठा कर, घर में यथा स्थान रख्र दें। ख़ाली घर में गृह प्रवेश न करें।

गृह-प्रवेश के पहले घर को विभिन्न हार, फूल, माला, झंडी आदि से सजाए। आवश्यकता हो तो टेन्ट आदि की व्यवस्था करें। घर के बाहर या घर के मध्य भाग में पूजन का स्थान बनाए। वहाँ वेदी आदि तैयार करें, सुसज्जित करें।

अपने परिवार के सभी सदस्य, कुटुम्ब के व्यक्ति, इष्ट मित्र आदि सभी को निमन्त्रण दें।

ब्राह्मणों, पुरोहित को बुलाकर विधि विधान से वास्तु पूजन करें।

विधि विधान से सभी देवता के लिए हवन करें। विशेष रूप गणपति, नवग्रह, षोडश मातृका, क्षेत्रपाल, दिक्पाल, वास्तुपुरुष के अंग पर स्थित ब्रह्मा आदि सभी ४५ देवता आदि को हवन से संतृप्त करें।

सबसे पहले अज (ब्रह्मा) को बलि निवेदित करें, उनको उनका हिस्सा दें (सन्तुष्ट करें), उसके बाद स्वयंभू के चारों दिशाओं में स्थित चार मुखों को बलि दें।

अर्हक को पुष्प, सुगन्ध, धूप आदि की बलि दें।

पूर्व दिशा में इन्द्र, आग्नेय में अग्नि, दक्षिण में यम, नैऋत्य में बन्धुवर्ग सहित पितृ को तथा पश्चिम में वरुण को बलि दें। वायव्य में अनिल को बन्धु सहित बलि दें। पूर्वोत्तर दिशा में शिव को उसके बन्धु सहित बलि दें। इस प्रकार दिशा व विदिशा में बलि दें।

ईश के बाहर चरकी, अग्नि के बाहर विदारिका, पितृ के बाहर पूतना तथा मारुत के बाहर पापराक्षसी को भोजन बलि दें।

स्तम्भ में वन तथा तृण को, दिन में चलने वाले को दिशाओं में तथा निशाचरों को विदिशाओं में बलि दें। उरग (सर्प) को भूमि पर बिखेर कर तथा धर्म व अखिलदेवता (विश्वेदेवा) को हवा में बिखेर कर बलि दें।

द्वार के बाई ओर मनु व अन्य को तथा अन्त में श्री शयन पर बलि दें।

भवन में शाला, मंडप, सभा व मालिका में मध्य आंगन तथा विमान में मुख मंडप में। ६४ पद विन्यास में बाहरी तथा भीतरी देवताओं का आवाहन कर, उसके पश्चात गन्ध, पुष्प तथा अन्य से अर्चना करें। भात से बलि देने

के बाद जल व धूप दें। यह वास्तु करें। घर में धूप दें। धूप इस प्रकार करें कि बहुत धन व धान्य दें।

धूप देते समय इस प्रकार प्रार्थना करें-

अहो भूत, पिशाच व राक्षस का हरण करें। यह कटि, सर्प, मच्छर, चूहे, मकड़ी व चीटियों का दहन करें।

उसके पश्चात तक्षक के साधन (औजार) को पश्चिम में पात्र का स्पर्श करते हुए धान्य को बिखेरें। उसके बाद सभी को बलि, संग्रह के मध्य से उनके यह कहते हुए दें।

निरोगी, प्रसन्नता, धन, प्रथिता (बढ़ाया हुआ, प्रकाशित, घोषित) यश को फैलाए, बहुत अद्‌भुत, वीर्य से युक्त, सदा निर-उपद्रव कर्म से युक्त, ऐसी भूमि धर्म के अनुसार सदा जीवित रहें।

यह भवन गिरने से बचा रहे, जल के प्रकोप से बचा रहे, हाथी के आघात से रक्षित रहे, पवन के प्रकोप में, अग्नि से, चोरी से, चोर से यह रक्षित रहे। यह मेरे लिए कल्याण कारक हो।

उसके बाद पूरा गृह साफ करें, जमीन पर साफ पानी, अगरु जल, चन्दन जल, कलश का जल, गन्ध से युक्त जल, स्वर्ण व मणि से युक्त जल का छिड़काव करें।

उसके बाद सिद्ध अर्थ के लिए (for prosperity) लाज व शालि को भवन में बिखेरें। उसके बाद आठ प्रकार का धान्य, धन व रत्न सहित घर में सभी ओर रखें।

इस प्रकार गृहपति व गृहिणि मंगल सहित नाम के साथ, जो सुन्दर (सु) बच्चों के सहित है वे अपने घर में जो कि गृह वस्तु से भरा है, जगतपति का चिन्तन करते हुए प्रवेश करें।

घर में प्रसन्नता पूर्वक प्रवेश कर, गृह वस्तु का निरीक्षण कर, दम्पति पलंग पर बैठें।

प्रथम भोजन स्वजन, गुरुजन, मित्र, नौकर आदि के साथ इस प्रकार करे, गृहपति पत्नी सहित गुरु को नमन करे, पुत्र, पौत्र को क्रम से भोजन करवाए। गाय, वृष को भी भोजन दें।

स्वयं भी परिवार सहित भोजन करें।

घर दीप, जल, सफेद वस्त्र से पूर्ण हो, गृहपति सफेद पुष्प, वस्त्र धारण किए सुहृष्ट हो। गृहपति घर में प्रवेश के समय विवाह के समान गृहिणि के हाथ ग्रहण कर प्रवेश करे।(साथ-साथ)

बलि को दिए बिना, भोजन किए बिना, जिस घर में छत पूरी न बनी हो, जिसमें गर्भ विन्यास न किया गया हो, जहाँ ब्राह्मण, स्थपति आदि ने अर्पण न किया हो, जो शयन से रहित हो, यदि ऐसे घर में प्रवेश करे तो विपत्ति होती है। दुष्ट हृदय से प्रवेश करने पर भी विपत्ति होती है।

अतिसन्तुष्ट मन से गृहपति, पुत्र, पत्नी, परिवार व मित्र सहित शुभ वचनों के साथ कानों में सुनाई पड़े प्रवेश करें।

।।इति।।

श्री

सर्वेक्षण

क्रमांक दिनांक

गृहस्वामी का नाम

पता

जन्म तारीख़ समय

स्थान

महादशा-अन्तर्दशा सुधार के उपाय

व्यवसाय अनुभव पहले का अनुभव तथा क्षेत्र

पसंद का रंग

भोजन, सब्जी, पदार्थ, पिक्चर शौक

परिवार के सदस्य संख्या

गृह-आरंभ तारीख़ (भूमिपूजन)

गृहप्रवेश

वास्तुपूजन किया था या नहीं

पूजन ध्यान हवन नियमित रूप से करते हैं या नहीं

प्लाट का आकार या साईड

घर का मुख (दिशा)

आसपास का वातावरण (परिवार, लोकेलिटी, सार्वजनिक स्थल, मंदिर आदि)

इलेक्ट्रिक लाईन आदि

उत्संग/हीनबाहु/प्रत्यक्षाय/पूर्णबाहु

छत जुड़ी या अलग

कम्पाउण्ड वॉल अलग-अलग या एक

द्वार का सामने अवरोध

बाहर से आकर्षक/या नहीं

कम्पाउण्ड वॉल का झुकना/टूटना/फटना आदि दोष

पानी की टंकी या अन्य दोष

मुख्य द्वार पर कील आदि/

झुकाव

रंग

ऐलिवेसन

एक-एक कमरे का विवरण

ड्राईंग रुम-कलर फ्लोरिंग, बैठने की दिशा, आन्तरिक सज्जा, फोटो, आईटम आदि

बेडरुम-कलर, सिरहाना, आन्तरिक सज्जा, पलंग (बाक्सवाला), टी.वी. आदि, प्रायवेसी, रोशनदान, कर्टन, फ्लोरिंग, सन माईका का रंग आदि विशेष

बाथरुम-रोशनदान,

टायलेट-रोशनदान दरवाजा बन्द

स्टडी-रंग, आन्तरिक सज्जा सुविधा

रसोई-खिड़की की ओर चूल्हा, रोशनदान, रंग, व्यवस्थित,

चढ़ाव-क्लाकवाईज, सुरक्षा (टेरेस पर डबल डोर), रेलिंग (बच्चों के लिए सुरक्षित), वेन्टीलेशन,

लोकेलिटी,
किस पद में द्वार
द्वार के सामने अवरोध
भवन का सामने/पीछे/दाएँ/ बाएँ का भाग कैसा दिखता है।
दीवार-दोष-पूर्व, दक्षिण/पश्चिम/उत्तर
दीवार की ऊँचाई-एक समान/...
द्वार के ऊपर तुला/अन्य

श्री

वास्तुशोधन की विधि

नियम-

- वास्तु देखने के पहले घर से प्रसन्न मन व भावातीत ध्यान करके ही जाए।
- घर में जाने पर क्या मन प्रसन्न हुआ, घर के किस भाग में अच्छा नहीं लगा। उस भाग में नेगेटिव ऊर्जा है।
- जब मन अच्छा न हो तब यथा संभव वास्तु करने न जाए।
- जो विचार मन में आए उसे कह दें।
- कोई भी बात कहते समय यह ध्यान रखे कि उन व्यक्तियों की भावनाओं को चोंट न पहुँचे, इस प्रकार उचित शब्दों का चयन कर बात को कहें।

वास्तु सुधार के उपाय-

- कलश स्थापना
- पारा लगाना
- रत्न लगाना
- धातु लगाना
- खनिज लगाना
- मिट्टी लगाना
- गन्ध लगाना
- धान्य लगाना
- चौखट पर अष्टमंगल लगाना

वास्तु दोष का पता लगाना-

- द्वार का सही स्थान पर होना
- मर्म स्थान का शोधन
- क्या शल्य का दोष है?

- क्या जन्म पत्रिका का दोष है?
- क्या सोसाईटी का दोष है?
- क्या इन्फीरिटी काम्प्लेक्स है?
- क्या सुपिरिटी काम्प्लेक्स है?
- क्या आसपास के वातावरण का दोष है?
- भोजन का दोष (अनुपयुक्त भोजन करता है।)
- रंग का दोष (अनुचित रंग का प्रयोग किया)
- आन्तरिक सज्ञा का दोष (दोष पूर्ण आन्तरिक सज्ञा)
- अनुचित लकड़ी का प्रयोग
- बैठने की दिशा ठीक न हो
- सोने की दिशा ठीक न होना
- शयन कक्ष में रोशनदान हो।

अन्य दोष व सुधार के उपाय-

- धन की कठिनाई है तो उत्तर दिशा व आग्नेय कोण देखें?
- स्वास्थ्य की कठिनाई हो तो पूर्व दिशा का ध्यान दे? रोशनदान देखें, घर में शल्य हो सकता है, मानसिक तनाव हो सकता है।
- पति-पत्नि के आपसी सम्बन्ध कैसे है?
- वास्तु शान्ति का सुझाव दे।
- सभी परिस्थिति में भावातीत ध्यान सिखाएं।
- सिद्धि सूत्र न सिखाएं।
- भावातीत ध्यान यदि व्यक्ति उत्सुकता दिखाए, तो उसी के घर पर सिखा दे ।
- सिद्धि सूत्र केवल बहुत ही समर्पित व्यक्ति को अपने घर आने पर ही सिखाएं, इससे उनकी गम्भीरता का पता चलता है।
- घर के किसी सदस्य के कारण सारा परिवार तनाव महसूस करता है?

रंग-

- रंग का ध्यान रखना

- दीवार का रंग
- पर्दे का रंग
- फर्नीचर का रंग
- फ्लोरिंग का रंग
- रसोई में प्लेटफार्म का रंग
- बेडशीट, तकिया के कवर का रंग
- ग्रे रंग उच्चाटन कराता है।
- लाल रंग अधिक होने पर क्रोध, गुस्सा कराता है।
- अशान्ति होने पर सफेद रंग का प्रयोग करे। यदि संभव न हो तो हल्के रंग जैसे क्रीम आदि रंग का प्रयोग करें।
- घर के किस किस भाग में प्रायवेसी अफेक्ट होती है।
- प्लानिंग में प्लाट का सेन्टर निकाल कर उसमें ३२ पद का प्लान लगाकर उचित द्वार का स्थान निकाले। (द्वार अध्याय में शुभ द्वार स्थिति दी हुई है। अशुभ पद में द्वार होने पर शुभ पद में द्वार का सुझाव दें। जब तक दरवाजा शुभ पद में ले जाना संभव न हो तो द्वार पर गर्भविन्यास करें।)
- इसी प्रकार बिल्टअप का सेन्टर निकाल कर द्वार का स्थान निकाले।(द्वार अध्याय में शुभ द्वार स्थिति दी हुई है। अशुभ पद में द्वार होने पर शुभ पद में द्वार का सुझाव दें। जब तक दरवाजा शुभ पद में ले जाना संभव न हो तो द्वार पर गर्भविन्यास करें।)
- मुख्य दरवाजे के सामने कोई रुकावट न हो।
- मुख्य द्वार पर अष्टमंगल लगवाए।
- मुख्य द्वार की प्रतिदिन पूजा करें।
- इस स्थान से घर में ऊर्जा प्रवेश करती है।
- मुख्य द्वार पर रांगोली बनाए।
- मर्म स्थान को निकाले, इन स्थान पर दीवार, कालम न हो। यदि हो तो मर्म स्थान पर गर्भविन्यास करें।
- सोते समय सिरहाना दक्षिण या पूर्व दिशा में हो।

- पढ़ते समय मुख उत्तर या पूर्व दिशा में हो।
- पलंग से काँच में अपना मुख न दिखे।
- टायलेट (शौचालय) मर्म स्थान पर न हो।
- शौचालय ब्रह्म स्थान पर न हो।
- शौचालय का दरवाजा बन्द रखें।
- शौचालय में रोशनदान हो। जो कि साईड की गली में खुलता हो, जिससे बदबू इत्यादि घर में न हो।
- शौचालय में शुद्ध कपड़े आदि न रखें।
- शौचालय अग्नि के पद में न हो। यदि हो तो हटाने का सुझाव दें।
- घर में अटाला न हो। यदि हो तो तुरन्त घर से बाहर करें।
- गृह प्रवेश शुभ समय में करें। विशेष रूप से चतुर्थी, नवमी, चौदस तथा अमावस्या को गृहप्रवेश न करें।
- गृह-प्रवेश के समय वास्तुशान्ति अवश्य करवाए।
- प्रतिवर्ष वास्तुशान्ति या पूजन व हवन अवश्य करें।
- जहाँ तक संभव हो मुख्य द्वार से ही आए व जाए।
- घर में आने वाले नौकर, बाई इत्यादि अन्य द्वार का प्रयोग करें तो ज्यादा अच्छा है, यह केवल ग्राउण्ड फ्लोर (तल मंजिल) पर ही संभव है।
- घर में प्रतिदिन धूप व दीप लगाएँ (जलाएं)।
- अच्छा संगीत सुनें।
- भोजन में यथा संभव खटाई का प्रयोग करें। (यदि डाक्टर ने मना किया हो तो न करें।)
- सूर्योदय से पहले उठे।
- स्नान करें।
- सूर्य नमस्कार करें।
- ध्यान करें।
- घर में पानी का पौछा प्रतिदिन लगवाए।

- घर में चाँदी या सोने के बर्तन में रखे हुए जल का छिड़काव करें।
- घर के मध्य स्थान पर जूते, चप्पल व लोहे का सामान न रखें।
- पूरे घर में उत्साह व जीवन्तता का वातावरण हो।
- अच्छे विचार रखें।
- वास्तुशास्त्र के नियमों के अनुसार घरों में निवास करने से प्रकृति की पोषणकारी शक्ति प्राप्त होती है जिससे उस घर में रहने वाले व्यक्ति उन्नति कर सुखी होते हैं।
- वास्तु के विपरीत निर्मित घर में रहने से रोग, दुःख, निर्धनता व अशान्ति होती है, अतः वास्तु के अनुरूप घर में रहना ही उचित है।
- घर किस प्रकार का हो इसको निम्न बिन्दुओं के आधार पर देखने का प्रयास करेंगेः-
- सभी कमरे हवादार हो।
- सभी कमरों में प्रकाश आता हो, दिन में अन्धेरा महसूस न हो।
- घर में आप ऊर्जावान महसूस करते हों।
- घर में रात्रि में सोने पर नींद पूरी होती हो।
- कार्यो में अनावश्यक रुप से बाधा न आती है।
- घर में रहने के बाद से आप को कोई विशेष हानि न हुई हो।
- घर में अनावश्यक रूप से कलह न होती हो।
- वास्तुदोष व सुधार के उपायः-
- घर की उत्तरी तथा पूर्वी दिशा में अधिक खुला स्थान हो।
- घर में उत्तर दिशा पूर्णतया बन्द होने पर कोई रोशनदान या खिड़की अवश्य बनवाए।
- यदि संभव न हो तो चढ़ाव या अन्य स्थान से प्रकाश व हवा की व्यवस्था की जा सकती है।
- घर की दीवारों तथा फर्नीचर पर काला या ग्रे कलर न हो। यदि हो तो उसे क्रीम या सफेद कलर करवाए।

- घर में प्रतिदिन अगरबत्ती या रुम फ्रेशनर का प्रयोग करे।
- घर की दीवारों में क्रेक, टूट-फूट या प्लास्टर उखड़ा न हो, यदि हो तो तुरन्त ठीक करवाए।
- पूरा घर व्यवस्थित हो, साफ-सुथरा हो, पर्दे व दरी नियमित रूप से धुले हों।
- घर में कोई खण्डित (टूटा-फूटा) सामान न हो।
- पुराना अटाला शुभ नहीं है।
- घर के सभी नल बराबर काम करते हों, लिकेज नहीं हो, यह धन का अपव्यय कराता है।
- दरवाजे सही स्थान पर हो। घर से बाहर निकलते समय बाएं हाथ पर हो। पूर्वी मुखी घर होने पर पूर्व से बाई ओर दरवाजा हो।
- उत्तर मुखी घर होने पर उत्तर से बाई ओर दरवाजा हो। इसी प्रकार दक्षिण या पश्चिम मुखी घर होने पर दरवाजा हो।
- घर में दरवाजा सही स्थान पर होना बहुत आवश्यक है क्योंकि इसी स्थान से ऊर्जा घर में प्रवेश करती है। एक तरह से यह घर का मुख (मुंह) है। इसे कलश, श्रीवत्स, लक्ष्मी, स्वस्तिक, लता-पत्र से सजाना चाहिए। इसकी प्रतिदिन चावल तथा जल से पूजा करना चाहिए। मुख्य दरवाजे के सामने रांगोली बनाना चाहिए।
- इसी प्रकार घर का मध्य भाग साफ सुथरा व धनात्मक ऊर्जावान होना चाहिए, वहाँ जूते-चप्पल, जूँठा नहीं रखना चाहिए।
- उत्तर या पूर्व मुखी घर होने पर ईशान कोण पूर्णतया साफ हो, उसमें पानी का स्थान हो या पूजा का स्थान हो, वहाँ टायलेट आदि न हो। यहाँ एक बात जानना अत्यन्त आवश्यक है कि वास्तव में ईशान होता कहाँ है? ईशान कोण उत्तर दिशा से ४५ ° पर होता है इसी प्रकार आग्नेय आदि अन्य कोण भी होते हैं।
- पानी का स्थान उचित न होने पर उसमें (पानी की टंकी में) चाँदी का कछुआ, मगर आदि जीव को रखे।
- सभी दीवार समकोण में होना चाहिए।
- घर में सीलन (नमी), दीमक, चूहे न हो।

- सोते समय सिरहाना पूर्व या दक्षिण दिशा में हो।
- धन की कमी होने पर श्रीसूक्त का पाठ करें। (यह पाठ सावधानी से करें, किसी विद्वान से सीख कर करें, अन्यथा अशुद्ध उच्चारण से अशुभ हो सकता है।)

इस प्रकार से वास्तु के अनुरूप घर बनाकर निवासकर जीवन सुखी बनाए।